ओ३म्

कम लागत
प्राकृतिक कृषि

आचार्य देवव्रत

गाय पर खोज

आस्ट्रेलिया एवं न्यूजीलैन्ड के वैज्ञानिकों ने लंबे अन्तराल तक खोज कर जर्सी एवं होलट्नफ्रिजियन गाय के दूध का नाम ए–1 दिया एवं भारतीय नस्ल की देशी गाय के दूध का नाम ए–2 दिया। वैज्ञानिक परीक्षण के बाद ए–1 दूध को स्वास्थ्य एवं मानव शरीर के लिए हानिकारक पाया गया, जबकि ए–2 दूध को मानव शरीर में रोग निरोधक शक्ति बढ़ाने वाला व स्वास्थ्यवर्धक पाया गया। अतः भारतीय नस्ल की सभी देशी गायों का दूध, गोबर व गोमूत्र अमृत तुल्य है।

- महाभारत के अनुशासन पर्व में गाय के सद्गुण और उपयोगिता के बारे में वर्णन किया गया है –

धारयन्ति प्रजाश्चैव पयसा हविषा तथा।
एतासां तनयाश्चापि कृषियोगमुपासते॥
जनयन्ति च धान्यानि बीजानि विविधानि च।
ततो यज्ञाः प्रवर्तन्ते हव्यं कव्यं च सर्वशः॥
अमृतायतनं चैताः सर्वलोकनमस्कृताः।

(83 / 18–19,51 / 30)

अर्थात् गाय अपने दूध, दही और घी से प्रजा का पालन–पोषण करती है। उसके पुत्र यानि बैल कृषि कार्य करते हैं, भार ढोते हैं और अपने श्रम से अनाज, बीज उत्पन्न करते हैं। उससे ही यज्ञ संपन्न होते हैं। गाय अमृतकलश है और सारा संसार उसके आगे नतमस्तक है।

- ऋग्वेद में कहा गया है–

'गावो विश्वस्य मातरः' अर्थात् गाय विश्व की माता है।

- यजुर्वेद में कहा गया है–

'गोस्तु मात्रा न विद्यते' अर्थात् गाय की उपमा किसी से भी नहीं दी जा सकती है।

SANDEEP KUMAR

समर्पण

उस स्वप्न को, जिसमें आकांक्षा है
भारत के किसान की समृद्धि और खुशहाली की

यह सम्भव है तब

जब किसान की आय हो कम से कम दोगुनी।

कम लागत प्राकृतिक कृषि में

माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के इस स्वप्न को
साकार करने की पूर्ण संभावनाएं विद्यमान हैं।

ओ३म्

कम लागत
प्राकृतिक कृषि

लेखक

आचार्य देवव्रत

राज्यपाल, हिमाचल प्रदेश

शोध एवं तकनीकी सहयोग

पद्मश्री सुभाष पालेकर

प्रख्यात कृषि वैज्ञानिक

प्रकाशकः राजभवन शिमला
(हिमाचल प्रदेश)

पुस्तक प्राप्तिस्थान

❖ स्वामी श्रद्धानन्द योग, प्राकृतिक
एवं आयुर्वेद चिकित्सा संस्थान
गुरुकुल कुरुक्षेत्र, हरियाणा

❖ राजभवन शिमला (हिमाचल प्रदेश)

मुद्रकः
पुष्पक प्रेस प्रा. लि., 203-204,
डी.एस.आई.डी.सी. शेड्स, ओखला
इण्डस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली-110020

मूल्यः 50.00
संस्करणः चतुर्थ
जनवरी, 2019
कुल प्रतियाँ 20,000

विषय सूची

क्र.सं.	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
★	प्राक्कथन	vii
1.	भारतीय कृषि: अवसर एवं चुनौतियां	1
2.	कम लागत प्राकृतिक कृषि से पोषक तत्त्वों की आपूर्ति	16
3.	हरित क्रान्ति के दुष्प्रभाव	30
4.	कम लागत की खेती	38
5.	जीवामृत (जीव अमृत) और इसके निर्माण की विधि	43
6.	जीवामृत का प्रयोग	45
7.	बीजामृत (बीज अमृत)	50
8.	घनजीवामृत	51
9.	फसल सुरक्षा हेतु उपाय	53
10.	प्राकृतिक कृषि के कुछ विशेष पहलू	64
11.	प्राकृतिक कृषि की परिभाषा एवं सिद्धान्त	65
12.	पेड़-पौधों का शरीर अर्थात् पांच महाभूतों का भंडार	70
13.	कार्बन तत्त्व	71
14.	पेड़-पौधों की जड़ों का खाद्य भण्डार: जीवद्रव्य (ह्यूमस)	73
15.	पेड़-पौधों को नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश प्राकृतिक कृषि में कैसे मिलता है?	76

क्र.सं.	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
16.	आच्छादन	80
17.	साथ बोयी जाने वाली फसलों का चुनाव	84
18.	वापसा और वृक्षाकार प्रबंधन	85
19.	सेब की बागवानी कैसे करें	87
20.	सब्जियों की खेती कैसे करें	91
21.	गन्ने का उत्पादन कैसे करें	97
22.	सहजन (सहिजन, मुनगा)	103
23.	शरीफा	106
24.	आँवला	110
25.	केला	116
26.	पपीता	118
27.	अमरूद	123
28.	अनार	128
29.	आम	133
30.	Analytical Report of Gurukul Farm Kurukshetra on Low Budget Natural Farming	146

प्राक्कथन

जन्म देनेवाली माँ और जन्म लेने के बाद माँ एवं सन्तान का भरण-पोषण करने वाली धरती माँ से बढ़कर संसार में भला कौन हो सकता है? अथर्ववेद के भूमि सूक्त में कहा गया है कि **माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः** अर्थात् धरती हमारी माता है और हम उसके पुत्र हैं। अथर्ववेद का यह मंत्र माँ की महिमा से जोड़कर धरती की गरिमा का गान करता है। इस गरिमामयी धरती माता के साथ लोभ और अज्ञानता के कारण मानव का व्यवहार सर्वथा विपरीत हो गया। अधिक उत्पादन के लालच में मानव ने रासायनिक खादों एवं कीटनाशक दवाओं का आँख मूंदकर अधिकाधिक प्रयोग किया और धरती माता को अनेक समस्याओं से ग्रस्त कर दिया। इन रासायनिक खादों एवं कीटनाशक दवाओं के निरन्तर प्रयोग के बावजूद धरती की उत्पादन क्षमता बढ़ी नहीं अपितु निम्न से निम्नतर होती चली गई।

हिमाचल प्रदेश में पिछले लगभग दो वर्षों से लगातार जिस बिन्दु पर मैं ध्यान आकर्षित करता रहा हूं वह कार्य अब व्यावहारिक रूप ले रहा है। प्रदेश के कांगड़ा जिले में स्थापित चौधरी सरवण कुमार कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर में 25 एकड़ भूमि को कम लागत प्राकृतिक कृषि के लिए चिन्हित किया गया है। मैंने हाल ही में इस केंद्र का शिलान्यास किया। हिमाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री जयराम ठाकुर भी इस अवसर पर उपस्थित थे। यह पहला मौका था, जब प्रदेश सरकार के कई मंत्री और विधायक इस अवसर पर उपस्थित हुए, जो प्रदेश सरकार की इस विषय की गंभीरता को दर्शाता है।

रासायनिक कृषि हो या फिर जैविक, हर पद्धति में किसान की जेब से ही पैसा जाता है। बीज की खरीद से लेकर खाद, छिड़काव व अन्य हर कार्य के लिए किसान साहुकार से कर्ज लेता है और यदि फसल पकने पर प्राकृतिक आपदा जैसे आंधी, तूफान, ओले

आ गए तो फसल बर्बाद हो जाती है और बेचारे किसान की मेहनत बेकार चली जाती है। वह कहां से उतारेगा उस कर्ज को, जो उसने साहुकार से लिया है। यदि एक-दो फसल ऐसे ही खराब हो गई तो पंखे से लटकने के सिवाय उसके पास कोई रास्ता नहीं बचता है। यह व्यवस्था आज हम किसानों को दे रहे हैं।

जैविक कृषि, यह शब्द हमारे जेहन में इतनी जगह बना चुका है कि इसके द्वारा हम रसायनयुक्त जैविक कृषि की ही चर्चा करते हैं। जैविक कृषि है क्या? यह भी किसान के लिए, उसकी आर्थिकी के लिए रासायनिक खेती से कम सस्ती नहीं है इसलिए उतनी ही खतरनाक है। हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय (हिसार) और पंजाब कृषि विश्वविद्यालय (लुधियाना) के आंकड़े, जो वहां के कृषि वैज्ञानिकों ने दिए हैं, वे भी इस बात की पुष्टि करते हैं।

भारत के खाद्यान्न की पूर्ति मुख्य रूप से दो फसलें धान व गेहूं करती हैं। भारत में खाद्यान्न की पूर्ति करने में इन फसलों का सबसे बड़ा योगदान है। ये फसलें सबसे अधिक तत्त्व भूमि से खींचती हैं। फसल विशेषज्ञों के मुताबिक धान व गेहूं की फसल पैदा करने के लिए प्रति फसल 60 किलो नाइट्रोजन की जरूरत पड़ती है। वैज्ञानिकों ने शोध किया है कि इसकी पूर्ति के लिए एक फसल को एक एकड़ में 300 क्विंटल गोबर की खाद की जरूरत पड़ती है। चौधरी चरण सिंह कृषि विश्वविद्यालय (हिसार) और पंजाब कृषि विश्वविद्यालय (लुधियाना) की धान की फसलों की सिफारिशों के अनुसार एक टन गोबर की खाद फसल को दो किलो नाइट्रोजन देती है। इस हिसाब से 30 टन गोबर की खाद एक एकड़ को चाहिए। फसल में उस नाइट्रोजन की पूर्ति के लिए 300 क्विंटल के लगभग। अब 300 क्विंटल गोबर की खाद जैविक खेती के द्वारा उतना उत्पादन पूरा कर पाएगी जितना 60 किलो नाइट्रोजन डाल कर किया जाता है। इस लिहाज से 300 क्विंटल गोबर की खाद के लिए कितने पशु चाहिए, कम से कम 20 से 25 पशु। किसान एक एकड़ जमीन के लिए 25 पशु

पालेगा कि अपने परिवार का पेट भरेगा। क्या यह बात व्यावहारिक है? एक एकड़ का किसान यदि 25 पशु पालेगा, 300 क्विंटल खाद तैयार करेगा और फिर खेत में डालेगा, तो पशुओं का पेट भरेगा या घर के सदस्यों का? यह है जैविक खेती का आधार। इसका दूसरा विकल्प भी दिया है कि यदि गोबर की खाद 300 क्विंटल नहीं है तो 150 क्विंटल केंचुए की खाद डालें, वह भी उतना ही कार्य पूरा करेगा। तो अब गोबर या केंचुए की खाद के लिए फिर पशु चाहिए। यह खाद भी काफी लम्बे समय के बाद तैयार होता है। स्पष्ट है कि जैविक खेती का जो कार्यक्रम है, उसके मुताबिक इतना गोबर का खाद डालने के बाद इतनी बड़ी भूमि पर इतने लोगों का पेट हम नहीं भर सकते हैं।

आजकल, जैविक के नाम पर कुछ लोगों ने बड़े-बड़े उद्योग स्थापित कर लिए हैं। ये लोग जैविक खाद बना रहे हैं, कीटनाशक (पेस्टीसाइड) बना रहे हैं, जिनकी कीमत रासायनिक खादों से भी ज्यादा है। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी किसानों की आय दोगुनी करने का संकल्प लिए हुए हैं। देश के किसानों की जितनी चिंता वे कर रहे हैं, क्या उसे इस रास्ते से हासिल किया जा सकता है?

वैज्ञानिक शोधों में पाया गया है कि केंचुए की खाद बनाने वाला विदेशी केंचुआ आईजेनिया फोटिडा अत्यधिक मात्रा में भारी तत्त्व (हैवी मैटल) जैसे - शीशा, पारा, आर्सेनिक, कैडमियम, निक्कल, क्रोमियम आदि अपने शरीर में धारण करता है और उपलब्ध रूप से पौधों को देता है जो भूमि और मानव स्वास्थ्य के लिए अति घातक है। यह केंचुआ मिट्टी नहीं खाता, केवल गोबर व काष्ठ पदार्थ ही खाता है। सोलह डिग्री से नीचे व 28 डिग्री के ऊपर के तापमान पर जीवित नहीं रहता और भूमि में सुराख करके गहरी परतों में नहीं जाता है। इसके विपरीत देशी केंचुआ 0-52 डिग्री तापमान पर कार्य करता रहता है और मौसम व वातावरण की परिस्थितियों के अनुसार जमीन में 15 फीट तक ऊपर-नीचे आता-जाता रहता है तथा नीचे

की परतों से पोषक तत्त्वों को लाकर पौधों की जड़ों को उपलब्ध करा देता है। देशी केंचुआ जब भूमि में सुराख करता है तो सुराखों की दीवारों को अपने अन्दर से निकले वर्मीवास से लीपता हुआ चलता है जिससे लम्बे समय तक ये सुराख जमीन में बने रहते हैं और भूमि में अधिक वर्षा या सूखे की स्थिति में जल व नमी का संचरण करते रहते हैं।

सन् 1921 में एल्बर्ट हावर्ड जिन्हें जैविक खेती का पिता कहा जाता है, ने और उनकी पत्नी ने जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए ब्रिटेन में एक संस्था की स्थापना की। वे दोनों सन् 1930 में भारत में इसका प्रचार करने के लिए आए तो वे यहाँ की प्राकृतिक खेती को देखकर अत्यन्त प्रभावित हुए और वापिस अपने देश जाकर प्राकृतिक खेती का प्रचार करने लगे। सन् 1940 में वैज्ञानिक जे. आई. रोडेल ने एल्बर्ट हावर्ड से प्रभावित होकर अमेरिका में जैविक खेती का अध्ययन करने के लिए रोडेल संस्था की स्थापना की। उन्होंने सन् 1981 में जैविक खेती पर अध्ययन शुरू किया और 30 वर्षों के अध्ययन के बाद पाया कि जैविक खेती में मक्का की फसल पर पहले 5 साल तक पैदावार में कमी आयी लेकिन बाद में जैविक पैदावार रासायनिक पैदावार के बराबर होने लगी। पांच साल सूखे से प्रभावित रहे जिनमें जैविक खेती में रासायनिक खेती से एक-तिहाई पैदावार अधिक हुई। सोयाबीन की फसल में जैविक खेती में रासायनिक खेती के बराबर पैदावार हुई तथा सूखे के दौरान जैविक खेती में रासायनिक खेती से 80-100 प्रतिशत अधिक पैदावार हुई। 22 वर्षों के अध्ययन में स्विट्जरलैंड में भी पाया गया कि जैविक खेती से लगभग 20 प्रतिशत पैदावार में कमी आयी।

रासायनिक खेती में किसान यूरिया लेता है, पैसा उसकी जेब से जाता है, डीएपी लेता है, पैसा उसकी जेब से जाता है, कीटनाशक (पेस्टीसाइड) लेता है तब भी पैसा उसकी जेब से ही जाता है। आज जैविक उत्पाद के जो विकल्प तैयार किए गए हैं वह भी

किसान खरीदेगा तो पैसा उसकी जेब से जायेगा। जैविक कीटनाशक (पेस्टीसाइड) खरीदेगा तो भी पैसा उसकी जेब से ही जायेगा। तो किसान की लूट कहां बंद हुई? पहले किसानों को रासायनिक वाले लूटते थे अब जैविक के नाम पर लूट रहे हैं? किसानों की लूट कहां बंद हुई? इसका विकल्प किसके पास है? इसका विकल्प है, पद्मश्री डॉ. सुभाष पालेकर की विधि में, जिसका प्रचार पिछले कई वर्षों से मैं कर रहा हूं। हमारा शोध हो या फिर विदेश में की गई रिसर्च, जहां भी जैविक कृषि शुरू होगी, पहले 3-5 वर्षों में उत्पादन घटेगा। जबकि हमारे फार्मूले में उत्पादन नहीं घटेगा। न उत्पादन घटेगा और न ही किसानों को बाजार में जाकर जेब खाली करने की जरूरत पड़ेगी। इस पद्धति का नाम है **कम लागत प्राकृतिक कृषि**। कम लागत का मतलब, गांव का पैसा गांव में और शहर का पैसा भी गांव में। किसान को खेती के लिए कोई भी चीज शहर जाकर न खरीदनी पड़े। इससे किसान की लागत कम हो गई तो उसकी आय निश्चित तौर पर बढ़ेगी। यह खेती हम गुरुकुल कुरुक्षेत्र में पिछले आठ साल से 180 एकड़ में कर रहे हैं।

कम लागत खेती में पहले ही वर्ष पैदावार पूरी मिलती है। गुरुकुल कुरुक्षेत्र के कृषि फार्म पर किये गये अध्ययन में पाया गया कि जिन खेतों का जैविक कार्बन 0.30 प्रतिशत था उनमें भी पहले ही वर्ष धान की पी.आर. 114 की पैदावार 25 से 28 क्विंटल प्रति एकड़ रही।

पिछले 5 वर्षों में गुरुकुल कुरुक्षेत्र के फार्म पर धान की असुगन्धित किस्मों में 28 से 32 क्विंटल प्रति एकड़ (40 एकड़ से अधिक में) औसत पैदावार रही। गन्ने की फसल की औसत पैदावार 450 क्विंटल प्रति एकड़ रही। इसी प्रकार दूसरी फसलों में भी कम लागत खेती में उत्तम पैदावार रही। वैज्ञानिक जाँच में यह भी पाया गया कि कम लागत प्राकृतिक खेती से भूमि की उर्वरा शक्ति में उल्लेखनीय सुधार हुआ और 3-4 वर्षों में ही भूमि का जैविक कार्बन

0.80 प्रतिशत तक बढ़ गया। कुछ खेतों में तो जैविक कार्बन का स्तर 1.0 प्रतिशत से भी अधिक हो चुका है।

कृषि के इस मॉडल में बाजार से हम खरीद कर कुछ भी नहीं डालते हैं और पड़ोसी जो उत्पादन करता है, उससे कम नहीं लेते हैं। वर्ष 2022 तक किसान की आय को दोगुना करने की प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी की योजना में हमारी पद्धति बड़ी मजबूती के साथ खड़ी है। लागत तो खत्म हो गई और हमारा उत्पादन भी जहर मुक्त होगा। यही वजह है कि हमारे यहां गेहूं, चावल, दाल, सब्जियों इत्यादि को खरीदने वालों की लाईन लगती है, जिसे गुरुकुल कुरुक्षेत्र में प्रैक्टिकल देखा जा सकता है। अन्यों का गेहूं, जो रासायनिक है, वह बिकता है 1600 रुपये प्रति क्विंटल और हम बेचते हैं 3200 रुपये प्रति क्विंटल। हमारे यहां गेहूं के पैसे लोग एडवांस में ही जमा करवा देते हैं। तो इस प्रकार आय हो गई लगभग तीन गुनी, जिससे अपने आप ही रास्ता बन गया। न हमें रासायनिक खेती चाहिए और न जैविक। हमें चाहिए कम लागत प्राकृतिक कृषि।

कम लागत प्राकृतिक कृषि क्या है? इस पद्धति में हम स्वयं दो प्रकार की खाद तैयार करते हैं। एक का नाम है जीवामृत और दूसरी का नाम है घनजीवामृत। केवल दो ही चीजे हैं, कोई लाग-लपेट नहीं। कई लोग सोचते हैं कि आप तो 180 एकड़ में कृषि करते हो और जिसके पास 1-2 एकड़ है वह बेचारा कैसे करेगा? जबकि यह उसके लिए और भी सरल है। जीवामृत में घटक क्या हैं? इस पद्धति में चाहिए एक देशी गाय। देशी नस्ल की कोई भी भारतीय गाय। डॉ. पालेकर ने लैब में बहुत से टेस्ट करवाये हैं, जिसके अनुसार देशी गाय के एक ग्राम गोबर में 300 से 500 करोड़ जीवाणु पाये जाते हैं, जो जमीन की उर्वरा शक्ति को बढ़ाते हैं और यह जो अंग्रेजी गाय है, जर्सी और हास्टन फिजियन, उनके एक ग्राम गोबर में केवल 70 से 80 लाख जीवाणु पाये जाते हैं। इतना अंतर है हमारी और अंग्रेजी गाय में। देशी गाय जो गाय दूध नहीं देती है उसके गोबर में जीवाणु

और भी बढ़ जाते हैं क्योंकि उसकी जो ताकत दूध देने में लगती थी वह अब जीवाणु बढ़ाने में काम आती है। आपकी जो सबसे बड़ी समस्या है वह है सड़कों पर छोड़ी गाय और कहते हैं गऊ माता की जय हो। न तो दूध पीते हो और न ही पालते हो और कहते हो गऊ माता की जय हो। क्या इससे हो जाएगी जय? गऊ माता की जय, कृषि की यह पद्धति करवायेगी, क्योंकि जब यह लोगों की जरूरत बन जाएगी तो अपने आप गाय खूंटे तक चली जाएगी।

विदेशी षड्यंत्र के कारण भारतीय किसान उनके जाल में ऐसा फंसा कि शस्य उत्पादन को निर्विघ्न बढ़ाने वाली, अमृततुल्य दूध, दही, घी, मक्खन, गोबर, व गोमूत्र प्रदान करने वाली देशी गाय की महत्ता को भूल-सा गया। जहाँ एक ओर वैदिक साहित्य भारतीय गाय के गुणों का गुणगान करते हुए नहीं थकते, वहीं देशी-विदेशी वैज्ञानिक भारतीय देशी गायों पर अनुसन्धान करके नित्यप्रति उनके गुणों को प्रस्तुत करते रहते हैं। ऋग्वेद में गाय को माता की तरह पालन-पोषण करने वाली होने के कारण विश्व की माता कहकर पुकारा है। यजुर्वेद में कहा गया है कि गाय की तुलना किसी से भी नहीं की जा सकती है क्योंकि यह इतने अधिक गुणों से भरी हुई है कि उसकी तुलना हो ही नहीं सकती। महाभारत में गाय को अमृतकलश कहा है और साथ ही साथ यह भी दर्शाया है कि उसके अतुलनीय गुणों के कारण सारा संसार उसके आगे नतमस्तक है।

इस पद्धति में एक देशी गाय से 30 एकड़ भूमि पर कृषि की जा सकती है और जैविक में 30 गाय से एक एकड़ में कृषि की जाएगी। यह अंतर है जैविक और कम लागत प्राकृतिक कृषि में। आप जैविक कृषि करते हैं तो 30 गाय से एक एकड़ की कृषि करते हैं और हमारी पद्धति में एक गाय से 30 एकड़ में खेती होगी। इसके लिए हमें क्या करना है? दो सौ लीटर पानी की क्षमता रखने वाले प्लास्टिक के एक ड्रम में 180 लीटर पानी भर लो। एक देशी गाय एक दिन-रात अर्थात् 24 घण्टे में लगभग 10 किलो गोबर देती

है और 8-10 लीटर गोमूत्र करती है। देशी गाय का गोमूत्र कैसे इकट्ठा किया जाए उसका भी एक सरल तरीका है। गाय के रखने वाले स्थान को सीमेंट से पक्का कर दो और उसमें लाइनिंग डाल दो ताकि पशु न फिसले। आजकल तो पशुओं के लिए रबड़ के गद्दे तक उपलब्ध हैं। फर्श का ढाल एक ओर करके कार्नर को बाल्टी के आकार में पक्का कर दो। जब वह गोमूत्र करेगी तो उसमें अपने आप इकट्ठा होता चला जाएगा। आपको कुछ करने की जरूरत नहीं है। गोबर ठोस है वह कभी भी मिल जाएगा। डेढ़ से दो किलो गुड़ जो किसान स्वयं पैदा करता है, डेढ़ से दो किलो किसी भी दाल का बेसन, यह भी किसान पैदा करता है और अंतिम है इसमें किसी भी बड़े पेड़ के नीचे की एक मुट्ठी मिट्टी और कुछ नहीं। ये पांच चीजें हो गई- गोबर, गोमूत्र, गुड़, बेसन और मिट्टी। इनको इस ड्रम में डाल दो और लकड़ी के डंडे से क्लॉकवाइज यानि घड़ी की सूई की तरह पांच मिनट सुबह और पांच मिनट शाम घुमाएं। इसे छाया में रखना है। चार से छः दिन में आपके एक एकड़ का खाद तैयार। क्या दुनिया में कोई खाद चार दिन में तैयार होती है? जबकि इस पद्धति में कुल चार दिन में खाद तैयार होती है। एक एकड़ का खाद एक दिन के गोबर और गोमूत्र से तैयार होती है। इस प्रकार 30 दिन में 30 एकड़ का खाद तैयार हो गया। एक गाय से हो गई 30 एकड़ में खेती। साल में 12 महीने हैं और 12 महीने में हर एकड़ को 12 बार यह खाद मिलने वाली है, जबकि इतने की जरूरत नहीं है। हमारे ऋषियों ने गाय को गोमाता कहा था क्योंकि इसमें गुण भरे पड़े हैं। यह है जीवामृत।

एक है घनजीवामृत। इस में 100 किलो गाय का गोबर लेते हैं और उसको सुखाकर बारीक कर लेते हैं। इसमें यही फार्मूला, एक दिन-रात का गोमूत्र, गुड़, बेसन और मिट्टी मिलाकर घर के एक कोने में छाया में ढक कर रख देते हैं। यह खाद यूरिया की तरह 6-7 महीने तक कभी भी प्रयोग की जा सकती है। इन दोनों प्रकार

की खाद में कुछ नहीं लगता, ज्यादा मेहनत भी नहीं और किसान की लागत कम है।

इसके अलावा, इस पद्धति से कीटनाशक (पेस्टीसाइड) भी बनता है, जिसमें गोबर व गोमूत्र के अतिरिक्त अलग-अलग तरह के पौधों के पत्ते, तम्बाकू, लहसुन, लाल मिर्ची इत्यादि का उपयोग होता है। इन उत्पादों में मुख्य रूप से नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र, अग्निअस्त्र एवं दशपर्णी अर्क हैं। इन सबके बनाने के लिए अलग-अलग फार्मूले बना रखे हैं जो आगे इस पुस्तक में दिये गये हैं। किसान इन्हें आराम से खेत में छिड़काव कर सकते हैं, जिससे खेती को नष्ट करने वाले शत्रु जीव स्वतः ही आने बंद हो जाएंगे और मित्र कीटों की संख्या बढ़ जाएगी। एक बार की कैमिकल स्प्रे करने से असंख्य मित्र कीट मर जाते हैं। कीट-नियंत्रण का यह काम हमारा नहीं बल्कि प्रकृति की जिम्मेदारी है। प्रकृति ने मित्र जीव बनाये थे जो शत्रु जीव का भोजन अपने आप कर लेते हैं लेकिन आज आकाश में उड़ने वाले असंख्य पक्षी गायब हो गए। ये किसान के मित्र थे, जो कीड़े खाते थे। किसान का सबसे बड़ा मित्र केंचुआ, उसे भी आज की कृषि पद्धति ने मौत के घाट उतार दिया। सब केंचुए मार दिये। इसका प्रमाण है कि एक केंचुआ लाकर उसके ऊपर यूरिया डाल दें, क्या वह बचेगा? नहीं। उसी केंचुए के ऊपर गाय का गोबर डाल दें, उसमें जीवन आ जाएगा। हमने सहयोग करने वाले सभी मित्र जीव मार दिए और रसायनों के उपयोग से मानव को भी गंभीर बीमारियों का शिकार बना दिया। यूरिया व डीएपी से डर कर यह केंचुआ आज भी जमीन में लगभग 20 फीट नीचे समाधि लगाए बैठा है। गाय को जब घर से निकालते हैं तो वह एक स्थान पर गोबर नहीं करती है। वह जिस रास्ते से गुजरती है थोड़ी-थोड़ी दूरी पर गोबर करती जाती है। उस गोबर को तीन-चार दिन के बाद उलट कर देखो, उसके नीचे तीन-चार छेद मिलेंगे। जब गाय ने गोबर किया उस समय धरती में छिद्र नहीं थे। ये मित्र जीव जो यूरिया और डीएपी से डरकर नीचे

धरती में चले गये थे, गाय के गोबर की गंध से ऊपर आकर कार्य करना शुरू करते हैं। यह है कृषि का असली विज्ञान, जिसको हम वर्तमान कृषि के द्वारा नष्ट कर चुके हैं।

जल संचयन प्रणाली (वाटर हारवेस्टिंग सिस्टम) पर आज सरकारें लाखों रुपये खर्च कर रही हैं, जबकि यह कार्य तो केंचुआ करता है। जो खेत प्राकृतिक बन जाएगा, कम लागत का बन जाएगा, उस खेत में डॉ. पालेकर ने शोध किया है कि एक एकड़ में लगभग 7 लाख केंचुए काम करते हैं। भारतीय केंचुए कैसे काम करते हैं? वे जमीन को खोदते जाते हैं और जिस छेद से जाते हैं उससे वापस नहीं आते और दूसरे छेद बनाते हैं। इस प्रकार वे कई छेद बनाते चले जाते हैं। जिस खेत में 7 लाख केंचुए काम करते हों, उस खेत में कितने छिद्र बनेंगे, आप अनुमान नहीं लगा सकते हैं। उन छिद्रों के द्वारा आक्सीजन जमीन को मिलती है और जमीन की ताकत बढ़ती है। हम खेतों के चारों ओर ऊंची मेढ़ बना देते हैं बारिश के पानी को रोकने के लिए। जिस खेत में केंचुए होते हैं बारिश आने पर वहां बुलबुले उठते हैं और सारे खेत का पानी धरती में चला जाता है।

इस वर्ष धान की फसल के वक्त पूरे हरियाणा क्षेत्र में जमकर बारिश हुई। फसल पक चुकी थी और किसानों के खेतों में डेढ़ फुट तक पानी जमा हो गया। गुरुकुल कुरुक्षेत्र के फार्म में भी पानी जमा हो गया। गुरुकुल कुरुक्षेत्र के 150 एकड़ के फार्म में धान की फसल तैयार थी। अगले दिन खेत पर जाकर देखा तो गुरुकुल के फार्म का एक भी पौधा गिरा नहीं जबकि दूसरों के खेतों में एक भी बचा नहीं। रासायनिक खेती करने वालों के सभी पौधे जमीन पर सीधा लेट गए और उनकी फसल बर्बाद हो गई। गुरुकुल कुरुक्षेत्र के फार्म में पानी खड़ा मिला नहीं, क्योंकि केंचुओं के द्वारा बनाये गए छिद्रों से सारा पानी 24 घण्टे में जमीन के नीचे चला गया। रासायनिक खेती के द्वारा हमने इस विज्ञान को खत्म कर दिया। पहले ज्यादा बारिश होती थी और बाढ़ भी कम आती थी। अब क्या

होता है, बारिश तेज आ गई तो बाढ़ आ गई। सारा पानी नदियों में चला जाता है और सूखा पड़ गया तो अकाल पड़ गया। इसके पीछे हमारा ही योगदान है। हमने यूरिया व डीएपी डाल-डालकर जमीन की परत को इतना कठोर कर दिया कि जमीन के पानी पीने के छिद्र ही बंद कर दिए। केंचुए जो सुराख बनाते थे, वे भी खत्म कर दिये। भगवान् का बनाया जल संचयन प्रणाली (हारवेस्टिंग सिस्टम) इतना जबरदस्त था, जितनी बारिश होती थी वह असंख्य छिद्रों से, जिन्हें केंचुए बनाये रखते थे, उनसे धरती मां के पेट में चला जाता था और हमें शुद्ध पेयजल मिलता था। आज से 20 वर्ष पहले हम कहीं भी पानी पी लेते थे, कुछ भी नहीं बिगड़ता था और अब बंद बोतल का इस्तेमाल कर रहे हैं। इतना जहर खेत में पड़ता है। टाइम्स ऑफ इण्डिया नामक अखबार के पहले पन्ने पर हाल ही में एक रिपोर्ट प्रकाशित की गई थी कि महाराष्ट्र में कीटनाशक (पेस्टीसाइड) का छिड़काव कर रहे 40 किसानों की उसकी गंध से मौत हो गई। जिस पेस्टीसाइड की गंध से ही लोग मर गए उसका छिड़काव हम सेबों व अन्य फलों पर कर रहे हैं। सेब में 16 से 17 स्प्रे होते हैं और हम कहते हैं इसे खाकर स्वस्थ हो जाएंगे। ये प्रमाण हमारे सामने हैं। जिसकी गंध से इंसान मर सकता है वह भोजन के साथ अंदर जाएगा तो क्या होगा? इसलिए अब हमको अपनी विचार-धारा को बदलना होगा।

वैज्ञानिकों ने किसी जमाने में इस देश में लोगों को भूखमरी से बचाया था, अब लोगों को अस्वस्थ होने से बचाना होगा। वैज्ञानिक ही किसानों और देश के भाग्य विधाता हैं इसलिए इस दिशा में गंभीरता से आगे आएंगे तो सार्थक परिणाम मिलेंगे और यह बहुत जरूरी भी है।

यह खेती इतनी सरल है कि इससे जमीन की उर्वरा शक्ति बचेगी, जल की खपत 70 प्रतिशत कम हो जाएगी, इससे गोमाता बचेगी, इस खेती से किसान ऋणी होने से बचेगा, इस खेती से पर्यावरण

बचेगा, इस खेती से बीमारी से मरने वाले लोग बचेंगे। इस एक काम से 6 काम सिद्ध होंगे। तो भला इस नेक काम को हम क्यों न अपनायें? यह ईश्वरीय कार्य है, इसलिये हम सबको मिल-जूलकर इसे अपनाना है तथा प्रचारित करना है। कुछ महान् मनीषी इस कार्य में दिन-रात जुटे हुए हैं। उन मनीषियों में कृषि वैज्ञानिक पद्मश्री डॉ. सुभाष पालेकर जी का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जाने योग्य है। इनके अनथक प्रयासों से लाखों किसान इस कम लागत प्राकृतिक खेती को अपनाकर अपनी तथा मानवता की महान् सेवा कर रहे हैं। इस पुस्तक में उन्हीं की पद्धति को आदर्श बनाया गया है। इस पुस्तक के प्रणयन में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष जिन्होंने भी सहयोग किया उन सबको मैं हार्दिक धन्यवाद देता हूँ और अन्त में अथर्ववेद की निम्न ऋचा को प्रस्तुत करते हुए इस प्रकरण को विराम की ओर ले चलता हूँ जिसमें पृथिवी के सन्तुलन का एक मनमोहक चित्र खींचा गया है-

यस्यां समुद्र उत सिन्धुरापो यस्यामन्नं कृष्टयः संबभूवुः।
यस्यामिदं जिन्वति प्राणदेजत् सा नो भूमिः पूर्वपेये दधतु॥

अर्थात् यह पृथिवी समुद्रों, नदियों, झरनों व सरोवरों के जल से सुशोभित है, इस पृथिवी पर कृषि की जाती है, जिससे अन्न उत्पन्न होता है, उस अन्न से संसार के प्राणधारी करोड़ों जीव-जन्तु तृप्ति पाते हैं, वह उत्पादिका भूमि हमें सभी प्रकार के खाद्य एवं पेय पदार्थों से सुसम्पन्न करे।

सबका शुभेच्छु

आचार्य देवव्रत

1. भारतीय कृषि : अवसर एवं चुनौतियां

एक समय ऐसा था जब देश में खाद्यान्न की कमी थी। साठ के दशक में हमें लगभग एक करोड़ टन प्रतिवर्ष अनाज का आयात करना पड़ता था। हमारे पेट खाली थे लेकिन धरती का पेट भरा हुआ था। साठ के दशक के मध्य में हरित क्रांति आई जिसमें धान व गेहूं की बौनी किस्में ईजाद की गईं। इन किस्मों की पैदावार देशी किस्मों से अधिक थी। इन किस्मों के पूर्ण उत्पादन के लिए अधिक सिंचाई व पोषक तत्त्वों का प्रयोग करना पड़ता है। फसलों की अच्छी बढ़ोत्तरी और अधिक पैदावार के लिए 16 पोषक तत्त्वों की आवश्यकता होती है। यदि इन 16 पोषक तत्त्वों में से एक तत्त्व की भी कमी हो जाए तो बाकि 15 तत्त्वों का लाभ फसल को नहीं मिल पाता है।

बौनी किस्मों के आने से रासायनिक खादों का अंधाधुंध प्रयोग होने लगा। जमीन की उर्वरा शक्ति घटती चली गई। इसके साथ-2 बीमारी व कीटों का आक्रमण बढ़ने लगा जिसकी वजह से रासायनिक दवाइयों का अत्यधिक इस्तेमाल होने लगा। भूमि, पानी व वातावरण भी प्रदूषित होने लगे। अधिक रासायनिक खाद व दवाइयों के कारण भूमि में विद्यमान सूक्ष्मजीव, केंचुए इत्यादि की गतिविधि व क्रियाशीलता कम होती चली गई, जिसका दुष्प्रभाव यह हुआ कि भूमि का भौतिक, रासायनिक व जैविक संतुलन बिगड़ गया। भरपूर पैदावार होने से हमारा पेट तो भर गया लेकिन धरती का पेट खाली होता चला गया।

धान-गेहूं फसलचक्र पोषक तत्त्वों के अतिरिक्त भूमिगत जल का भी अत्यधिक दोहन करता है। वैज्ञानिक प्रमाणों के अनुसार एक किलो चावल पैदा करने के लिए 3000-4500 लीटर पानी की

खपत होती है। यही कारण है कि उत्तर-पश्चिमी भारत में, जहां भी यह फसलचक्र अपनाया जा रहा है भूमिगत जलस्तर अतितीव्र गति से गिरता जा रहा है। उदाहरण के तौर पर हरियाणा के कुरुक्षेत्र जिले का भूमिगत जलस्तर जो सन् 1974 में 10.21 मीटर पर था वह सन् 2001 में 18.01 मीटर और 2017 में 36.50 मीटर पर जा चुका है अर्थात् सन् 1974 से 2001 तक 27 वर्षों में औसतन 29 सेंटीमीटर भूमिगत जल (लगभग एक फुट प्रतिवर्ष) नीचे गया, वहीं पर सन् 2001 से 2017 तक 16 वर्षों में जलस्तर के कम होने की गति 1.16 मीटर (लगभग 4 फीट प्रतिवर्ष) रही। यदि भूमिगत जल इसी गति से कम होता रहा तो आने वाले वर्षों में हमारी अगली पीढ़ियों को पीने के लिए पानी का उपलब्ध होना भी कठिन हो जाएगा। भारत में हरित क्रांति के जनक डॉ. एम.एस. स्वामिनाथन ने बहुत पहले चेतावनी दी थी कि यदि पंजाब और हरियाणा में इसी प्रकार धान-गेहूं फसलचक्र चलता रहा तो आने वाली शताब्दी में यह क्षेत्र रेगिस्तान में परिवर्तित हो सकता है।

भूमिगत जलस्तर इतना नीचे चला गया है कि इसकी पूर्त्ति (रीचार्जिंग) होना भी आसान कार्य नहीं है। खेतों की जमीन की ऊपर की सतह अत्यधिक रासायनिक खाद व दवाओं के प्रयोग से तथा धान-गेहूँ फसलों में होने वाली शस्य क्रियाओं के कारण इतनी सख्त हो गई है कि यह अधिक बारिश में भी पानी को अवशोषित नहीं कर पाती है। आवश्यकता से थोड़ी अधिक वर्षा होते ही पानी सतह पर इकट्ठा हो जाता है और बाहर की ओर बहने लगता है जो लगातार वर्षा के कारण बाढ़ में परिवर्तित हो जाता है और फसलों को हानि पहुंचाता है। ऐसी स्थिति में कृषि की लागत लगातार बढ़ती जा रही है। कीड़ों व बीमारियों का प्रकोप बढ़ता जा रहा है और पैदावार भी घटने लगी है। कृषि जोत

योग्य भूमि घटती जा रही है। इसके साथ ही प्रदूषण के कारण वैश्विक जलवायु में परिवर्तन हो रहा है जो नीति निर्धारणकर्ताओं और वैज्ञानिकों के लिए चिंता का विषय बना हुआ है। जलवायु में थोड़ा-सा परिवर्तन, थोड़ा-सा तापमान या बारिश के पैटर्न में परिवर्तन फसलों, पशुओं व मनुष्यों के जीवन को प्रभावित करने लगता है। थोड़ी-सी अधिक बारिश से बाढ़ और थोड़ी-सी कम वर्षा से सूखे की स्थिति दृष्टिगोचर होने लगती है और पृथ्वी पर जीवन अस्त-व्यस्त होने लगता है। इन सबका मूल कारण यदि गहराई से देखा जाए तो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से यह धरती के स्वास्थ्य के साथ जुड़ा हुआ है। धरती का वातावरण यदि गर्म होता है तो जलवायु का तापमान बढ़ने लगता है। जब वनस्पति और पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधनों का दोहन होने लगता है तो वातावरण का संतुलन बिगड़ने लगता है। कहीं बाढ़, कहीं सूखा, कहीं भूचाल और कहीं आंधी-तूफान अस्तित्व में आने लगते हैं।

धान और गेहूं की फसलें देश की खाद्यान्न सुरक्षा के साथ जुड़ी हुई हैं। उत्पादन की दृष्टि से ये दोनों फसलें देश के खाद्यान्न उत्पादन में लगभग तीन-चौथाई योगदान करती हैं। वर्ष 2016-17 में कुल खाद्यान्न उत्पादन 27.57 करोड़ टन हुआ जिसमें से धान (11.01 करोड़ टन) व गेहूँ (9.84 करोड़ टन) फसलों से कुल 20.85 करोड़ टन उत्पादन हुआ जो कुल खाद्यान्न उत्पादन का 75.6 प्रतिशत है। उत्तर-पश्चिम भारत में किए गए विभिन्न अनुसंधानों में पाया गया है कि धान-गेहूं फसलचक्र में साधारणतया 600-750 किलो प्रति हैक्टेयर पोषक तत्त्व प्रतिवर्ष अवशोषित किए जाते हैं जबकि जो पोषक तत्त्व (एन.पी.के) दोनों फसलों में डाले जाते हैं उनकी मात्रा 400-450 किलो प्रति हैक्टेयर है। जितने पोषक तत्त्व खेत में डाले जाते हैं वे अधिक से अधिक 50

प्रतिशत तक ही फसल ले पाती है, बाकि के पोषक तत्त्व या तो नष्ट हो जाते हैं या उनका कुछ अंश भूमि में छूट जाता है, अत: जो पोषक तत्त्व हम फसल में डालते हैं और जो फसल अवशोषित करती है उसमें बहुत बड़ा अन्तर है। यह अंतर भिन्न-भिन्न पोषक तत्त्वों के लिए भिन्न-2 हो सकता है। विभिन्न शोधों में यह भी पाया गया कि धान-गेहूं फसलचक्र में दूसरे फसलचक्रों से अधिक पोषक तत्त्व अवशोषित होते हैं। स्पष्ट है कि धान-गेहूँ फसलचक्र उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का दोहन दूसरे फसल-चक्रों से अधिक मात्रा में करता है।

सबसे कठिन प्रश्न जो वैज्ञानिकों और किसानों के सामने है वह यह है कि क्या धान-गेहूँ जैसी फसलों में भी कम लागत प्राकृतिक खेती संभव हो सकती है क्योंकि इन दोनों फसलों के साथ देश की खाद्यान्न सुरक्षा जुड़ी हुई है और इन दोनों फसलों की पैदावार अधिक होने के कारण इनमें अधिक मात्रा में पोषक तत्त्वों की आवश्यकता होती है। क्या कम लागत प्राकृतिक खेती इतनी प्रभावी हो सकती है कि यह धान, गेहूं व गन्ना जैसी अधिक दोहन करने वाली फसलों के पोषक तत्त्वों की आवश्यकता को पूरा कर सके?

यदि गुरुकुल कुरुक्षेत्र के कृषि फार्म पर की जा रही कम लागत प्राकृतिक खेती से होने वाली फसलों की पैदावार को देखा जाए तो कहा जा सकता है कि प्राकृतिक खेती का यह मॉडल अधिक पैदावार देने वाली फसलों में भी अत्यंत प्रभावी है। पिछले दस वर्षों में न केवल फसलों की उत्पादकता में वृद्धि हुई है बल्कि खाद व दवाओं पर होने वाली लागत भी समाप्त हो गई है। इसके साथ-2 भूमि की उर्वरा शक्ति व जैविक कार्बन में वृद्धि हुई है। जमीन की भौतिक दशा में सुधार आने के कारण इसमें अधिक

जुताई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। खेत में यदि फसल की बिजाई चूर (बैड्स) पर करनी हो तो मात्र दो जुताई के बाद खेत बैड्स बनाने के लिए तैयार हो जाता है जबकि दूसरे खेतों में जहां रासायनिक विधि से खेती की जाती है, बैड्स बनाने के लिए 5–6 बार खेत की जुताई की जाती है और फिर भी उचित गुणवत्ता की बैड्स तैयार नहीं हो पाती हैं जिसके कारण फसल के जमाव, बढ़वार व पैदावार पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

कम लागत प्राकृतिक खेती में पानी की भी बचत होती है। जमीन में पानी को सोखने की क्षमता बढ़ती है। यदि वर्षा कम हो तो लम्बे समय तक जल की उपलब्धता बनी रहती है। जल, नमी, तापमान व मौसम की दूसरी विविधताओं में भूमि के केचुएं भी कार्य करने के स्थान में परिवर्तन करते रहते हैं। ऊपर की सतह में अधिक नमी अथवा अधिक या बहुत कम तापमान होने पर जमीन की गहराई में जाकर अपना कार्य करते हैं और 20 फुट तक भूमि में सुराख करते हुए खेत को नीचे की परतों में भी उपजाऊ बना देते हैं। ऐसे खेतों में अधिक वर्षा होने पर जब पानी भर जाता है तो उसमें बुलबुले आते हुए दिखाई देते हैं लेकिन यह तभी होता है जब प्राकृतिक खेती के अन्तर्गत जमीन का अच्छी तरह से विकास हो जाता है, इसलिए गिरते भूमिगत जलस्तर को सुधारने के लिए प्राकृतिक खेती का महत्त्वपूर्ण योगदान हो सकता है।

जब सूखा पड़ता है तो खेतों में पानी की कमी हो जाती है, ऐसे समय में केचुएं जमीन की ऊपरी सतह पर कार्य करते हैं और फसल की जड़ों के पास रहकर पौधों के लिए स्वस्थ वातावरण का निर्माण करते हैं। ऐसे खेतों में अधिक केंचुए व सूक्ष्मजीवी होने के कारण जमीन के रोम छिद्रों की मात्रा बढ़ जाती है। इन रोम छिद्रों

में सूखा पड़ने के समय जल वाष्प के रूप में विद्यमान रहता है और पौधों की जड़ों को लम्बे समय तक पानी उपलब्ध रहता है। जमीन की पानी को सोखने की क्षमता बढ़ने के कारण भी लम्बे समय तक पौधों को पानी की उपलब्धता बनी रहती है।

भविष्य के खतरों को देखते हुए भी कम लागत प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने की आवश्यकता है। वैज्ञानिक तथ्यों व भविष्यवाणियों के अनुसार पृथ्वी के वायुमंडल का संतुलन खतरनाक तरीके से बिगड़ता जा रहा है। वैज्ञानिक अनुमान के अनुसार पिछली शताब्दी में 0.85 सेल्सियस वायुमंडल के तापमान में वृद्धि हुई है और इस शताब्दी के अंत तक इसमें 1.8 से 4.0 सेल्सियस बढ़ने की संभावना है। इस शताब्दी के अंत तक समुद्र के जल का स्तर भी 28 से 43 से.मी. बढ़ने की संभावना है। कार्बन डाईआक्साईड का स्तर जो औद्योगिक क्रांति (सन् 1750) से पहले 280 पी.पी.एम. था अब वह औसतन 384 पी.पी.एम. है और बड़े-2 शहरों के ऊपर तो इसकी गहनता बहुत अधिक हो जाती है। इसी प्रकार वायुमंडल को गर्म करने वाली दूसरी गैसें जैसे मिथेन, नाइट्रस ऑक्साइड और सी.एफ.सी-12 की मात्रा भी लगातार बढ़ती जा रही है। फसल अवशेषों के जलाने से स्थिति और भी गंभीर हो रही है।

वैश्विक वायुमंडल में गैसों का यह बढ़ता हुआ स्तर आने वाले समय में अनपेक्षित व गंभीर बदलाव ला सकता है। पृथ्वी और वायुमंडल का तापमान बढ़ने से वैज्ञानिक अनुमानों के अनुसार विकसित देशों की तुलना में अविकसित तथा विकासशील देशों पर अधिक प्रभाव पड़ेगा। भारत जैसा देश जो विकास की दौड़ में अग्रणी है इसके प्रभाव से अछूता नहीं रह सकता। वैज्ञानिक शोध के अनुसार फरवरी तथा मार्च के महीने में यदि 1 डिग्री सेल्सियस तापमान बढ़ता है तो देश में लगभग 75-100 लाख टन गेहूँ का

उत्पादन घट सकता है। वायुमंडल का तापमान बढ़ने से अधिक वर्षा होने की संभावना है जिससे बाढ़ का खतरा अधिक होगा। इसके साथ-2 होने वाली वर्षा के बीच का अन्तराल बढ़ने से व अधिक तापमान होने से खेतों की नमी का ह्रास तीव्रता से होगा, इसलिए सूखा पड़ने की संभावना भी अधिक होगी जिससे फसलों की पैदावार घट सकती है।

भारतीय कृषि विशेषकर उत्तर-पश्चिमी भारत में जहां आवश्यकता से अधिक रासायनिक खाद व दवाओं का प्रयोग होता है वहां बाढ़ व सूखे से होने वाले नुकसान का प्रभाव अधिक हो सकता है क्योंकि इन क्षेत्रों की जमीनें लगातार अत्यधिक प्राकृतिक संसाधनों के दोहन का शिकार हो रही हैं। थोड़ी-सी अधिक वर्षा होने के साथ ही बाढ़ के हालात बन जाते हैं और सूखे की स्थिति में ट्यूबवेल पानी छोड़ने लगते हैं। स्पष्ट है कि हम अत्यधिक भयावह स्थिति की तरफ बढ़ रहे हैं क्योंकि ये ही वे क्षेत्र हैं जो पूरे देश की खाद्य सुरक्षा में अहम् योगदान देते हैं, अत: इस क्षेत्र में कम लागत प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देना देश और किसानों के हित के लिए और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है।

प्राकृतिक खेती का सबसे पहला सिद्धांत ही यह है कि पौधों का नहीं अपितु जमीन का स्वास्थ्य मजबूत करो। जमीन के स्वस्थ होते ही पौधा स्वयं ही स्वस्थ हो जाता है। यदि जमीन का स्वास्थ्य मजबूत है तो पौधा मौसम एवं वायुमंडल की विविधताओं के साथ लड़ने में सक्षम हो जाता है, अत: भविष्य की वायुमंडल की संभावित विषम परिस्थितियों से यदि भारतीय कृषि को बचाकर आगे ले जाना है तो हमें कम लागत प्राकृतिक खेती को अपनाना होगा।

विश्वस्तर पर आज तक लगभग जितने भी प्रयास हुए हैं वे

जैविक खेती पर आधारित हैं कम लागत प्राकृतिक खेती पर नहीं। यही कारण है कि इन प्रयासों की सफलता संदिग्ध रही है। इन सभी प्रयासों में एक बात निकलकर सामने आई है कि जैविक खेती में पहले के 3-5 साल तक फसलों की उत्पादकता कम हो जाती है। वैज्ञानिक शोध बताते हैं कि अधिक पैदावार लेने के लिए हमें रासायनिक व जैविक दोनों पद्धतियों का समन्वित प्रयोग करना चाहिए।

सम्भवत: सबसे पहला और सबसे लम्बे समय तक जैविक खेती पर चलने वाला शोधकार्य अमेरिका की रोडेल संस्था में हुआ। इस संस्था की स्थापना जैविक खेती के प्रभाव को लम्बे समय तक देखने के लिए की गई थी। सन् 1981 में एक प्रयोग आरंभ किया गया जिसमें रासायनिक खादों, फसल चक्र और पशु आधारित खेती पर काम किया गया। तीस वर्ष के शोध कार्य के पश्चात् मुख्य रूप से जैविक खेती पर निम्नलिखित बातें उभर कर सामने आयीं :-

1. जैविक खेती में आरम्भ के 5 वर्षों में मक्का की पैदावार में कमी पाई गई लेकिन बाद में उत्पादन पारम्परिक खेती के बराबर प्राप्त हुआ।
2. सोयाबीन में जैविक खेती में पैदावार में कोई कमी नहीं आई।
3. सूखे के 5 वर्षों में जैविक मक्का में पैदावार की बढ़ोत्तरी पाई गई जो पारम्परिक खेती से 28-34 प्रतिशत अधिक थी।
4. सूखे के 5 वर्षों के दौरान जैविक सोयाबीन में 80-100 प्रतिशत पैदावार अधिक पाई गई अर्थात् पारम्परिक खेती से लगभग दोगुनी पैदावार प्राप्त हुई।
5. वर्षा के पानी को सोखने की क्षमता में 15-20 प्रतिशत वृद्धि हुई।

विश्व में जैविक खेती पर जितने भी शोध कार्य हुए उनमें निम्नलिखित बातें उभर कर आयीं :-

जैविक खेती से फसलों की पैदावार में कमी आती है विशेषकर पहले 3-5 वर्षों में रासायनिक खेती के बराबर पैदावार संभव नहीं है।

1. अधिकतम पैदावार लेने के लिए अकेली जैविक खेती पर्याप्त नहीं है।
2. जैविक खेती में कीट व बीमारियों का नियंत्रण कठिन है।
3. जैविक खेती में खरपतवार नियंत्रण पर अधिक लागत आती है।
4. जैविक खेती से भूमि के भौतिक गुणों में सुधार होता है जिसके कारण खेत की पानी को सोखने की क्षमता बढ़ जाती है।

कम लागत प्राकृतिक खेती पद्मश्री से सम्मानित डॉ. सुभाष पालेकर द्वारा दी गई कृषि पद्धति है जिसमें किसान को नकद पैसे की आवश्यकता नहीं पड़ती। इसमें सारे उत्पाद जो फसल में प्रयोग होते हैं घर पर ही तैयार किए जाते हैं, बाजार से कुछ भी खरीदने की आवश्यकता नहीं होती। यह देशी गाय आधारित कृषि पद्धति है जिसमें एक देशी गाय से 30 एकड़ की खेती की जा सकती है।

अथक परिश्रम व वैज्ञानिक शोध के पश्चात् डॉ. सुभाष पालेकर ने इस कृषि पद्धति का विकास किया है। डॉ. सुभाष पालेकर का कार्यक्षेत्र महाराष्ट्र और दक्षिणी भारत के राज्य रहे लेकिन अब उनकी इस कृषि प्रणाली का विस्तार भारत के दूसरे भागों में भी तेजी से हो रहा है। डॉ. सुभाष पालेकर ने नागपुर में कृषि की स्नातक की डिग्री हासिल करने के बाद सन् 1972 में अपने पिता के साथ खेती आरम्भ की। उनके पिता प्राकृतिक खेती करते थे लेकिन डॉ. पालेकर ने कॉलेज में रासायनिक खेती के बारे में पढ़ा

तो उन्होंने पढ़ाई के बाद अपने फार्म पर रासायनिक खेती पर कार्य करना आरम्भ किया। लगभग 18 साल (1972-1990) तक वे मीडिया में लेख लिखते रहे और खेती भी करते रहे। आध्यात्मिक ग्रंथों के अध्ययन में रुचि होने के कारण उन्हें वेद व उपनिषदों से कुछ ऐसे सूत्र मिले जो उन्हें कम लागत प्राकृतिक खेती की ओर खींचकर ले गए। इस पर उन्होंने वैज्ञानिक शोध आरम्भ किए और कृषि में भी महात्मा गांधी से प्रभावित होकर वे अहिंसा का मार्ग अर्थात् कुदरती खेती करने के तरीकों को आजमाने लगे जिससे भूमि में विद्यमान जीवों की रक्षा हो सके और भूमि का स्वास्थ्य भी बना रहे।

डॉ. सुभाष पालेकर ने देखा कि 1972-85 तक रासायनिक खेती में फसलों की पैदावार बढ़ती रही लेकिन उसके बाद यह घटने लगी। आदिवासियों के साथ काम करते हुए उन्होंने निकटता से जाना कि जंगलों में पौधों को विकास के लिए किसी बाहरी साधन की आवश्यकता नहीं पड़ती। वे स्वत: ही अपने विकास व वृद्धि के साधन प्राकृतिक रूप से प्राप्त कर लेते हैं। सन् 1986-88 तक उन्होंने वनस्पतियों पर शोध किए और उसी प्राकृतिक प्रणाली के अनुभवों को 6 वर्ष (1989-95) तक अपने फार्म पर लागू किया। इन 6 वर्षों के पश्चात् उन्होंने एक नई कृषि पद्धति ईजाद की जिसका नाम रखा-कम लागत प्राकृतिक खेती और पूरे भारत में इस प्रणाली पर कार्यशालाएं की, पुस्तकें लिखी तथा सारे देश में इसका विस्तार किया। डॉ. सुभाष पालेकर आज भी कृषि की इस प्रणाली के प्रचार व प्रसार के लिए पूरी मेहनत व लग्न से कार्यरत हैं। इस दौरान उन्होंने लगभग 30 पुस्तकें इस विषय पर लिखी एवं वितरित की। सन् 2016 में उन्हें इस उत्कृष्ट कार्य के लिए भारत सरकार द्वारा पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया तथा 14 जून

2017 को उन्हें आंध्रप्रदेश सरकार ने इस कृषि प्रणाली को राज्य में विस्तार के लिए सलाहकार नियुक्त किया व कैबिनेट रेंक की सुविधाएं देकर सम्मानित किया।

दस वर्ष पहले गुरुकुल कुरुक्षेत्र में जैविक खेती पर कार्य आरम्भ किया गया। चार वर्ष पहले डॉ. सुभाष पालेकर को गुरुकुल में एक कार्यशाला में आमंत्रित किया गया जिसमें उन्होंने किसानों को कम लागत प्राकृतिक खेती के सूत्र बताए। उन्होंने कहा कि जैविक उत्पादन वर्तमान में की जा रही जैविक खेती के तरीकों से सम्भव नहीं है। बल्कि कम लागत प्राकृतिक खेती से ही जैविक उत्पादन किया जा सकता है। जैविक खेती में भी किसान की लूट बराबर बनी हुई है। रासायनिक खेती में किसान को खाद व दवाइयां खरीदने के लिए पैसा खर्चना पड़ता है। उसी प्रकार अब निजी कंपनियां जैविक उत्पादों के नाम पर किसानों को लूट रही हैं। कम लागत प्राकृतिक खेती कृषि की ऐसी पद्धति है जिसमें किसान को एक पैसे का भी उत्पाद बाजार से नहीं खरीदना पड़ता है। इसके लिए केवल एक देशी गाय की आवश्यकता है। एक गाय के गोबर व गोमूत्र से 30 एकड़ की खेती संभव है। भारत में 74 प्रतिशत किसान ऐसे हैं जो लघु एवं सीमांत किसान हैं। उनके पास जीविका अर्जित करने के साधन बहुत ही सीमित हैं। उन्हें यदा-कदा प्राकृतिक मार भी झेलनी पड़ती है। भूमि एवं खेत में उगने वाले पौधों की उत्पादन क्षमता घटती जा रही है। ऐसे में कीड़ों व बीमारियों का प्रकोप भी बढ़ता जा रहा है। रही-सही कसर खाद व दवाइयाँ बेचने वाली कम्पनियाँ निकाल देती हैं। आने वाले समय में ग्लोबल वार्मिंग की चुनौतियां सामने खड़ी हैं। ऐसी परिस्थितियों में किसान व उसके परिवार का जीवित रहना कठिन है। अब स्वयं किसान को यथास्थिति को समझकर आगे आना होगा

और सभी चुनौतियों का सामना करना होगा। ये सब कम लागत प्राकृतिक खेती के अपनाने से ही संभव है।

मैंने खेती की इस प्राकृतिक पद्धति को भारत में आगे बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प लिया है और लगातार देश के विश्वविद्यालयों में स्वयं जाकर कार्यशालाएं करवा रहा हूं। वैज्ञानिक और किसान लगातार इस संकल्प को पूरा करने की मुहिम में शामिल हो रहे हैं। उनका यह संकल्प एक आंदोलन का रूप लेता जा रहा है। इस मुहिम के अन्तर्गत कहीं भी कोई कार्यक्रम हो मैं अपनी सेवाएं एवं मार्गदर्शन नि:शुल्क प्रदान करता हूं।

गुरुकुल कुरुक्षेत्र में खरीफ 2017 में 140 एकड़ में धान की फसल ली गई। जिसमें से 50 एकड़ में पहले वर्ष प्राकृतिक खेती के अन्तर्गत रोपाई की गई। बाकि के क्षेत्र में गन्ना, सब्जियों व बागवानी की खेती की गई। जिस क्षेत्र में पहले वर्ष 50 एकड़ में धान की रोपाई की गई वह जमीन पिछले 20 साल से ठेके पर किसानों को दी जाती थी। किसानों ने इस जमीन में कभी भी जैविक या गोबर की खाद का प्रयोग नहीं किया। रासायनिक खादों का असंतुलित प्रयोग किया। नाइट्रोजन का प्रयोग अधिक तथा फास्फोरस और पोटाश का प्रयोग नहीं किया। फसल की कटाई कम्बाईन से करने के बाद फसल के अवशेषों में आग लगती रही। इस क्षेत्र में अधिक बारिश होने से पानी भर जाता था और बाढ़ जैसी स्थिति पैदा हो जाती थी जिसमें कई बार फसल नष्ट हो जाती थी। परिणाम यह हुआ कि खेत की उर्वरा शक्ति घटती चली गई। फसल न होने के कारण किसानों ने जमीन को ठेके पर लेने से मना कर दिया। जून 2017 में जब खेतों के रासायनिक गुणों की जांच की गई तो पता चला कि इनका जैविक कार्बन 0.30 से 0.40 प्रतिशत ही था और फास्फोरस का स्तर 5 से 7 किलो प्रति हैक्टेयर था। पोटाश

की मात्रा भी औसत से कम थी। खेतों का पी.एच. मान भी 8.5 के लगभग था।

मेरे मार्गदर्शन में गुरुकुल प्रबंधक समिति ने फैसला किया कि इन खेतों में भी कम लागत प्राकृतिक खेती को आजमाया जाए। इन खेतों में धान की असुंगधित किस्म पी.आर. 114 तथा सुगंधित किस्में सी.एस.आर. 30, एच.बी.सी. 19 और पूसा बासमती 1121 की रोपाई की गई। आरम्भ में रोपाई के बाद फसल की स्थापना व बढ़ोत्तरी धीमी रही लेकिन जैसे ही खेत में जीवामृत और घनजीवामृत डाले गए, फसल का रंग व स्वास्थ्य बदलता चला गया। बासमती किस्मों की इतनी अधिक बढ़ोत्तरी हुई कि उन्हें ऊपर से काटना पड़ा। पी. आर. 114 की पैदावार 25 से 28 क्विंटल प्रति एकड़ रही। दो बार नीमास्त्र डाला गया और फसल में कहीं भी कोई कीड़ा व बीमारी का प्रकोप नहीं रहा। कीड़े व बीमारियों का यही नियंत्रण गन्ना, बैंगन, घीया, मक्का व अमरूद की फसलों में दिखाई देता है। इसका यही अर्थ निकलता है कि प्रथम वर्ष में ही कम लागत प्राकृतिक खेती अत्यंत प्रभावी है। दूसरा यह कि खेती की इस पद्धति में कीड़े व बीमारियों का स्वत: ही कुदरती नियंत्रण है। गुरुकुल फार्म पर धान की हाइब्रिड किस्में भी लगाई गई। पी.आर. 114 व हाइब्रिड किस्में कीड़े व बीमारियों के प्रति बहुत ही संवेदनशील मानी जाती हैं लेकिन इनमें भी अप्रत्याशित रूप से कीड़े व बीमारियों का नियंत्रण हुआ है। नए क्षेत्र में फसल की बढ़वार भी आश्चर्यजनक रही। यह फसल आसपास के किसी भी किसान से कमजोर नहीं थी, अत: इस अनुभव के आधार पर कहा जा सकता है कि कम लागत प्राकृतिक खेती में प्रथम वर्ष से ही धान की उन्नत किस्मों की अधिकतम पैदावार ली जा सकती है।

गुरुकुल फार्म की धान की फसल में वर्ष 2017 में जिन उत्पादों (इन्पुट्स) का प्रयोग किया गया वे जीवामृत, घनजीवामृत व नीमास्त्र हैं। जो फसल प्रथम वर्ष (50 एकड़ में) ली गई उसमें 3 बार जीवामृत, दो बार घनजीवामृत व दो बार नीमास्त्र का प्रयोग किया गया। जो फसल बाकि के 90 एकड़ में ली गई उसमें 2 बार जीवामृत, एक बार घनजीवामृत व 2 बार नीमास्त्र का प्रयोग किया गया। जिस क्षेत्र में प्रथम वर्ष धान की फसल ली गई उसमें असुगंधित किस्मों की औसत पैदावार 25-28 क्विंटल प्रति एकड़ व सुगंधित किस्मों की औसत पैदावार 13-16 क्विंटल प्रति एकड़ रही। धान की असुगंधित किस्मों की यदि पिछले 5 वर्षों की औसत पैदावार देखी जाए, वह 28-32 क्विंटल प्रति एकड़ रही। इसी प्रकार गन्ने व दूसरी फसलों में भी आस-पास के दूसरे किसानों से अधिक पैदावार प्राप्त हुई।

गेहूं की फसल में अधिक पोषक तत्तवों की आवश्यकता होती है और सर्दियों में पोषक तत्तवों की भूमि में गतिशीलता और उपलब्धि भी कम हो जाती है इसलिए जहां भी अधिक पैदावार देने वाली किस्मों की बीजाई की जाती है वहां पर बीजाई से पहले पलेवा देते समय 600 लीटर जीवामृत सिंचाई के साथ दें तथा पलेवा से पहले 200 किलोग्राम घनजीवामृत का प्रयोग करें। इसी प्रकार इतनी ही मात्रा में जीवामृत और घनजीवामृत पहली सिंचाई के समय दें। इसके अतिरिक्त यदि आवश्यकता लगे तो 2-3 बार 10 प्रतिशत जीवामृत का छिड़काव भी करें इससे पैदावार में कमी नहीं आएगी और कम पैदावार देने वाली गेहूं की देशी किस्मों जैसे सी-306 व बंसी आदि में भी आसानी से पोषक तत्तवों की पूर्ति हो जायेगी।

स्पष्ट है कि कम लागत प्राकृतिक खेती में किसान को पहले वर्ष से ही पूरी पैदावार मिलती है। खाद या कीटनाशक दवाओं के

नाम पर कोई भी उत्पाद बाजार से नहीं खरीदना पड़ता। खेत व फसल में मकड़ी, मेंढ़क, मांसाहारी कीट एवं फंगस पैदा हो जाते हैं जो फसल को कीड़ें व बीमारियों के प्रकोप से बचाते हैं। सूखे के समय भी पौधे के पत्ते पानी की कमी को सहन कर पाते हैं। भारी बारिश होने पर भी खेत की जमीन बहुत जल्दी पानी को सोखने में सक्षम हो जाती है। जमीन की भौतिक दशा सुधरने के कारण खेत की तैयारी में आने वाली लागत घट जाती है तथा सिंचाई के पानी की भी बचत होती है।

धान और गेहूं की फसलें बहुत लम्बे समय से लगातार उगाने के कारण जमीन की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक दशा बिगड़ गई है जिससे खेतों में दलहनी व तिलहनी फसलें लेना जोखिम का काम हो गया है लेकिन कम लागत प्राकृतिक खेती करने से भूमि के इन गुणों में सुधार हो जाता है और दलहनी व तिलहनी की फसलें भी शुद्ध या अन्तर्वर्त्तीय फसलों के रूप में सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं।

आचार्य देवव्रत जी, राज्यपाल, हिमाचल प्रदेश के साथ गुरुकुल कुरुक्षेत्र के कम लागत प्राकृतिक कृषि फार्म पर फसलों का अवलोकन करते हुए नौनी कृषि विश्वविद्यालय (शिमला) के वी.सी. डॉ. अशोक सरियाल व अन्य कृषि विशेषज्ञ

2. कम लागत प्राकृतिक कृषि से पोषक तत्त्वों की आपूर्ति

आज प्रकृति का दोहन इस स्तर पर पहुँच चुका है कि मनुष्य के अस्तित्व के ऊपर खतरा मंडराने लगा है। जमीन, पानी, वायु आदि हर प्रकार की प्राकृतिक कृति में प्रदूषण व्याप्त है। धरती के स्वास्थ्य में इतनी विकृति आ गई है कि इसमें पैदा होने वाली वनस्पति एवं अन्न अत्यन्त जहरीले हो गये हैं। वेदों में ऋषियों ने माँ के रूप में धरती माता और गऊ माता को विशेष दर्जा प्रदान किया है जिनके संरक्षण की जिम्मेदारी प्रत्येक मनुष्य के ऊपर है। धरती माँ का स्वास्थ्य गोमाता के संरक्षण के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है। मनुष्य तभी तक जीवित रह पाएगा जब तक धरती का स्वास्थ्य बना रहेगा। इतिहास गवाह है कि धरती का स्वास्थ्य बिगड़ने से अनेक सभ्यताएँ विनाश को प्राप्त हो गईं। आज हम जाने-अनजाने उसी मानवीय प्रलय की तरह अग्रसर हैं।

कम लागत प्राकृतिक कृषि इसी ओर किया गया एक सामूहिक प्रयास है जिसमें पौधों के स्वास्थ्य पर नहीं बल्कि भूमि के स्वास्थ्य पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। पौधा तो स्वत: ही स्वस्थ हो जाता है। यह कृषि पद्धति गाय पर आधारित है जिसमें फसलों के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्त्वों की पूर्ति हो जाती है।

देश के 83 प्रतिशत किसान छोटे व सीमान्त किसान हैं। यही किसान जब ऋण के बोझ तले दब जाते हैं तो आत्महत्या करने के लिए मजबूर हो जाते हैं। इन्हीं किसानों को जैविक कृषि का सुनहरा सपना दिखाया जाता है जो कभी पूरा नहीं हो पाता क्योंकि जैविक कृषि से पूरी पैदावार संभव नहीं है। इसमें प्रयोग होने वाले

उत्पाद भी बहुत महंगे हैं। किसान वहीं खड़ा है लेकिन इनके नाम पर जैविक बाजार में लूट मची हुई है। छोटे व सीमान्त किसान को इसका कतई लाभ नहीं है। इस किसान को यदि उभारना है तो गाय आधारित कम लागत प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देना होगा क्योंकि इसमें किसान को बाजार से कुछ भी खरीदने की आवश्यकता नहीं है।

जब हम कम लागत प्राकृतिक कृषि की बात करते हैं तो देश के वैज्ञानिक दो प्रश्न मुख्य रूप से उठाते हैं - एक यह कि इससे आरम्भ के 2-3 वर्षों में पैदावार कम होगी और दूसरा यह कि फसलों के लिए आवश्यक पोषक तत्त्वों की पूर्ति कैसे होगी? मुझे समस्या इस बात से नहीं है कि वैज्ञानिक प्रश्न करते हैं, यह वैज्ञानिकों का दायित्व है कि वे शंका करें। इस बात की मुझे खुशी होती है। मुझे समस्या इस बात से है कि वैज्ञानिक बगैर इस दिशा में कार्य किये शंका उठाते हैं और शंका के निवारण के लिए आवश्यक अनुसंधान का कार्य नहीं करते हैं। ये वैज्ञानिक जैविक खेती पर किये गये अनुसंधान कार्यों के आधार पर ऐसी शंका निर्धारित करते हैं। हमें यह समझने की आवश्यकता है कि जैविक कृषि व कम लागत प्राकृतिक कृषि में मौलिक रूप से भेद है जो इस पुस्तक के प्राक्कथन व पहले अध्याय में स्पष्ट रूप से समझाया गया है।

कम लागत प्राकृतिक कृषि में पहले ही वर्ष पूरी पैदावार मिलती है। इसका उदाहरण गुरुकुल कुरुक्षेत्र का कृषि फार्म है जहाँ पर 180 एकड़ भूमि पर इस पद्धति से सफलतापूर्वक खेती की जा रही है। दूसरे प्रश्न का उत्तर पद्मश्री से सम्मानित श्री सुभाष पालेकर, जिन्होंने आजीवन इस विषय पर कार्य किया, के द्वारा स्पष्ट तौर पर दिया गया है। उन्होंने लगभग 10 वर्षों तक इस

पद्धति पर सौ से अधिक गहन अनुसंधान किये और बताया कि जीरो बजट प्राकृतिक कृषि में विभिन्न प्रक्रियाओं से प्रति एकड़ 895 किलोग्राम नाइट्रोजन पौधों को उपलब्ध होती है। नाइट्रोजन की यह मात्रा फसल की जरूरत से लगभग 15-20 गुना अधिक है। श्री सुभाष पालेकर के अनुसार इस नाइट्रोजन का स्थिरीकरण मुख्य रूप से अन्तर्वर्तीय फसलें (50 किलो प्रति एकड़), आसमान की बिजली के कड़कने, बादलों की गर्जना, मई-जून के महीनों में वर्षा व पराबैंगनी किरणों के द्वारा (34 किलो), नील-हरित शैवाल, अजोला व अनेबेना के द्वारा (22 किलो), मृत केचुंओं के विघटन से (85 किलो), केचुंओं के मल एवं विष्टा से (123 किलो), एसीटोबैक्टर, डायजोक्रोफिक्स व हर्बेस्पीरिलम के द्वारा (84 किलो), एजोटोबैक्टर (32 किलो), एजोस्पीरीलम (60 किलो), फरेंकिया (33 किलो), बिजरिंकिया (42 किलो), क्लोस्ट्रीडियम पास्ट्च्यूरिनम (26 किलो), एक्टीनोमाइसीट्स (26 किलो), असहजीवी जीवाणु (34 किलो), केपीलरी क्रिया द्वारा पानी में घुलनशील नत्रजन (17 किलो), प्रोटोजोआ (22 किलो), खरपतवारों के विघटन एवं अपघटन से (85 किलो), पिछली दलहनी फसलों के अवशेषों के द्वारा (41 किलो), सूक्ष्म जीवाणुओं के मृत शरीर से (31 किलो) इत्यादि के माध्यम से प्राप्त होता है।

कम लागत प्राकृतिक कृषि पद्धति में केंचुओं की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। श्री पालेकर जी के अनुसार अकेले केंचुओं से 214 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़ (535 किलो प्रति हैक्टर) का भूमि में स्थिरीकरण होता है। इसके अतिरिक्त सह फसलों के रूप में दलहनी फसलें नाइट्रोजन के स्थिरीकरण में मुख्य भूमिका निभाती हैं। भूमि में रहने वाले देशी केंचुए न केवल जमीन में नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करते हैं बल्कि भूमि के भौतिक गुणों

में भी उल्लेखनीय सुधार करते हैं। ये देशी केंचुए देशी गाय के गोबर व गोमूत्र में अविश्वनीय रूप से वृद्धि करते हैं। देशी गाय के गोबर व मूत्र में ऐसे गुण व सुगन्ध विद्यमान हैं जो इन केंचुओं को स्वत: ही आकर्षित करते हैं और इनकी संख्या में चमत्कारिक वृद्धि होती है।

एक आकलन के अनुसार कम लागत प्राकृतिक कृषि से विकसित एक एकड़ भूमि में 8–10 लाख केंचुए दिन-रात मजदूरों की तरह कार्य करते हैं। इसके विपरीत जो केंचुए (आईजेनिया फोटिडा) वर्मी कम्पोस्ट (केंचुए की खाद) तैयार करने में प्रयोग किये जाते हैं उनमें यह गुण नहीं है कि वे भूमि की नीचे की सतहों में जाकर भूमि का पोषण कर सकें, बल्कि ये केंचुए केवल गोबर व दूसरे काष्ठ पदार्थों का ही आहार करते हैं, ये मिट्टी का आहार नहीं करते इसलिए ये केंचुए यदि प्राकृतिक रूप से खेत में छोड़ दिए जाएं तो इनका जीवित रहना भी कठिन है। वैज्ञानिक शोध बताते हैं कि आइजेनिया फोटिडा के मल एवं विष्टा में भारी तत्त्वों (हैवी मैटल) की अत्यधिक मात्र शामिल रहती है। आरम्भ में इन केंचुओं को यूरोप में मैल के ढ़ेरों में हैवी मैटल डिटैक्टर के रूप में प्रयोग किया जाता था। इससे हमें सावधान रहने की आवश्यकता है क्योंकि जैविक कृषि में मुख्य रूप से केंचुए की खाद का प्रयोग होता है।

कम लागत प्राकृतिक कृषि के विभिन्न पहलुओं पर आज हमें मिलकर कार्य करने की आवश्यकता है। इसे देखते हुए हमने गुरुकुल कुरुक्षेत्र के प्राकृतिक कृषि फार्म पर कई बड़े कृषि वैज्ञानिकों, केन्द्र व राज्य के कृषि मंत्रियों सहित कृषि विभाग के अधिकारियों, सांसदों एवं पॉलिसी निर्धारण कर्त्ताओं को पिछले एक वर्ष में आमंत्रित किया और उन्हें वहाँ चल रहे कार्य के बारे में

अवगत कराया है। इतने बड़े स्तर पर 180 एकड़ के फार्म पर इस पद्धति को कामयाब किया है, जो एक आदर्श उदाहरण है।

भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान मोदीपुरम् के साथ मिलकर तथा चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार के सहयोग से गुरुकुल फार्म पर अनुसंधान कार्य चल रहे हैं। इसके तहत गुरुकुल कुरुक्षेत्र के कृषि फार्म की मिट्टी के नमूनों एवं कम लागत प्राकृतिक कृषि में प्रयोग किये जाने वाले प्राकृतिक उत्पादों (इनपुट्स) का रासायनिक विश्लेषण किया गया जिसमें उत्साहवर्धक परिणाम सामने आए।

इस विश्लेषण में एक बात यह सामने आई है कि जिन खेतों में पिछले 4–10 साल से प्राकृतिक कृषि की जा रही है उनकी रासायनिक संरचना बहुत ही अच्छी पायी गई (तालिका 1)। जांच में पाया गया कि ऐसे खेतों में जैविक कार्बन की स्थिति 0.70 – 1.08 प्रतिशत तक अर्थात् पर्याप्त मात्र में पायी गई। दूसरे पोषक तत्त्वों जैसे फास्फोरस, पोटाश एवं सूक्ष्म तत्त्वों (जिंक, लोहा, मैंगनीज व कॉपर) की उपलब्ध मात्रा भी आवश्यक मानकों से काफी बेहतर मिली। इन खेतों में अब जो भी फसलें ली जाती हैं उनमें केवल 2–3 बार ही जीवामृत व 1–2 बार घनजीवामृत की आवश्यकता पड़ती है और भरपूर पैदावार होती है। इसके अतिरिक्त आवश्यकतानुसार कीट व बीमारी प्रबंधन के लिए दूसरे प्राकृतिक उत्पाद (इनपुट्स) प्रयोग किये जाते हैं। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि कीट व बीमारी प्रबंधन के लिए जितने भी उत्पाद प्रयोग किये जाते हैं, उनमें भी पोषक तत्त्वों की मात्रा भरपूर रहती है (तालिका 3)। ये फसल सुरक्षा में प्रयोग होने वाले उत्पाद भी फसल की बढ़वार व पैदावार बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। जो खेत अच्छी तरह से विकसित हो चुके हैं उन खेतों में धान की

असुगंधित या संकर किस्मों की पैदावार 30 क्विंटल प्रति एकड़ से अधिक एवं गन्ने की पैदावार 500 क्विंटल प्रति एकड़ से अधिक ली जा रही है। कहने का तात्पर्य यह है कि 4 वर्ष की प्राकृतिक कृषि के बाद बहुत ही कम प्राकृतिक इनपुट्स डालकर भी भरपूर पैदावार ली जा सकती है।

तालिका 1:- गुरुकुल कुरुक्षेत्र के कृषि फार्म पर मिट्टी के नमूनों की जाँच रिपोर्ट

क्रमांक	जैविक कार्बन (प्रतिशत)	मुख्य तत्त्व (किलो/हैक्टर)			सूक्ष्म तत्त्व (पी.पी.एम)		
		फास्फोरस	पोटाश	जिंक	लोहा	कॉपर	मैंगनीज
1.	1.08	131.9	318.1	2.47	44.29	2.44	17.94
2.	0.93	96.4	273.6	1.14	23.36	1.56	6.06
3.	0.92	100.3	350.6	2.12	37.07	3.37	11.84
4.	0.72	136.0	198.2	1.28	40.42	3.27	12.01
5.	0.70	146.8	294.6	1.88	48.09	2.83	10.11
6.	0.65	165.8	378.6	1.12	16.76	1.13	2.29
7.	0.57	92.7	418.7	0.99	4.50	0.99	2.84
8.	0.56	88.3	253.1	1.00	9.89	1.28	2.49
9.	0.53	106.7	192.6	1.05	13.44	1.02	2.25
10.	0.50	87.4	236.3	2.67	30.42	2.67	8.85
11.	0.48	107.3	238.6	1.03	21.12	1.05	2.37
12.	0.38	61.1	304.6	1.26	9.90	1.40	4.34
13.	0.33	76.0	416.6	1.15	2.90	1.18	3.38

खेतों की जाँच से ज्ञात होता है कि लगभग सभी खेतों में सूक्ष्म तत्त्व (जिंक, लोहा, कॉपर एवं मैंगनीज), पोटाश तथा फास्फोरस तत्त्व पर्याप्त मात्र में मौजूद हैं। फास्फोरस का स्तर आवश्यकता

से काफी अधिक है। फास्फोरस तत्त्व पौधों की जड़ों के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है तथा तने को मजबूती प्रदान करता है।

जिन खेतों में पहले वर्ष ही कम बजट प्राकृतिक कृषि लागू की गई, उन खेतों का जैविक कार्बन बहुत ही कम (0.30–0.40 प्रतिशत) था। जब इन खेतों में धान की फसल लगाई गई तो उसकी बढ़वार चिन्तनीय थी लेकिन जैसे ही जीवामृत, घनजीवामृत और जिंक की खुराक दी गई, वह फसल भी अच्छी तरह से बढ़वार करने लगी और खेत में केंचुओं की संख्या बढ़ने लगी। मेंढ़क व मकड़ी जैसे मित्र जीवों की संख्या में ईजाफा हुआ। इन खेतों में 3–4 बार जीवामृत और 3 बार घनजीवामृत का प्रयोग किया गया। इसके अतिरिक्त आवश्यकतानुसार खट्टी लस्सी और नीमास्त्र का प्रयोग कीट एवं बीमारियों के प्रबंधन के लिए किया गया। इन खेतों में पहले ही वर्ष धान की असुगंधित किस्म पी. आर. 114 की पैदावार 25–28 क्विंटल प्रति एकड़ रही। आरम्भ के एक दो वर्षों में हमें ऐसे खेतों में गोबर की खाद व ढैंचा की हरी खाद की आवश्यकता पड़ सकती है लेकिन एक बार जब खेत की उर्वरा शक्ति, भौतिक व जैविकी गुणों में सुधार आ जाता है तो बहुत ही कम प्राकृतिक इनपुट्स की आवश्यकता रहती है। खेत में केचुंए, सूक्ष्म जीवाणु व मित्र कीटों की संख्या बढ़ने से पैदावार में नुकसान की संभावना नहीं रहती। प्राकृतिक पद्धति में उगाई गई फसल मौसम की मार एवं जलवायु परिवर्तन जैसे कारणों से आए उतार–चढ़ाव में भी सीना ताने खड़ी रहती है और किसी भी संभावित मौसम के खतरों का सामना करने में सक्षम होती है।

भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, (I.C.A.R.) मोदीपुरम् में किये गये जांच परीक्षणों में यह बात भी सामने आयी है कि

घनजीवामृत में नाइट्रोजन की मात्रा केंचुए की खाद से दोगुना और पोटाश की मात्रा दोगुणा से अधिक पायी गई (तालिका 2)। घनजीवामृत में सूक्ष्म पोषक तत्त्व (जिंक, कॉपर, लोहा) प्रचुर मात्रा में पाए गये। घनजीवामृत की एक एकड़ के लिए एक खुराक लगभग 10–12 दिनों में तैयार हो जाती है जबकि केंचुए की खाद तैयार करने में ढ़ाई से तीन महीने का समय लगता है।

तालिका 2 :- गुरुकुल कुरुक्षेत्र में तैयार किये गये खाद में पोषक तत्त्वों की मात्रा

प्राकृतिक फार्मूलेशन	नाइट्रोजन (प्रतिशत)	फास्फोरस (प्रतिशत)	पोटाश (प्रतिशत)	जिंक (पी.पी.एम.)	कॉपर (पी.पी.एम.)	लोहा (पी.पी.एम.)
केंचुआ खाद	0.49	0.42	1.94	296	47.0	8154
घनजीवामृत	0.99	0.49	4.51	229	45.6	6002

तालिका 3 :- गुरुकुल कुरुक्षेत्र में तैयार किये गये प्राकृतिक फोर्मूलेशन में पोषक तत्त्वों की मात्रा

प्राकृतिक फोर्मूलेशन	नाइट्रोजन (प्रतिशत)	फास्फोरस (पी.पी.एम.)	पोटाश (पी.पी.एम.)	जिंक (पी.पी.एम.)
जीवामृत	0.896	2.98	884	1.38
नीमास्त्र	0.672	2.19	1584	3.88
अग्नि अस्त्र	1.176	0.38	709	1.09
दशपर्णी अर्क	2.184	0.34	602	1.83
खट्टी लस्सी	2.80	25.84	430	2.24
गोमूत्र	1.50	6.79	9000	–
भैंस का मूत्र	0.90	7.96	5130	–
सप्त धान्याकुंर	0.42	3.92	852	–

तालिका 3 में दिये गये आंकड़ों से स्पष्ट है कि जीरो बजट प्राकृतिक कृषि में जितने भी प्राकृतिक उत्पाद इनपुट्स के रूप में प्रयोग किये

जाते हैं, उन सभी में फसल सुरक्षा निश्चित होने के साथ-साथ पोषक तत्त्व भी भरपूर मात्रा में उपलब्ध हैं अर्थात् ये सभी उत्पाद कीट व बीमारी नियंत्रण के साथ-साथ फसल की बढ़वार में भी पोषण प्रदान करते हैं। खट्टी छाछ और गोमूत्र में भी पोषक तत्त्व भरपूर मात्रा में उपलब्ध हैं। खट्टी छाछ और सप्त धान्याकुंर का प्रयोग फसल में बालियां आने के बाद किया जाता है। ये उत्पाद फसल की बीमारियों को नियंत्रित करते हैं तथा बनने वाले दाने को भी ताकत प्रदान करते हैं जिससे पैदावार में ईजाफा होता है।

देशी गाय के मूत्र में भैंस के मूत्र से लगभग दोगुनी मात्रा में नाइट्रोजन पायी गई। गोमूत्र का प्रयोग अकेले छिड़काव के रूप में किया जा सकता है और सभी प्राकृतिक इनपुट्स को तैयार करने में भी इसका उपयोग होता है। स्पष्ट है कि कम लागत प्राकृतिक खेती में जितने भी उत्पाद प्रयोग होते हैं उन सभी में पोषक तत्त्वों के अतिरिक्त फसल सुरक्षा के भी गुण मौजूद हैं।

कम लागत प्राकृतिक खेती में जब भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ती है तो उसका मुख्य कारण जमीन में केंचुओं व सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या का बढ़ना है और इनकी संख्या को बढ़ाने में मुख्य योगदान देशी गाय के गोबर व गोमूत्र का है जो अधिक मात्रा में नहीं चाहिए बल्कि इनसे ऐसे इनपुट्स (उत्पाद) तैयार किये जाते हैं जिनमें गुड़ व दाल का बेसन प्रयोग होता है। गुड़ और दाल का बेसन केंचुए व सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या चमत्कारिक रूप से बढ़ा देता है। उदाहरण के तौर पर जब हम सूक्ष्म जीवाणु का राइजोबियम कल्चर किसी भी दाल के बीज को बिजाई से पहले लगाते हैं तो उसको एक एकड़ के बीज से चिपकाने के लिए 30-50 ग्राम गुड़ के घोल का इस्तेमाल करते हैं। यह बीज जब खेत में डाला जाता है तो फसल की बढ़वार में सार्थक वृद्धि होती

है और इससे कल्चर के जीवाणुओं की संख्या हजारों गुणा बढ़ जाती है। यह एक विज्ञान सम्मत सत्य है।

कम लागत प्राकृतिक कृषि में इसी विज्ञान को बारीकी से समझने की जरूरत है। जीवामृत और घनजीवामृत में देशी गाय के गोबर और गोमूत्र के अतिरिक्त डेढ़-दो किलो गुड़ और इतने ही दाल के बेसन का प्रयोग खेत में कई बार किया जाता है।

मैं यहाँ विज्ञान की बात को ही बड़ी कर देता हूँ। भूमि में दोनों प्रकार के जीवाणु अर्थात् सहजीवी एवं असहजीवी जीवाणु बराबर रूप में कार्य करते रहते हैं। इसके अतिरिक्त नील-हरित शैवाल जैसे अनेक सूक्ष्म जीव भी कार्य करते रहते हैं और प्राकृतिक अवस्थाओं में इनके कार्य करने की क्षमता कई गुणा तक बढ़ जाती है। सूक्ष्म जीवाणुओं के साथ यदि केंचुओं का योगदान जोड़ दिया जाए तो कोई भी फसल आसानी से बेहतर रूप से खेत में उगायी जा सकती है। प्राकृतिक कृषि के ये ऐसे पहलू हैं जिन्हें कभी छुआ ही नहीं गया, इसलिए इनके विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता है।

सवाल उठता है कि आरम्भ के 2-3 वर्षों में पोषक तत्त्वों की भरपाई कैसे की जाए क्योंकि हम देश की जमीनों की उर्वरा शक्ति व उसके भौतिक व जैविकी स्वास्थ्य को बहुत हानि पहुंचा चुके हैं। जमीनें थक चुकी हैं और जहरीली हो चुकी हैं। जमीनों में सूक्ष्म जीवों की कमी के कारण नमक की मात्रा (पी.एच. मान) भी बढ़ती जा रही है। इन जमीनों में अनेकों बार देखा गया है कि पोषक तत्त्वों के होते हुए भी वे फसल को उपलब्ध नहीं हो पाते हैं।

ऐसे खेतों में आरम्भ के 2-3 वर्षों में गोबर की खाद का प्रयोग किया जा सकता है। वैज्ञानिकों की सिफारिश के अनुसार यदि 6

टन गोबर की खाद का प्रयोग किया जाए तो इससे 12-15 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़ प्राप्त होती है। ढैंचा, सनी या दलहनी फसलों की हरी खाद से 25-30 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़ उपलब्ध होती है। यदि धान की बासमती किस्मों की काश्त करनी है तो ढैंचा, मूंग या उड़द की हरी खाद ही सारे पोषक तत्त्वों की पूर्ति कर देती है। धान व गेंहूँ में से किसी एक फसल के अवशेष यदि खेत में वापिस मिला दिए जाएं तो 15-20 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़ उपलब्ध हो जाती है। धान और गेंहूँ की फसलें लगभग 60 किलो नाइट्रोजन प्रति फसल प्रति एकड़ अवशोषित करती हैं और इसका लगभग एक-चौथाई भाग फसल अवशेषों में उपलब्ध रहता है। यदि आरम्भ के एक-दो वर्ष में दोनों फसलों के अवशेष खेत में मिला दिए जाएं तो 35-40 किलो नाइट्रोजन खेत में उपलब्ध हो सकती है। इससे खेत का सुधार होने के साथ-साथ खेत की उर्वरा शक्ति व मिट्टी की जल धारण करने की क्षमता भी बढ़ती है। वर्ष के किसी एक मौसम में दाल की अन्तर्वर्तीय फसल लेने से 25-30 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़ उपलब्ध होती है। फसल या घास के अवशेषों का आच्छादन (मल्चिंग) के रूप में प्रयोग करने से 10 से 15 प्रतिशत नाइट्रोजन की हानि कम हो जाती है तथा ह्यूमस का गर्मी से होने वाला नुकसान रुक जाता है। आच्छादन प्रयोग करने से भूमि में सूक्ष्म जीवाणुओं के अतिरिक्त केंचुओं की गतिविधियाँ एकाएक बढ़ जाती हैं। जीरो बजट प्राकृतिक कृषि का एक सिद्धान्त यह है कि इसमें खरपतवारों को पूरी तरह से खत्म नहीं करना चाहिए। दलहन परिवार से संबंध रखने वाले खरपतवार वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को भूमि में स्थिर करते हैं। प्रति एकड़ प्रति वर्ष 10-15 किलो नाइट्रोजन इनसे भी उपलब्ध हो सकती है। यदि दूसरी तरह के खरपतवार हैं तो इन्हें काटकर वापिस खेत में डालने से फसलों की लाइनों के बीच में आच्छादन के रूप में

इनका प्रयोग किया जा सकता है जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति में भी ईजाफा होता है।

यदि ऊपर दिये उपायों में से कुछ ही उपाय कर लिए जाएं तथा जीवामृत व घनजीवामृत का आवश्यकतानुसार उपयोग किया जाए तो किसी भी अधिक पोषक तत्त्व खींचने वाली फसल की काश्त आरम्भ के 2-3 वर्षों में बिना किसी नुकसान के की जा सकती है। गुरुकुल कुरुक्षेत्र के कृषि फार्म पर यह प्रयोग सफलतापूर्वक किया गया है। यहाँ का अनुभव बताता है कि जिन खेतों का जैविक कार्बन 0.30 प्रतिशत था और पहले वर्ष जीरो बजट खेती की गई, उन खेतों में गोबर की खाद, हरी खाद के प्रयोग के साथ जीवामृत और घनजीवामृत के प्रयोग से धान की पी.आर. किस्म की पैदावार 25-28 क्विंटल प्रति एकड़ ली गई और गेंहूँ के सीजन में गेंहू की बंसी (देशी) किस्म की औसत पैदावार 12.5 क्विंटल प्रति एकड़ बिना किसी रासायनिक खाद व दवाइयों के ली गई। गेहूँ की बंसी किस्म 4000 रूपये प्रति क्विंटल के रेट से बेची गई, फिर भी इसकी मांग पूरी नहीं हो सकी। इस किस्म की पोषक तत्त्वों की आवश्यकता बहुत ही कम (20-25 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़) है।

अब यदि वैज्ञानिक तथ्यों की बात करें तो पोषक तत्त्वों (नाइट्रोजन) की पूर्ति के जो उपाय मैंने यहाँ बताए हैं उसमें अगर मानसून की बारिश, बिजली की गर्जन व आकाशीय किरणों के द्वारा दी जाने वाली 30-35 किलो नाइट्रोजन शामिल कर ली जाए तो कुल नाइट्रोजन की उपलब्धि 150-180 किलो प्रति एकड़ हो जाती है। भारत में सम्भवत: कोई भी फसल ऐसी नहीं है जिसके लिए कोई भी कृषि विश्वविद्यालय एक सीजन में 60 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़ से अधिक की सिफारिश करता हो। बल्कि रबी के

मौसम में गेहूँ की कोई देशी किस्म लें और किसी दलहनी फसल को फसल चक्र या अन्तर्वर्तीय फसल के रूप में शामिल करें तो आवश्यक पोषक तत्त्वों की पूर्ति और भी आसान हो जाती है।

श्री सुभाष पालेकर ने शोध के आधार पर पोषक तत्त्वों की पूर्ति के लिए जो आंकड़े प्रस्तुत किये हैं उन पर हमें ध्यान देने की जरूरत है। यदि केचुंए, सहजीवी और असहजीवी जीवाणुओं तथा दूसरे कारकों का योगदान भी इसमें शामिल कर लिया जाए तो कम लागत प्राकृतिक कृषि में पोषक तत्त्वों की आपूर्ति की शंका का कोई अर्थ नहीं रह जाता है। जब धान व गेहूँ जैसी फसलों में पोषक तत्त्वों की पूर्ति से सम्बंधित आशंका निर्मूल हो जाती है तो देश में उगाई जाने वाली दूसरी फसलों की काश्त इस पद्धति में आसानी से की जा सकती है क्योंकि इन फसलों की पोषक तत्त्वों की आवश्यकता धान व गेहूँ की फसलों से कम या बहुत कम है।

प्रस्तुत अध्याय में यह बताने का प्रयास किया गया है कि कम लागत प्राकृतिक कृषि खेती की एक व्यावहारिक पद्धति है और इसके अपनाने से न केवल छोटा व सीमान्त किसान लाभान्वित होगा बल्कि मध्यम व बड़े किसान भी इसे बिना किसी लागत के सफलतापूर्वक अपना सकते हैं। वैज्ञानिकों से मेरा अनुरोध है कि वे इस पद्धति को जैविक कृषि के साथ जोड़कर न देखें और इसके वैज्ञानिक पक्ष को उजागर करने का प्रयत्न करें। इस अध्याय में स्पष्ट तौर पर यह भी विस्तार से बता दिया गया है कि इस पद्धति से किसी भी फसल के पोषक तत्त्वों की पूर्ति आरम्भ से ही बिना किसी नुकसान के की जा सकती है। श्री सुभाष पालेकर ने भी बहुत ही सरल भाषा में बताया है कि इस पद्धति से 895 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति एकड़ उपलब्ध हो सकती है जिसका

वर्णन इस अध्याय में कर दिया गया है। वैज्ञानिकों का दायित्व है कि श्री सुभाष पालेकर और मेरे द्वारा वर्णन किये गये पहलुओं के वैज्ञानिक पक्ष का निष्पक्ष होकर अध्ययन एवं शोध करें और सच्चाई सत्यापित करें ताकि देश के किसानों को आत्महत्या करने से बचाया जा सके। देश में जहरमुक्त कृषि उत्पादन सुनिश्चित किया जा सके तथा प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण हो सके।

राष्ट्रपति भवन में आयोजित दो दिवसीय 49वें राज्यपाल सम्मेलन में 'कम लागत प्राकृतिक कृषि' विषय पर अपने विचार प्रकट करते हुए हिमाचल प्रदेश के राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी

3. हरित क्रान्ति के दुष्प्रभाव

किसान मित्रों! हरियाली लाने को हरित क्रान्ति कहा गया है। क्या वास्तव में यह हरित क्रान्ति एक लाभदायक क्रान्ति है? क्रान्ति का अर्थ है अहिंसक नव-निर्माण। क्रान्ति का परिणाम विनाश नहीं होता, क्रान्ति तो एक सृजनात्मक क्रिया है। क्रान्ति का उद्देश्य होता है-मानवीय समाज को राक्षसी तत्त्वों के चंगुल से छुड़ाकर दैवीय तत्त्वों की ओर ले जाना।

हरित क्रान्ति हिंसा की रूपान्तरण क्रिया है, नव-निर्माण नहीं। रासायनिक खादें और जहरीले कीटनाशक दवाइयों के प्रयोग से धरती के भीतर रहने वाले करोड़ों जीव-जन्तुओं का विनाश, अनेक प्रकार के पक्षियों का विनाश और कैंसर, शुगर तथा दिल की बीमारियां जैसी अनेक भयानक बीमारियों से मानव का विनाश हो रहा है। पानी और पर्यावरण का विनाश, यह विनाश लीला ही है। हरित क्रान्ति इस क्रान्ति को कैसे कह सकते हैं? जो भूमि पहले पोषक तत्त्व एवं संसाधनों से भरपूर थी, वह हरित क्रान्ति के कारण इतनी बांझ, बंजर और निर उपजाऊ बन गई है कि अब इसमें फसलों की पैदावार बढ़ने की बजाए घटने लगी है। पानी और खाद्यान्न जहरीले बन गये हैं, पर्यावरण का विनाश हो रहा है, पृथ्वी के तापमान में तेजी से वृद्धि हो रही है। ऋतुचक्र व मानसून में अकस्मात् हानिकारक परिवर्तन आ गया है और रेगिस्तान तेजी से बढ़ रहा है। मानवीय रिश्तों में नैतिकता और प्रेम घट रहा है। अमीर और गरीब में अन्तर बढ़ रहा है।

किसान मित्रों! आज मानव का स्वास्थ्य जैसा है, वैसा पहले नहीं था। क्या 50 वर्ष पहले डायबिटीज, हार्ट अटैक, कैंसर जैसी बीमारियों को कोई जानता था? ये बीमारियां आज इतनी तेजी से बढ़

रही हैं कि मानव विनाश की कगार पर खड़ा हुआ है। हरित क्रान्ति के सर्वोत्तम उदाहरण के रूप में पंजाब की चर्चा पूरी दुनिया में हो रही है। वही पंजाब आज सबसे ज्यादा समस्या झेल रहा है। पंजाब व हरियाणा में 45 वर्ष पूर्व जो पैदावार आधा बैग खाद डालकर मिलती थी वह अब 4-5 बैग यूरिया डालकर भी नहीं मिल पा रही है। गांव-गांव में कैंसर भांगड़ा नृत्य कर रहा है। भटिण्डा से बीकानेर जाने वाली एक ट्रेन कैंसर ट्रेन के नाम से पहचानी जा रही है। पंजाब बरबाद हो रहा है। यही हालात हरियाणा व देश के दूसरे राज्यों में हो गया है। क्या कारण हैं? कौन जवाबदेह हैं? विनाशक खादों और विदेशी जहरीली दवाइयों पर आश्रित हरित क्रान्ति का परिणाम केवल विनाश ही है। भूमि, जीव, पानी, पर्यावरण, नैतिकता और मानवीय स्वास्थ्य का विनाश हरित क्रान्ति के अन्तिम परिणाम हैं, तो उसे क्रान्ति कैसे कहा जा सकता है? हरित क्रान्ति, क्रान्ति नहीं यह तो भ्रान्ति है। एक शोषणकारी एवं विनाशकारी विश्वव्यापी षड्यंत्र है। किसानों, शहरों में बसे करोड़ों उपभोक्ताओं, भूमि, जल एवं पर्यावरण का तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था का शोषण, यही हरित क्रान्ति का मापदण्ड है। यही हरित क्रान्ति का घिनौना चेहरा है।

दुनिया में कुछ लोग हैं, जो बिना परिश्रम किये अपनी जमीन-जायदाद बनाकर अमीर बनना चाहते हैं। अपने-आपको जमीन-जायदाद बनाने में सबसे आगे रखना चाहते हैं परन्तु सम्पत्ति पैदा करने का सामर्थ्य तो परमात्मा ने मनुष्य के हाथ में न देकर प्रकृति के हाथों में दिया है। यदि मनुष्य के हाथ में निर्माण है ही नहीं तो वह धन-दौलत कैसे बढ़ाए? वह तो धन-दौलत बढ़ाकर अमीर बनना चाहता है और यह सामर्थ्य उनमें है नहीं, तो वे अपने अमीर बनने का स्वप्न पूरा करने के लिए चोरी करेंगे, लूटमार करेंगे या शोषण करके धन-दौलत इकट्ठी करेंगे। ऐसा ही किया

है इस हरित क्रान्ति ने मनुष्य के साथ। उन लोगों ने सम्पत्ति बढ़ाने का रास्ता शोषण करना चुना है, लेकिन यह शोषण कहां से होगा? स्पष्ट है, वहीं से जहां इसका निर्माण होता है।

निर्माण केवल खेती से होता है। यदि गेहूं या चावल का एक दाना बीजा जाता है, तो उस दाने से हमें हजारों दाने मिलते हैं। निर्माण खेती में होता है और शोषण भी खेती में होता है। कारखानों में शोषण नहीं होता क्योंकि कारखानों में निर्माण नहीं होता केवल रूपान्तरण होता है। कारखाने में यदि 100 कि.ग्रा. कच्चा माल डाला जाता है तो बनने वाला माल 100 कि.ग्रा. का नहीं होता बल्कि 90 या 95 कि.ग्रा. का होता है। वह कम हो जाता है इसलिए कारखानों में शोषण नहीं होता, शोषण केवल खेती और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में ही हो सकता है। इस प्रकार उन्होंने अपना एक गिरोह बनाया जिसका उन्होंने नाम दिया हरित क्रान्ति।

उन्होंने सोचा कि यदि किसानों का शोषण करना है तो किसानों को वस्तु खरीदने हेतु शहर आना चाहिए, क्योंकि जब किसान कुछ खरीदने के लिए शहर आएगा तभी गांव का पैसा या सम्पत्ति शहर आएगी और बाद में शहर से संसाधन निर्माण करने वाली कम्पनियां यानि बहुराष्ट्रीय कम्पनियां शोषणकारी व्यवस्था की ओर आएंगी। हरित क्रान्ति चाहती है कि देहातों में या ग्रामों में गृहस्थी की कोई भी वस्तु या कोई भी संसाधन निर्माण न किया जाए और देहातों से या गांव से हर किसान व मजदूर हर वस्तु खरीदने के लिए शहर आए।

इतना ही नहीं हरित क्रान्ति चाहती है कि देहातों में या गांवों में ग्राम न्याय पंचायत न रहे, न्याय पंचायत के न रहने से न्याय के लिए ग्रामीण हर समय शहरों के चक्कर लगाते रहें और न ही स्वास्थ्य सेवाएं गांव में हों। हरित क्रान्ति का एक उद्देश्य था कि

गांव के किसान या मजदूर अपनी स्वास्थ्य चिकित्सा के लिए शहर आने पर मजबूर हों, इन सब कारणों से बड़ी तेजी से पैसा गांवों से शहरों में जा रहा है।

हरित क्रान्ति के निर्माताओं को जब पता चला कि किसान कुछ खरीदने के लिए शहर आता ही नहीं, वह तो स्वयं संभाले हुए देशी बीजों को बीजता है। देशी गाय का गोबर व मूत्र खाद के रूप में प्रयोग करता है, तो उन निर्माताओं ने सोचा कि यदि एक ऐसा चमत्कारी बीज दिया जाए जिससे किसान उनके लालच में फंस जाए तो वह उस बीज (हाइब्रिड) को ही खरीदेगा और मजबूर होकर ज्यादा पैदावार के लालच में बीज खरीदने के लिए शहर आएगा। यह योजना केवल बीजों तक ही सीमित नहीं थी। वे एक ऐसा ढांचा खड़ा करना चाहते थे कि जिससे किसान बार-बार प्रत्येक चीज का साधन खरीदने के लिए शहर आए।

इस प्रकार किसान रासायनिक खाद, कीटनाशक एवं खेती से संबंधित दूसरे औजारों को खरीदने का गुलाम बन गया। इन सब चीजों को खरीदने, बनवाने और बेचने के लिए किसान शहरी अमीरों पर निर्भर हो गया। ये सब चीजें जहां कभी महंगी मिलती थीं वहीं इनके प्रयोग से धरती बंजर और निर्जीव बन गई। इस प्रकार गांव का पैसा तीव्रता से शहरों की ओर आने लगा।

इन चीजों को खरीदने के लिए किसान के पास इतने पैसे नहीं हैं। वह इनको कैसे खरीदे? पैसे कमाने वालों ने किसानों को पैसे उधार देने का एक ढांचा खड़ा कर दिया। ऋण देने की व्यवस्था भी बना दी गई। इस प्रकार बीज, खाद, दवाई और औजार खरीदने के लिए किसान को शहरों में लाने की व्यवस्था बना दी गई। इस व्यवस्था का नाम ही हरित क्रान्ति है।

हरित क्रान्ति से पहले किसानों और मजदूरों को अपनी रोजी-रोटी कमाने के लिए तथा अपनी पारिवारिक व्यवस्था को चलाने के लिए सभी वस्तुएं और साधन गांव में ही प्राप्त होते थे। गांव में इन जरूरतों को पूरा करने के लिए छोटे-छोटे उद्योग होते थे। कपड़े के लिए जुलाहा, तेल के लिए तेली, लोहे के औजारों के लिए लोहार, लकड़ी के कार्य के लिए बढ़ई, मिट्टी के बर्तनों के लिए कुम्हार, चमड़े के सामानों के लिए चर्मकार, कपडे सीने के लिए दर्जी आदि सारे कार्य संभालने वाले पारंपरिक लोग ग्रामीण थे। इन उद्योगों को चलाने के लिए कच्चा माल भी गांव में ही उपलब्ध था। नमक व लोहे को छोड़कर शहर से कुछ भी मंगवाने की जरूरत नहीं थी। इस प्रकार गांव का पैसा गांव से बाहर नहीं जाता था। उल्टा किसान अपनी पैदावार शहर में बेचकर पैसा गांव में लाता था। उनको मालूम हुआ कि किसान सभी संसाधन जरूर खरीदेगा लेकिन खरीदने के लिए उनके पास पैसा नहीं है तो वह कैसे खरीदेगा? उनको यह भी मालूम हुआ कि किसान उधारी में हाथी भी खरीदता है तो क्यों न उसके लिए उधार की व्यवस्था की जाए, इसलिए उन्होंने कर्ज देने के लिए बैंक, सहकारी कर्ज देने वाली सहकारी संस्थाएं आदि की व्यवस्था की। बस अंगूठा लगाने मात्र से सब साधन कर्ज के रूप में किसानों को उपलब्ध कराने की व्यवस्था खड़ी कर दी गयी। किसानों को बीज, खाद और औजार खरीदने के लिए शहर लाने की और गांव की सारी सम्पत्ति लूटकर विदेशी कंपनियों को देने की तथा उसे विदेश भेजने की सारी कुव्यवस्था निर्मित की गई जिसका नाम है हरित क्रान्ति।

हरित क्रान्ति से पहले हमारे देश में हमारी देशी दुधारू गाय की और खींचने की असीम ताकत रखने वाले बैल की उत्तम नस्लें थीं और आज भी हैं। ये असंख्य देशी गायें हमें जुताई के लिए

बैल, खेती के लिए असंख्य जीवाणुओं का महासागररूपी गोबर और दिव्य औषधिरूपी गोमूत्र देती हैं और साथ में अमृत समान दूध देती हैं। जब इनका उपयोग हमारे खेतों में होता है तो हमारी भूमि सजीव, सुजला, सुफला बन जाती है और तब ऊपर से किसी कृत्रिम खाद डालने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। देशी गाय का दूध तो दिव्य अमृत है जिससे शरीर का पूरा पोषण होता है। यह शरीर को प्रदूषित पानी से होने वाली बीमारियों को भगाकर शरीर को रोगमुक्त करता है। देशी गाय का दूध, गोबर और गोमूत्र के उपयोग से मिलने वाला विषमुक्त खाद्यान्न शरीर में प्रतिरोधी शक्ति पैदा करता है। देशी गाय का दूध-दही प्रतिरोधक शक्ति प्रदान करने वाले जीवाणुओं का मूलाधार है।

हरित क्रान्ति के माध्यम से हमारी संस्कृतिरूपी देशी गाय को निकाल कर उसके स्थान पर विदेशी जर्सी, होलस्टीन नाम के जानवर हमारे किसानों पर थोपे गये। वास्तव में ये जर्सी, होलस्टीन गाय नहीं है। यह अलग कोई काउ पिंग नाम का प्राणी है क्योंकि गाय का एक भी लक्षण इन विदेशी जानवरों में नहीं मिलता। गाय झेबुकुल का प्राणी है। गाय में बॉस इंडिकस जाति के 21 लक्षण होते हैं जिनमें से एक भी लक्षण इन विदेशी जर्सी, होलस्टीन में नहीं है। तब यह गाय कैसे हो सकती है? इन विदेशी संकर जानवरों को जन्तुनाशक दवा हर दिन पिलानी पड़ती है। इस जन्तुनाशक के अवशेष उनके गोबर, मूत्र और दूध में पाये जाते हैं। जब उनका यह गोबर और मूत्र भूमि में जाता है तो ये जन्तुनाशक दवाएं हमारी भूमि के जन्तुओं को नष्ट करती हैं। ह्यूमस के निर्माण को रोकती है। भूमि को बंजर (बांझ) बनाती हैं। यही तो उनका षड्यंत्र है। जब हम इन विदेशी गायों का दूध पीते हैं तो यह जन्तुनाशक और उनका दूध बढ़ाने के लिए इंजेक्शन के रूप में दिये गये हार्मोन्स

हमारे शरीर में पहुंच जाते हैं तो इससे हमारी प्रतिरोधक शक्ति नष्ट हो जाती है। इन जन्तुनाशकों से हमारी आंत में हमें प्रतिरोधक शक्ति देने वाले जीवाणुओं का नाश होता है। परिणामस्वरूप हमें कैंसर, डायबिटीज, हार्ट अटैक, एड्स जैसी जानलेवा बीमारियां होती हैं। हम एलोपैथी ट्रीटमेंट लेने के लिए शहरों की ओर दौड़ते हैं तो गांव का पैसा शहर की ओर भागता है और शहर में सिर्फ कमीशन रहता है। पैसा वहां से विदेश चला जाता है, यही तो वह षड्यन्त्रकारी शोषण व्यवस्था चाहती है।

इस षड्यन्त्रकारी शोषण व्यवस्था के कारण किसान आत्महत्या करने के लिए बाध्य हो जाते हैं। किसानों की आत्महत्या के पीछे मूलतः चार कारण हैं –

पहला कारण, प्रतिवर्ष निरन्तर बढ़ता हुआ हर फसल का लागत मूल्य,

दूसरा, बाजार व्यवस्था,

तीसरा, प्राकृतिक आपदा और

चौथा, कर्ज व्यवस्था

इन सभी कारणों को निरस्त करती है, आध्यात्मिक कृषि की कम लागत खेती। कम लागत खेती में आपको बाजार से कुछ भी खरीदना नहीं है। **'गांव का पैसा गांव में और शहर का पैसा गांव में'** यह हमारा नारा है। शहर के बाजार में बीज, खाद, दवा, ट्रैक्टर, औजार आदि कुछ भी खरीदना नहीं है।

यदि आपके पास एक देशी गाय है तो आप कम लागत कृषि में 30 एकड़ की खेती कर सकते हैं। कुछ भी खरीदना नहीं है तो कर्ज लेने की बात ही कहां आती है? कर्ज नहीं तो आत्महत्या नहीं। जब मंडी में दाम ज्यादा होंगे, तब फसल (उपज) बेचेगा तो

उसे ज्यादा लाभ होगा। लागत का मूल्य शून्य होने पर बेचने वाला दोगुने दाम क्यों करेगा? हमारी कम लागत खेती को अमल में लाने वाला किसान भला आत्महत्या क्यों करेगा?

यदि किसानों को आत्महत्याओं से बचाना है, उसे कर्जमुक्त करना है, उन्हें जमीन रहित होने से बचाना है, उनके बच्चों को दिहाड़ीदार मजदूर बनने से बचाना है तथा रासायनिक खेती के बुरे प्रभावों से समाज को छुटकारा दिलाना है तो याद रखें इसका एक ही रास्ता है **कम लागत प्राकृतिक खेती (कुदरती खेती)**।

गुरुकुल के कृषि फार्म पर गेहूं व चने की मिश्रित फसल में आच्छादन को दर्शाते हुए
गुरुकुल के प्रधान श्री कुलवंत सिंह सैनी जी (दायें) व सह प्राचार्य श्री शमशेर सिंह जी (बायें)

4. कम लागत की प्राकृतिक खेती

किसान बन्धुओं! चाहे कोई भी फसल हो या बागवानी की फसल हो उसका लागत मूल्य कम होगा।

मुख्य फसल का लागत मूल्य अन्तर्वर्ती मिश्र फसलों के उत्पादन से निकाल लेना और मुख्य फसल बोनस के रूप में लेना ही 'कम लागत खेती' कहलाता है।

फसलों को बढ़ाने के लिए और उपज लेने के लिए जिन-जिन संसाधनों की आवश्यकता होती है वे सभी घर में ही उपलब्ध करना, किसी भी हालात में मंडी या बाजार से खरीदकर नहीं लाना और कम लागत खेती को हानि पहुंचाने वाला कोई भी संसाधन घर में या गांव में निर्मित नहीं करना, यही कम लागत खेती है। कम लागत खेती का नारा है **'गांव का पैसा गांव में और शहर का पैसा गांव में।'**

किसान बन्धुओं! इस तरह हमारे देश का पैसा देश में, देश का पैसा विदेश को नहीं बल्कि विदेश का पैसा देश में लाना, यही कम लागत खेती है।

भूमि अन्नपूर्णा है :- किसान मित्रों! हमारी भूमि अन्नपूर्णा है। फसलों को बढ़ने के लिए जो संसाधन चाहिए वह उनकी जड़ों के पास भूमि और पत्तों के पास वातावरण में ही पर्याप्त मात्रा में मौजूद होते हैं, ऊपर से कुछ भी देने की जरूरत नहीं है। हमारी फसलें भूमि से मात्र 1.5 से 2.0 प्रतिशत तत्त्व लेती हैं। शेष 98 प्रतिशत से 98.5 प्रतिशत हवा, सूरज की रोशनी और पानी से लेती हैं। ये कृषि विश्वविद्यालय झूठ कहते हैं कि आपको ऊपर से खाद व रासायनिक खाद डालना ही पड़ेगा। जब हवा-पानी से ही

98 प्रतिशत फसलों का शरीर बनता है तो ऊपर से कोई संसाधन डालने की जरूरत ही कहां पैदा होती है?

कोई भी हरा पत्ता (पौधों का या पेड़ों का) दिनभर प्रकाश संश्लेषण क्रिया से खाद्य निर्माण करता है। यह पत्ता खाद निर्माण करने का कारखाना है।

1. वह हवा से कार्बन डाईआक्साइड तथा नाइट्रोजन लेता है।
2. वह भूमि से जड़ों द्वारा मानसूनी वर्षा का जल अथवा कुएं या तालाब से दिये गये जल को उठाता है।
3. सूर्य की रोशनी लेता है। (Per Soft Per Day 12-5 Kg Calory) लेता है।

इन तीनों चीजों से खाद्य तैयार करता है। कोई भी फसल या पेड़ों का हरा पत्ता दिन में 10 घंटे की धूप के दौरान प्रति वर्ग फुट क्षेत्र के हिसाब से 4.5 ग्राम खुराक तैयार कर लेता है। इन 4.5 ग्राम में से 1.5 ग्राम दाने या 2.25 ग्राम फल या कोई दूसरा प्रयोग में लाने योग्य पौधे का हिस्सा हमें मिल जाता है। खुराक बनाने के लिए जरूरत के अनुसार हवा, पानी और सौर ऊर्जा प्रकृति से लेते हैं, जो बिल्कुल मुफ्त है। शेष बचा 1.5–2.0 प्रतिशत खनिज क्षार, जो जड़ भूमि से लेती है। वह तो मुफ्त में लेती है और उस भूमि से लेती है जो मूलतः अन्नपूर्णा है।

जब यह वास्तविक तथ्य है कि बिना कुछ डाले जंगल में पेड़ों पर प्रतिवर्ष अनगिनत फल लगते हैं तो इसका मतलब हुआ कि उन पेड़ों की जड़ों के पास भूमि में वे सम्पूर्ण तत्त्व पहले से ही मौजूद हैं। यदि ये सम्पूर्ण खाद्य तत्त्व भूमि में उपलब्ध नहीं होते तो पेड़-पौधों को उपलब्ध नहीं होते। आप जंगल के

किसी भी पेड़-पौधे के पत्ते तोड़ें और उनका प्रयोगशाला में परीक्षण करें। आपको उनमें किसी भी खाद्य तत्त्व की कमी नहीं मिलेगी। इसका मतलब है कि तत्त्वों से भूमि परिपूर्ण है। हमने नहीं डाला लेकिन जड़ों को मिल गया, इसका मतलब यह हुआ कि ये तत्त्व भूमि ने दिए। वे सम्पूर्ण खाद्य तत्त्व भूमि में पहले से ही मौजूद थे। भूमि अन्नपूर्णा है, पालनहार है। भूमि में सब तत्त्व मौजूद हैं, ऊपर से कुछ भी डालने की जरूरत नहीं है।

किसान मित्रों! यदि प्राकृतिक तरीके से खेती की जाए तो हमें बाहर से खाद व दवाइयों की जरूरत नहीं पड़ेगी। जंगल में रासायनिक खादों को डालने की जरूरत क्यों नहीं पड़ती? यदि आप जंगल में जाएं या खेत की मेड़ पर देखें तो वहां आपको फलों से लदे हुए आम, बेर, जामुन या इमली के विशालकाय पेड़ खड़े दिखाई देंगे। इन पेड़ों पर बिना मानवीय सहायता के अपने-आप प्रतिवर्ष अकाल में भी अनगिनत फल लगते हैं। जंगल में तो हम कुछ भी नहीं डालते लेकिन पेड़ों को सब कुछ अपने-आप मिलता है। जंगल में जुताई कहां होती है? फिर भी प्रतिवर्ष अनगिनत फल कैसे लगते हैं?

कृषि विशेषज्ञ आपको देशी गोबर की खाद और रासायनिक खाद डालने को कहते हैं। जंगल में खाद कहाँ है तथापि जंगल में बिना खाद प्रतिवर्ष अनगिनत फल कैसे लगते हैं? जंगल के पेड़-पौधे बिना कीटनाशक के अनगिनत फल प्रतिवर्ष देने में कैसे समर्थ होते हैं? जंगल में मानवीय सिंचाई कहां है?

सन् 1924 में डॉ. क्लार्क और डॉ. वाशिंगटन नामक दो भूगर्भ वैज्ञानिक भारत आए। वर्माशेल नामक तेलशोधक कम्पनी ने उन्हें भारत की भूमि में 1000 फुट तक छेद करके तेल की खोज

करने के लिए भेजा था। उन्होंने 1000 फुट तक सुराख किये और हर 6 इंच भूमि की मिट्टी को प्रयोगशाला भेजकर टेस्ट करवाया। उस वैज्ञानिक जांच के परिणाम बताते हैं कि भूमि में आप जितना अन्दर जायेंगे उतनी ही अधिक मात्रा में सभी खनिज तत्त्व मौजूद हैं। गहराई के अन्दर भी भूमि सभी खनिजों से परिपूर्ण है। भूमि अन्नपूर्णा है। भूमि में कोई कमी नहीं है, उसमें ऊपर से डालने की कोई आवश्यकता नहीं है।

भूमि (मिट्टी) परीक्षण :- भूमि परीक्षण से यह अनेक बार देखा गया है कि भूमि में पोषक तत्त्वों की कमी नहीं होती है फिर भी अच्छी पैदावार नहीं मिलती है। ऐसा भूमि के भौतिक व जैविकी स्वास्थ्य की कमी के कारण होता है। ऐसी भूमि में पौधों को उचित अनुपात में नमी व पोषक तत्त्व उपलब्ध नहीं हो पाते हैं और वापसा व ह्यूमस का निर्माण नहीं हो पाता है। यदि भूमि के जैविकी स्वास्थ्य में सुधार हो जाए तो कम मात्रा में पोषक तत्त्व उपलब्ध होने पर भी अच्छी पैदावार ली जा सकती है। प्राकृतिक कृषि में यह गुण स्वत: ही भूमि में उपलब्ध हो जाते हैं।

भूमि परीक्षण में यह भी देखा गया है कि कई पोषक तत्त्व भूमि के नीचे की परतों में जमा हो जाते हैं। नीचे की भूमि अन्नपूर्णा है। नीचे की भूमि से ऊपर भूमि की सतह पर पोषक तत्त्व लाने का कार्य पतझड़ में गिरे काष्ठ पदार्थ के विघटक केषाकर्षण शक्ति के द्वारा और हमारे देशी केंचुए करते हैं। वे उन्हें खींचकर ऊपर लाकर अपने माध्यम से जड़ों को उपलब्ध कराने का महान कार्य करते हैं। यदि आप भूमि पर पड़ा हुआ देशी गाय का गोबर ऊपर उठाएंगे तो आप देखेंगे कि उस गोबर के नीचे भूमि पर दो-चार छेद हैं ये छेद हमारे देशी केंचुए करते हैं। इसका मतलब है कि देशी गाय के गोबर में केंचुओं को ऊपर खींचने की अद्‌भुत ताकत

है। देशी गाय के एक ग्राम गोबर में 300 से 500 करोड़ उपयोगी भोजन निर्माण करने वाले जीवाणु होते हैं।

एक एकड़ भूमि के लिए कितना गोबर चाहिए? एक महीने के भीतर कम से कम एक बार प्रति एकड़ में 10 कि.ग्रा. देशी गाय का गोबर प्रयोग में लाने की आवश्यकता है। एक देशी गाय एक दिन में 11 कि.ग्रा. गोबर, एक देशी बैल एक दिन में 13 कि.ग्रा. गोबर और एक भैंस एक दिन में 15 कि.ग्रा. गोबर देती है। एक गाय का एक दिन का गोबर एक एकड़ भूमि के लिए एक महीने के लिए पर्याप्त है। इस प्रकार एक गाय के साथ 30 एकड़ की खेती हो सकती है।

पद्मश्री से सम्मानित डॉ. सुभाष पालेकर कहते हैं 'मैंने जंगल में फलदार वृक्ष के नीचे अनेक प्रकार की वनस्पतियों को पलते देखा। मैंने उनका वर्गीकरण किया। मुझे वनस्पतियों की 268 किस्मों की प्रजातियां मिलीं। इनमें तीन चौथाई दो दले पौधों और एक दले पौधों का अनुपात वही रहा। मैं सोचने लगा कि प्रकृति ने दो-दो दले पौधे की गिनती तीन गुना क्यों रखी है? इसका मतलब है कि प्रकृति को इसकी जरूरत है। दो-दले पौधों में प्रोटीन की मात्रा ज्यादा होती है। प्रोटीन में सौर-ऊर्जा बहुत भरी होती है। जब बीज पककर गिर जाता है तो उनमें पड़ी ऊर्जा जीवाणुओं को मिलती है जिससे जीवाणुओं की संख्या बड़ी तेजी से बढ़ती है। मैंने सोचा कि क्यों न दो-दले बीजों का आटा, गोबर, गो-मूत्र तथा गुड़ के साथ प्रयोग किया जाए। मैंने तुरन्त अलग-अलग मात्रा में यह आटा डालकर प्रयोग शुरू किया। परिणाम बहुत ही चमत्कारी निकला। जो प्रयोग किया गया उसको नाम दिया गया - जीवामृत अर्थात् जीव अमृत।'

5. जीवामृत (जीव अमृत) और इसके निर्माण की विधि

बार-बार प्रयोग करने के पश्चात् परिणाम निकला कि एक एकड़ जमीन के लिए 10 कि.ग्रा. गोबर के साथ गोमूत्र, गुड़ और दो-दले बीजों का आटा या बेसन आदि मिलाकर प्रयोग में लाने से चमत्कारी परिणाम निकलते हैं। आखिरकार एक फॉर्मूला तैयार किया गया जिसका नाम रखा गया जीवामृत (जीव अमृत)।

जीवामृत का निर्माण

1.	देशी गाय का गोबर	10 कि.ग्रा.
2.	देशी गाय का मूत्र	8-10 लीटर
3.	गुड़	1-2 कि.ग्रा.
4.	बेसन	1-2 कि.ग्रा.
5.	पानी	180 लीटर
6.	पेड़ के नीचे की मिट्टी	1 कि.ग्रा.

उपरोक्त सामग्रियों को प्लास्टिक के एक ड्रम में डालकर लकड़ी के एक डंडे से घोलना है और इस घोल को दो से तीन दिन तक सड़ने के लिए छाया में रख देना है। प्रतिदिन दो बार

सुबह-शाम घड़ी की सुई की दिशा में लकड़ी के डंडे से दो मिनट तक इसे घोलना है और जीवामृत को बोरे से ढक देना है*। इसके सड़ने से अमोनिया, कार्बनडाईआक्साइड, मीथेन जैसी हानिकारक गैसों का निर्माण होता है।

गर्मी के महीने में जीवामृत बनने के बाद सात दिन तक उपयोग में लाना है और सर्दी के महीने में 8 से 15 दिन तक उसका उपयोग कर सकते हैं। उसके बाद बचा हुआ जीवामृत भूमि पर फेंक देना है।

दिसम्बर महीने में गुरुकुल में तैयार किए गए जीवामृत पर एक वैज्ञानिक शोध किया गया जिसमें जीवामृत तैयार करने से 14 दिन बाद सबसे अधिक 7400 करोड़ जीवाणु (वैक्टीरिया) पाए गए। इसके बाद इसकी संख्या घटनी शुरू हो गई। गुड़ और बेसन दोनों ने ही जीवाणुओं को बढ़ाने में महत्तवपूर्ण भूमिका निभाई। गोबर, गोमूत्र व मिट्टी के मेल से जीवाणुओं की संख्या केवल तीन लाख पाई गई। जब इनमें बेसन मिलाया गया तो इनकी संख्या बढ़कर 25 करोड़ हो गई और जब इन तीनों में बेसन की जगह गुड़ मिलाया गया तो इनकी संख्या 220 करोड़ हो गई, लेकिन जब गुड़ व बेसन दोनों ही मिलाया गया अर्थात् जीवामृत के सारे घटक (गोबर, गोमूत्र, गुड़, बेसन व मिट्टी) मिला दिए गए तो आश्चर्यजनक परिणाम सामने आए और जीवाणुओं की संख्या बढ़कर 7400 करोड़ हो गई। यही जीवामृत जब सिंचाई के साथ खेत में डाला जाता है तो भूमि में जीवाणुओं की संख्या अविश्वसनीय रूप से बढ़ जाती है और भूमि के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों में वृद्धि होती है।

* शीत प्रधान स्थानों में पशु जहां बांधे जाते हैं उस घर में ही जीवामृत के घोल को तैयार करें व उपयोग होने तक वहीं रखें ताकि शीतलता के कारण जीवाणुओं की संख्या वृद्धि में बाधा न आए।

6. जीवामृत का प्रयोग

जीवामृत को महीने में दो बार या एक बार उपलब्धता के अनुसार, 200 लीटर प्रति एकड़ के हिसाब से सिंचाई के पानी के साथ दीजिए, इससे खेती में चमत्कार होगा।

फलों के पेड़ों के पास पेड़ की दोपहर 12 बजे जो छाया पड़ती है, उस छाया के पास प्रति पेड़ 2 से 5 लीटर जीवामृत भूमि पर महीने में एक बार या दो बार गोलाकार डालना है। जीवामृत डालते समय भूमि में नमी होना आवश्यक है।

जीवामृत का छिड़काव

गन्ना, केला, गेहूं, ज्वार, मक्का, अरहर, मूंग, उड़द, चना, सूरजमुखी, कपास, अलसी, सरसों बाजरा, मिर्च, प्याज, हल्दी, अदरक, बैंगन, टमाटर, आलू, लहसुन, हरी सब्जियां, फूल, औषधियुक्त पौधे, सुगन्धित पौधे आदि सभी पर 2 से लेकर 8 महीने तक जीवामृत छिड़कने की विधि इस तरह है। आप महीने में कम से कम एक बार, दो बार या तीन बार जीवामृत का छिड़काव करें।

खड़ी फसल पर जीवामृत का छिड़काव

60 से 90 दिन की फसलें

पहला छिड़काव: बीज बुआई के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 100 लीटर पानी और 5 लीटर कपड़े से छाना हुआ जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

दूसरा छिड़काव: पहले छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 20 लीटर जीवामृत को मिलाकर छिड़काव करें।

तीसरा छिड़काव: दूसरे छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 5 लीटर खट्टी छाछ या लस्सी मिलाकर छिड़काव करें।

90 से 120 दिन की फसलें

पहला छिड़काव: बीज बुआई के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 100 लीटर पानी और 50 लीटर कपड़े से छाना हुआ जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

दूसरा छिड़काव: पहले छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 150 लीटर पानी और 10 लीटर छाना हुआ जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

तीसरा छिड़काव: दूसरे छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 20 लीटर जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

चौथा और आखिरी छिड़काव: यदि दाने दूध की अवस्था में या फल बाल्यावस्था में हों तो प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 5 लीटर खट्टी छाछ या 2 लीटर नारियल का पानी मिलाकर छिड़काव करें।

120 से 135 दिन की फसलें

पहला छिड़काव: बीज बुआई के एक माह बाद प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 5 लीटर कपड़े से छाना हुआ जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

दूसरा छिड़काव: पहले छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 150 लीटर पानी और 10 लीटर जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

तीसरा छिड़काव: दूसरे छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 5 लीटर खट्टी छाछ या लस्सी मिलाकर छिड़काव करें।

चौथा छिड़काव: तीसरे छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 लीटर पानी 20 लीटर जीवामृत में मिलाकर छिड़काव करें।

पांचवा और आखिरी छिड़काव: यदि दाने दूध की अवस्था में या फल बाल्यावस्था में हों तो प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 5 लीटर खट्टी छाछ या 2 लीटर नारियल का पानी मिलाकर छिड़काव करें।

135 से 150 दिन की फसलें

पहला छिड़काव: बीज बुआई के एक माह बाद प्रति एकड़ 100 लीटर पानी और 5 लीटर कपड़े से छाना हुआ जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

दूसरा छिड़काव: पहले छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 150 लीटर पानी और 10 लीटर जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

तीसरा छिड़काव: दूसरे छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 5 लीटर खट्टी छाछ या लस्सी मिलाकर छिड़काव करें।

चौथा छिड़काव: तीसरे छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 लीटर पानी 20 लीटर जीवामृत में मिलाकर छिड़काव करें।

पांचवा छिड़काव: चौथे छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 20 लीटर जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

आखिरी छिड़काव: दाने दूध की अवस्था में, फल बाल्यावस्था में हों तो प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 5 लीटर खट्टी छाछ या 2 लीटर नारियल का पानी मिलाकर छिड़काव करें।

165 से 180 दिन की फसलें

पहला छिड़काव: बीज बुआई के एक माह बाद प्रति एकड़ 150 लीटर पानी और 5 लीटर कपड़े से छाना हुआ जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

दूसरा छिड़काव: पहले छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 150 लीटर पानी और 10 लीटर जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

तीसरा छिड़काव: दूसरे छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 5 लीटर खट्टी छाछ या लस्सी मिलाकर छिड़काव करें।

चौथा छिड़काव: तीसरे छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 लीटर पानी 20 लीटर जीवामृत में मिलाकर छिड़काव करें।

पांचवा छिड़काव: चौथे छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 20 लीटर जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

आखिरी छिड़काव: यदि दाने दूध की अवस्था में या फल बाल्यावस्था में हों तो प्रति एकड़ 200 लीटर पानी और 20 लीटर जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

गन्ना, केला, पपीता की फसल पर जीवामृत का छिड़काव

इन फसलों पर बीज बोने या रोपाई के बाद पांच महीने तक ऊपर दी गई विधि के अनुसार छिड़काव करें। उसके बाद हर 15

दिन में प्रति एकड़ 20 लीटर जीवामृत कपड़े से छानकर 200 लीटर पानी में घोल बनाकर गन्ना, केला तथा पपीते के पौधों पर छिड़काव करें।

सभी फलदार पेड़ों पर जीवामृत का छिड़काव

फलदार पौधों (चाहे उनकी उम्र कोई भी हो), पर महीने में दो बार जीवामृत का छिड़काव करें। परिमाण (मात्रा) 20 से 30 लीटर जीवामृत कपड़े से छानकर 200 लीटर पानी में घोलकर छिड़कना है। फल पकने से 2 महीने पहले फलदार पौधों पर नारियल का पानी 2 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। इसके 15 दिन बाद 5 लीटर खट्टी छाछ या लस्सी 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़किए।

7. बीजामृत (बीज अमृत)

किसान मित्रों! बुआई करने से पहले बीजों का संस्कार अर्थात् संशोधन करना बहुत जरूरी है। इसके लिए बीजामृत बहुत ही उत्तम है। जीवामृत की भांति ही बीजामृत में भी मैंने वही चीजें डाली हैं जो हमारे पास बिना किसी कीमत के मौजूद हैं। बीजामृत निम्नलिखित सामग्री से बनता है –

1.	देशी गाय का गोबर	5 कि.ग्रा.
2.	गोमूत्र	5 लीटर
3.	चूना या कली	250 ग्राम
4.	पानी	20 लीटर
5.	खेत की मिट्टी	मुट्ठी भर

इन सभी पदार्थों को पानी में घोलकर 24 घंटे तक रखें। दिन में दो बार लकड़ी से इसे हिलाना है। इसके बाद बीजों के ऊपर बीजामृत डालकर उन्हें शुद्ध करना है। उसके बाद छाया में सुखाकर फिर बुआई करनी है।

बीजामृत द्वारा शुद्ध हुए बीज जल्दी और ज्यादा मात्रा में उगते हैं। जड़ें तेजी से बढ़ती हैं। पौधे, भूमि द्वारा लगने वाली बीमारियों से बचे रहते हैं एवं अच्छी प्रकार से पलते-बढ़ते हैं।

8. घनजीवामृत

घनजीवामृत अब आप इस प्रकार भी बना सकते हैं। घनजीवामृत के लिए क्या करना है–

1. 100 कि.ग्रा. देशी गाय का गोबर
2. 1 कि.ग्रा. गुड़
3. 2 कि.ग्रा. दलहन का आटा (अरहर, चना, मूंग या उड़द)
4. एक मुट्ठी उस खेत की मिट्टी
5. थोड़ा–सा गोमूत्र

उपरोक्त सभी पदार्थों को अच्छी तरह से मिलाकर गूंथ लें ताकि उसका हलवा, लड्डू जैसा गाढ़ा बन जाये। उसे 2 दिन तक बोरे से ढककर रखें और थोड़ा पानी छिड़क दें। बाद में उसे इतना घना बनाएं, जिससे उसके लड्डू बनें। अब इस घनजीवामृत के लड्डू को कपास, मिर्च, टमाटर, बैंगन, भिण्डी, सरसों के बीज के साथ भूमि पर रख दें। उसके ऊपर सूखी घास डालें। यदि आपके पास डिप सिंचन है तो घनजीवामृत के ऊपर सूखी घास रखकर घास पर डिपर से पानी डालें।

ये घनजीवामृत के लड्डू आप पेड़–पौधों के पास रख सकते हैं ताकि जीवामृत जड़ों तक पहुंच सके, इसके लिए भूमि में नमी नहीं होनी चाहिए।

सूखा घनजीवामृत

इस गीले घनजीवामृत को आप छाया या हल्की धूप में अच्छी तरह फैलाकर सुखा लें। सूखने के बाद इसको लकड़ी से पीटकर बारीक करें व बोरों में भरकर छाया में भंडारण करें। यह

घनजीवामृत आप सुखाकर 6 महीने तक रख सकते हैं। सूखने के बाद घनजीवामृत स्थित सूक्ष्म जीव समाधि लेकर कोष धारण करते हैं। जब आप घनजीवामृत भूमि में डालते हैं, तब भूमि में नमी मिलते ही वे सूक्ष्म जीव कोष तोड़कर, समाधि भंग करके पुनः कार्य में लग जाते हैं। जिसके पास गोबर ज्यादा है, उसके लिए ज्यादा मात्रा में घनजीवामृत बनाकर सीमित फसलों में गोबर खाद में मिलाकर उसका प्रयोग करें। बड़े ही चमत्कारी परिणाम मिलेंगे।

किसी भी फसल की बुआई के समय प्रति एकड़ 100 कि.ग्रा. छाना हुआ गोबर खाद और 100 कि.ग्रा. घनजीवामृत मिलाकर बीज बोइए। बहुत ही अच्छे परिणाम मिलते हैं। मैंने यह परीक्षण प्रत्येक फसल में और फलदार पौधों में किया है और चमत्कारी परिणाम पाया है। इससे आप रासायनिक खेती से या जैविक खेती से ज्यादा उपज ले सकते हैं।

9. फसल सुरक्षा हेतु उपाय

किसी भी फसल पर या फलदार पेड़ों पर छिड़काव के लिए घर पर ही कम लागत से दवा बनाना।

1. **नीमास्त्र :** रस चूसने वाले कीट एवं छोटी सुंडी इल्लियों के नियन्त्रण हेतु।

विधि : पांच किलो नीम की हरी पत्तियां लें या नीम के पांच किलो सूखे फल लें और पत्तियों को या फलों को कूटकर रखें। 100 लीटर पानी में यह कुटी हुई नीम या फल का पाउडर डालें। उसमें 5 लीटर गोमूत्र डालें और एक किलो देशी गाय का गोबर मिला लें। लकड़ी से उसे घोलें और ढककर 48 घंटे तक रखें। दिन में तीन बार घोलें और 48 घंटे के बाद उस घोल को कपड़े से छान लें। अब फसल पर छिड़काव करें।

2. **ब्रह्मास्त्र :** कीड़ों, बड़ी सुन्डियों व इल्लियों के लिए।

विधि : 10 लीटर गोमूत्र लें। उसमें 3 किलो नीम के पत्ते पीसकर डालें। उसमें 2 कि.ग्रा. करंज के पत्ते डालें। यदि करंज के पत्ते न मिलें तो 3 किलो की जगह 5 किलो नीम के पत्ते डालें, उसमें 2 किलो सीताफल के पत्ते पीसकर डालें। सफेद धतूरे के 2 कि.ग्रा. पत्ते भी पीसकर इसमें डालें। अब इस सारे मिश्रण को गोमूत्र में घोलें और ढक कर उबालें। 3-4 उबाल आने के बाद उसे आग से नीचे उतार लें। 48 घंटों तक उसे ठण्डा होने दें। बाद में उसे कपड़े से छानकर किसी बड़े बर्तन में भरकर रख लें। यह हो गया ब्रह्मास्त्र तैयार। 100 लीटर पानी में 2-2.5 लीटर मिलाकर फसल पर छिड़काव करें।

3. **अग्नि अस्त्र (अग्न्यस्त्र) :** पेड़ के तनों या डंठलों में रहने

वाले कीड़े, फलियों में रहने वाली सुंडियों, फलों में रहने वाली सुंडियों, कपास के टिण्डों में रहने वाली सुंडियों तथा सभी प्रकार की बड़ी सुंडियों व इल्लियों के लिए।

विधि : 20 लीटर गोमूत्र लें, उसमें आधा कि.ग्रा. हरी मिर्च कूटकर डालें। आधा किलो लहसुन पीसकर डालें। नीम के 5 कि. ग्रा. पत्ते पीसकर डालें तथा लकड़ी के डंडे से घोलें और उसे एक बर्तन में उबालें। 4–5 उबाल आने पर उतार लें। 48 घंटे तक ठण्डा होने दें। 48 घंटे के बाद उस घोल को कपड़े से छानकर एक बर्तन में रखें। 100 लीटर पानी में 2–2.5 लीटर डालकर फसल पर छिड़काव करें।

4. **फंगीसाइड:** फफूंदी नाशक दवा या उल्ली नाशक।

विधि : 100 लीटर पानी में 3 लीटर खट्टी छाछ या लस्सी मिलाकर फसल पर छिड़काव करें। यह कवक नाशक है, सजीवक है और विषाणुरोधक है। बहुत ही बढ़िया कार्य करता है।

5. **दशपर्णी अर्क दवा :** एक ड्रम या मिट्टी के बर्तन में 200 लीटर पानी लें। उसमें 10 लीटर गोमूत्र डालें। 2 कि.ग्रा. देशी गाय का गोबर डालें और अच्छी तरह से घोलें। बाद में उसमें 5 कि.ग्रा. नीम की छोटी–छोटी डालियां टुकड़े करके डालें और 2 कि.ग्रा. शरीफा के पत्ते, 2 कि.ग्रा. करंज के पत्ते, 2 कि.ग्रा. अरंडी के पत्ते, 2 कि. ग्रा. धतूरे के पत्ते, 2 कि.ग्रा. बेल के पत्ते, 2 कि.ग्रा. मढार के पत्ते, 2 कि.ग्रा. बेर के पत्ते, 2 कि.ग्रा. पपीते के पत्ते, 2 कि.ग्रा. बबूल के पत्ते, 2 कि.ग्रा. अमरूद के पत्ते, 2 कि.ग्रा. जांसवद के पत्ते, 2 कि.ग्रा. तरोटे के पत्ते, 2 कि.ग्रा. बावची के पत्ते, 2 कि.ग्रा. आम के पत्ते, 2 कि.ग्रा. कनेर के पत्ते, 2 कि.ग्रा. देशी करेले के पत्ते, 2 कि.ग्रा. गेंदे के पौधों के टुकड़े डालें। उपरोक्त वनस्पतियों में

से कोई दस वनस्पति डालें। यदि आपके क्षेत्र में अन्य औषधयुक्त वनस्पतियों की जानकारी है, तब उसकी भी 2 कि.ग्रा. पत्तियां लें। सभी प्रकार की वनस्पतियों को डालने की आवश्यकता नहीं। बाद में उसमें आधा से एक किलो तक खाने का तम्बाकू डालें और आधा किलो तीखी चटनी डालें। तदनन्तर उसमें 200 ग्राम सोंठ का पाउडर व 500 ग्राम हल्दी का पाउडर डालें। अब इनको लकड़ी से अच्छी तरह घोलें। दिन में दो बार सुबह-शाम लकडी़ से घोलना है, घोल को छाया में रखें। इसे वर्षा के जल और सूर्य की रोशनी से बचाएं। इसको 40 दिन तैयार होने में लगते हैं। 40 दिन में दवा तैयार हो जाएगी, बाद में इसे कपड़े से छान लें और ढककर रख लें। इसे छह महीने तक रख सकते हैं। 200 लीटर पानी में यह 5 से 6 लीटर दशपर्णी अर्क कहीं भी कीट नियंत्रण के लिए छिड़कें। यह बहुत ही आसान और असरदार है।

किसी भी फसल या फलदार वृक्षों पर कीटनाशक दवाइयों का छिड़काव करने के लिए घर बैठे कम लागत से दवा बनाएं।

1. **दशपर्णी अर्क दवा :** सभी प्रकार के रसचूसक कीट और सभी इल्लियों के नियन्त्रण के लिए।

क्र.सं.	जरूरी वस्तुएं	मात्रा
1	पानी	200 लीटर
2	देशी गाय का गोमूत्र	10 लीटर
3	देशी गाय का गोबर	2 कि.ग्रा.
4	हल्दी पाउडर	500 ग्राम
5	अदरक की चटनी	500 ग्राम
6	हींग पाउडर	10 ग्राम
7	खाने का तम्बाकू पाउडर	1 कि.ग्रा.
8	तीखी हरी मिर्च की चटनी	1 कि.ग्रा.

9	लहसुन की चटनी	आधा कि.ग्रा.
10	नीम के पेड़ की छोटी-छोटी टहनियां	2 कि.ग्रा.
11	करंज के पत्ते	2 कि.ग्रा.
12	अरण्डी के पत्ते	2 कि.ग्रा.
13	बेल (बिल्व) के पत्ते	2 कि.ग्रा.
14	आम के पत्ते	2 कि.ग्रा.
15	धतूरे के पत्ते	2 कि.ग्रा.
16	तुलसी की टहनियां फूल-पत्तों सहित	2 कि.ग्रा.
17	अमरूद के पत्ते	2 कि.ग्रा.
18	देशी करेले के पत्ते	2 कि.ग्रा.
19	पपीते के पत्ते	2 कि.ग्रा.
20	हल्दी के पत्ते	2 कि.ग्रा.
21	अदरक के पत्ते	2 कि.ग्रा.
22	बबूल के पत्ते	2 कि.ग्रा.
23	सीताफल के पत्ते	2 कि.ग्रा.
24	सोंठ का पाउडर	200 ग्राम

उपरोक्त सभी वनस्पतियों में से कोई 10 वनस्पतियां डालें, पहली पांच महत्त्वपूर्ण हैं।

विधि : उपरोक्त सभी वनस्पतियों को एक ड्रम में घोलें, लकड़ी के डंडे से घड़ी की सुई की दिशा में दिन में दो बार अर्थात् सुबह-शाम घोलें, छाया में रखें एवं पानी व धूप से बचाएं। इस औषधि को 40 दिन तैयार होने के लिए रखें। 40 दिन बाद उसे कपड़े से छानें और भण्डारण करें।

अवधि उपयोग - 6 महीने

छिड़काव पानी - 200 लीटर

दशपर्णी दवा - 5/6 लीटर

2. **ब्रह्मास्त्र :** बड़े कीड़े-मकोड़ों की रोकथाम के लिए।

क्र.सं.	जरूरी वस्तुएं	मात्रा
1	गोमूत्र	10 लीटर
2	नीम के पत्ते पीसकर	5 कि.ग्रा.
3	सफेद धतूरे के पत्ते पीसकर	2 कि.ग्रा.
4	सीताफल के पत्ते पीसकर	2 कि.ग्रा.
5	करंज	2 कि.ग्रा.
6	अमरूद के पत्ते	2 कि.ग्रा.
7	अरण्डी के पत्ते	2 कि.ग्रा.
8	पपीते के पत्ते	2 कि.ग्रा.

विधि : उपरोक्त में से कोई 5 वनस्पतियों का गूदा गोमूत्र में घोलिए और ढक कर रखें तथा बर्तन में उबालें। 4 उबाल लगातार होने पर तथा 48 घंटे रखने पर कपड़े से छान लें और ढककर रखें। ब्रह्मास्त्र तैयार है, 100 लीटर पानी में 2-3 लीटर ब्रह्मास्त्र मिलाकर छिड़काव करें। इसे 6 महीने तक रख सकते हैं।

3. **नीमास्त्र :** रस चूसने वाले कीट और छोटी सुन्डियों के नियंत्रण के लिए।

क्र.सं.	जरूरी वस्तुएं	मात्रा
1	नीम के पत्ते व फल पीसकर	5 कि.ग्रा.
2	गोमूत्र	5 लीटर
3	गोबर	1 कि.ग्रा.
4	पानी	100 लीटर

विधि : उपरोक्त वस्तुओं को एक ड्रम में डालकर 48 घंटे तक रखें, दिन में 3 बार लकड़ी के डंडे से घोलें फिर कपड़े से छानकर छिड़काव करें।

4. अग्नि अस्त्र : पत्तों में छेद करने वाले कीड़े (सुन्डी) फलों में रहने वाली सुन्डियों व सभी प्रकार के बड़े कीड़ों को नियन्त्रण करने वाला कीटनाशक।

क्र.सं.	जरूरी वस्तुएं	मात्रा
1	गोमूत्र	10 लीटर
2	तीखी हरी मिर्च पीसकर	आधा कि.ग्रा.
3	लहसुन पीसकर	आधा कि.ग्रा.
4	नीम के पत्ते पीसकर	5 कि.ग्रा.
5	तम्बाकू खाने वाला	1 कि.ग्रा.

विधि : उपरोक्त वस्तुओं को मिलाकर उबालें, 4 उबाल आने पर बर्तन में रखें, 48 घंटे तक ठण्डा होने पर छान लें। 100 लीटर पानी में 2-3 लीटर अग्न्यस्त्र मिलाएं। समय अवधि 3 महीने। (थ्रिप्स के लिए 200 लीटर पानी, 1½ लीटर ब्रम्हास्त्र, 1½ लीटर अग्न्यस्त्र मिलाकर छिड़कें।)

5. फफूंदनाशक दवा

क्र.सं.	जरूरी वस्तुएं	मात्रा
1	पानी	100 लीटर
2	खट्टी छाछ	3 लीटर

विधि : उपरोक्त दोनों वस्तुओं को मिलाकर छिड़काव करें, बहुत ही बढ़िया फफूंदनाशक दवा है।

खाद बनाने की विधि-

1. जीवामृत (जीव अमृत, देशी खाद)

क्र.सं.	जरूरी वस्तुएं	मात्रा
1	देशी गाय का गोबर	10 कि.ग्रा.

2	देशी गाय का गोमूत्र	8–10 लीटर
3	गुड़	1–2 कि.ग्रा.
4	बेसन	2 कि.ग्रा.
5	बड़े पेड़ के नीचे की मिट्टी	एक मुट्ठी
6	पानी	200 लीटर

विधि : उपरोक्त सभी चीजों को एक ड्रम में घोलें और 2 से 7 दिनों तक छाया में रखें। दिन में दो बार सुबह–शाम घड़ी की सुई की दिशा में लकड़ी के डंडे से घुमाएं। ड्रम को बोरी से ढक दें। 15 दिन तक इसका प्रयोग कर सकते हैं।

2. बीजामृत (बीज अमृत)

क्र.सं.	जरूरी वस्तुएं	मात्रा
1	देशी गाय का गोबर	5 कि.ग्रा.
2	देशी गाय का गोमूत्र	5 लीटर
3	बुझा हुआ चूना या कली	250 कि.ग्रा.
4	पानी	20 लीटर

विधि : उपरोक्त वस्तुओं को ड्रम में घोलकर 24 घंटे के लिए रखें, दिन में दो बार लकड़ी से हिलाएं। अब इस घोल को बीजों के ऊपर डालकर बीज की सिंचाई करें और छाया में रखें। बाद में बीज को सुखाकर बोएं।

3. गुड़ / जल अमृत

क्र.सं.	जरूरी वस्तुएं	मात्रा
1	जैविक गुड़	3–5 कि.ग्रा.
2	बेसन	1 कि.ग्रा.

3	गोबर	10 कि.ग्रा.
4	सरसों का तेल	200 ग्राम
5	पानी	200 लीटर

विधि : सरसों के तेल में गोबर और बेसन को अच्छी तरह मिला लें। अब गुड़ सहित सारे सामान को 200 लीटर पानी में घोलकर व ढककर छाया में रखें। 24 घंटे में गुड़ / जल अमृत तैयार हो जाएगा।

4. जवैरलिक

क्र.सं.	जरूरी वस्तुएं	मात्रा
1	एक साल पुराने उपले	15 कि.ग्रा.
2	पानी	50 लीटर

विधि : उपरोक्त वस्तुओं को ड्रम में डालकर 4 दिन के लिए ढक कर छाया में रखें, जवैरलिक घोल तैयार हो जाएगा।

5. घनजीवामृत लड्डू

क्र.सं.	जरूरी वस्तुएं	मात्रा
1	देशी गाय का गोबर	100 कि.ग्रा.
2	गुड़	2 कि.ग्रा.
3	बेसन	2 कि.ग्रा.
4	खेत के मेड़ की मिट्टी	एक मुट्ठी
5	गोमूत्र	थोड़ा-सा

विधि : उपरोक्त सभी वस्तुओं को अच्छी तरह मिलाकर गूंथ लें ताकि इसका हलवा / घनजीवामृत बन जाए। इसे 2 दिन तक छाया में ढककर रखें, बाद में पानी छिड़कें ताकि लड्डू बन जाए।

6. नीम पेस्ट

क्र.सं.	जरूरी वस्तुएं	मात्रा
1	देशी गाय का गोबर	100 कि.ग्रा.
2	पानी	50 लीटर
3	गोमूत्र	20 लीटर
4	देशी गाय का गोबर	20 कि.ग्रा.
5	नीम की टहनियों के टुकड़े/नींबू पाउडर	10 कि.ग्रा.
6	सीताफल की टहनियां	10 कि.ग्रा.

विधि : उपरोक्त वस्तुओं का घोल बनाएं ताकि सब मिल जाए। 48 घंटे बोरी से ढककर रखें। नीम पेस्ट तैयार हो जायेगा।

7. सप्त धान्य : फल, सब्जी एवं दानों में चमक के लिए

क्र.सं.	जरूरी वस्तुएं	मात्रा
1	तिल के दाने	100 ग्राम
2	मूंग के दाने	100 ग्राम
3	उड़द के दाने	100 ग्राम
4	लोबिये के दाने	100 ग्राम
5	कॉफी के दाने	100 ग्राम
6	मोठ के दाने	100 ग्राम
7	चने के दाने	100 ग्राम
8	गेहूं के दाने	100 ग्राम

विधि : एक छोटी कटोरी में तिल के 100 ग्राम दानें लें और उसमें उतना पानी डालें कि दाने पानी में भीग जाएं और इसे घर के अन्दर रख लें।

दो दिन पश्चात् एक बड़ी कटोरी लें, उसमें 100 ग्राम मूंग के अखण्ड दाने डालें एवं 100 ग्राम उड़द के अखण्ड दाने, 100

ग्राम लोबिया, 100 ग्राम कॉफी, 100 ग्राम मोठ, 100 ग्राम चना और 100 ग्राम गेहूं के दाने मिलाएं।

इन सबको मिलाकर, इसमें इतना पानी डालें कि वे भीग जाएं और घर के अन्दर रख दें।

तीन दिन बाद सभी दानों को निकाल लें। तदनन्तर कपड़े की पोटली में उन सब दानों को बांध लें और उसको अंकुरण के लिए घर के अन्दर रख लें। जिस पानी में दाने भिगोए थे, उस पानी को भी ढक कर रखें। पोटली में जब अंकुर 1 सेमी. बाहर निकल आएं तब पोटली खोलें और उसकी चटनी बनाएं। बाद में 200 लीटर पानी में उस चटनी को हाथ से मिलाएं और पहले भिगोए पानी को भी उसमें मिलाकर घोलें। उस घोल को 2 घंटे तक रखें। 2 घंटे बाद दोबारा घोलें और उस घोल को कपड़े से छानकर रख लें।

अब 48 घंटे के अन्दर इसका छिड़काव कर दें। चमत्कारी परिणाम आयेंगे और जहां इसका छिड़काव करेंगे वहां चमक आ जाएगी।

जीवामृत कैसे एक कल्चर है? (जामन, स्थानीय प्रयोग जामुन)

अब आप सोचने लगे होंगे कि जीवामृत यदि इतना ही चमत्कारी परिणाम देने वाला है तो क्या यह फसलों की जड़ों में दिया जाने वाला कोई खाद है? मैं आपको बता देना चाहता हूँ कि जीवामृत किसी भी पेड़-पौधे को दिया जाने वाला कोई खुराक नहीं है। यह तो असंख्य सूक्ष्म जीवाणुओं का एक विशाल भण्डार है। ये सारे सूक्ष्म जीवाणु जो पोषक-तत्त्व प्रयोग में लाने योग्य नहीं होते, उनको प्रयोग में लाने योग्य बना देते हैं। दूसरे शब्दों में ये सूक्ष्म जीवाणु भोजन बनाने का कार्य करते हैं इसलिए हम इन्हें पेड़-पौधों का

भोजन निर्माण कर्त्ता अथवा रसोइया भी कह सकते हैं।

देशी गाय के एक ग्राम गोबर में 300 से लेकर 500 करोड़ तक सूक्ष्म जीवाणु होते हैं। जब हम जीवामृत तैयार करते हैं तो उसमें हम देशी गाय के 10 कि.ग्रा. गोबर को 200 लीटर पानी में मिलाते हैं। ऐसा करने पर मानों हमने 30 लाख करोड़ जीवाणु उसमें डाल दिये। 20 मिनट में ये जीवाणु अपनी संख्या दोगुनी कर लेते हैं। 72 घंटे बाद इनकी संख्या असंख्य हो जाती है। इस जीवामृत को जब हम पानी के साथ भूमि पर डालते हैं तो यह पेड़-पौधों को भोजन देने, पकाने एवं तैयार करने में जुट जाता है। भूमि में जाते ही जीवामृत एक और काम करता है। यह धरती के भीतर 10 से 15 फीट तक जाकर समाधि की स्थिति में बैठे हुए देशी केंचुओं तथा दूसरे जीव-जन्तुओं को ऊपर की ओर खींचकर उन्हें कार्यशील कर देता है।

10. प्राकृतिक कृषि के कुछ विशेष पहलू

1. यह पद्धति प्रकृति, विज्ञान, आध्यात्म एवं अहिंसा पर आधारित शाश्वत कृषि पद्धति है।
2. इस पद्धति में आपको रासायनिक खाद, गोबर खाद, जैविक खाद, केंचुआ खाद एवं जहरीले कीटनाशक, रासायनिक खरपतवारनाशक, रासायनिक फफूंदनाशक नहीं डालना है, केवल एक देशी गाय की सहायता से आप इस खेती को कर सकते हैं। भूमि चाहे सिंचित हो या असिंचित।
3. इस पद्धति में केवल 10 प्रतिशत पानी एवं 10 प्रतिशत बिजली की आवश्यकता है। इसका मतलब हुआ 90 प्रतिशत पानी व 90 प्रतिशत बिजली की बचत।
4. इस पद्धति में शस्य उत्पादन (फसलों का उत्पादन) रासायनिक कृषि पद्धति अथवा जैविक कृषि पद्धति से अधिक होगा।
5. शस्य उत्पादन जहर-मुक्त, उच्च गुणवत्तायुक्त, पौष्टिक व स्वादिष्ट होगा। इन गुणों के कारण उपभोक्ताओं द्वारा इनकी मांग अधिक होने से मूल्य भी अच्छा मिलेगा।
6. रासायनिक एवं जैविक कृषि से मानव, पशु-पक्षी, जल एवं पर्यावरण का विनाश होता है जबकि कम लागत प्राकृतिक खेती से इन सबका विनाश रुकता है और प्राकृतिक संसाधनों की शाश्वतता बढ़ती है।
7. कम लागत कृषि का नारा है - **''गांव का पैसा गांव में, शहर का पैसा गांव में''**
8. इन सभी पहलुओं पर विचार करते हुए प्रत्येक किसान को कम लागत प्राकृतिक खेती व आध्यात्मिक खेती को स्वीकार करना चाहिए।

11. प्राकृतिक कृषि की परिभाषा एवं सिद्धान्त

पेड़-पौधों की वृद्धि और उनसे अच्छा उत्पादन लेने के लिए जिन-जिन संसाधनों की आवश्यकता होती है, उन सभी संसाधनों को पौधों को उपलब्ध कराने के लिए प्रकृति को बाध्य करना 'प्राकृतिक कृषि' कहलाती है। मुख्य फसल का लागत मूल्य सहयोगी फसलों में से लेना और मुख्य फसल बोनस के रूप में प्राप्त करना सही रूप में कम लागत 'प्राकृतिक खेती' है।

प्राकृतिक कृषि (खेती) के सिद्धान्त

1. देशी गाय: यह कृषि मुख्य रूप से देशी गाय पर आधारित है। देशी गाय के एक ग्राम गोबर में 300 से 500 करोड़ तक सूक्ष्म जीवाणु होते हैं जबकि विदेशी गाय के एक ग्राम गोबर में केवल 78 लाख सूक्ष्म जीवाणु पाये जाते हैं। देशी गाय के गोबर एवं मूत्र की महक से देशी केंचुए भूमि की सतह पर आ जाते हैं और भूमि को उपजाऊ बनाते हैं। देशी गाय के गोबर में 16 मुख्य पोषक तत्त्व होते हैं। ये 16 तत्त्व ही हमारे पौधों के विकास के लिए उपयोगी हैं। इन्हीं 16 पोषक तत्त्वों को पौधे भूमि से लेकर अपने शरीर का निर्माण करते हैं। ये 16 तत्त्व देशी गाय के आंत में निर्मित होते हैं, इसलिए देशी गाय प्राकृतिक कृषि की मूलाधार है।

2. जुताई : प्राकृतिक कृषि में गहरी जुताई नहीं की जाती क्योंकि यह भूमि की उपजाऊ शक्ति को कम कर देती है। 360 डिग्री तापमान होते ही भूमि से कार्बन उठना शुरू हो जाता है और ह्यूमस की निर्माण-क्रिया रुक जाती है जिसके कारण भूमि की उपजाऊ शक्ति कम हो जाती है।

3. जल प्रबंधन : प्राकृतिक कृषि में सिंचाई पौधों से कुछ दूरी

पर की जाती है। इसमें मात्र 10 प्रतिशत जल का ही उपयोग होता है जिससे 90 प्रतिशत जल की बचत हो जाती है। पौधों को कुछ दूरी से जल देने पर पौधों की जड़ों की लम्बाई बढ़ जाती है। जड़ों की लम्बाई बढ़ जाने से पौधों के तनों की मोटाई बढ़ जाती है। इस क्रिया से पौधों की लम्बाई भी बढ़ जाती है। इसके परिणामस्वरूप उत्पादन बढ़ जाता है।

4. पौधों की दिशा : प्राकृतिक कृषि में पौधों की दिशा उत्तर-दक्षिण होती है जिससे पौधों को सूर्य का प्रकाश अधिक समय तक मिलता रहे। एक पौधे से दूसरे पौधे की दूरी बढ़ाये जाने के कारण भी पौधों को अधिक मात्रा में सूर्य से ऊर्जा प्राप्त होती है, जिससे पौधे अपने शरीर का निर्माण करते हैं। इससे पौधों पर किसी भी प्रकार के कीट लगने की संभावना भी कम हो जाती है और पौधों में पोषक तत्त्व भी संतुलित मात्रा में संचित होते हैं। पौधों की दिशा उत्तर-दक्षिण होने से उत्पादन 20 प्रतिशत बढ़ जाता है।

5. सहयोगी फसलें : प्राकृतिक कृषि में मुख्य फसल के साथ सहयोगी फसलों की खेती भी एक साथ की जाती है जिससे मुख्य फसल को नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश आदि मिलता रहे। सहयोगी फसलों की जड़ों के पास नाइट्रोजन स्थिरक जीवाणु जैसे राइजोबियम, असोस्पीरीलम, अजोटोबॅक्टर आदि की मदद से पौधों का विकास होता है। प्राकृतिक कृषि में मुख्य फसलों के साथ सहयोगी फसलें लगाने से मुख्य फसल पर कीट नियन्त्रण भी साथ-साथ होता है।

6. आच्छादन : भूमि की सतह के ऊपर फसलों के अवशेष को ढकना 'आच्छादन' कहलाता है। इससे पानी की बचत होती है और भूमि से कार्बन भी नहीं उड़ता, जिससे भूमि की उर्वरा-शक्ति

बढ़ती है। आच्छादन हवा से नमी एकत्र करता है और पौधों को प्रदान करता है, इससे सूक्ष्म पर्यावरण का निर्माण होता है और देशी केंचुओं की गतिविधियाँ बढ़ जाती हैं। देशी केंचुए अपनी विष्ठा भूमि की सतह पर डालते हैं। केंचुओं की विष्ठा में सामान्य मिट्टी से 7 गुना नाइट्रोजन, 9 गुना फास्फोरस और 11 गुना पोटाश आदि होते हैं जिससे भूमि शीघ्र सजीव हो उठती है।

7. सूक्ष्म पर्यावरण : प्राकृतिक कृषि में 65 प्रतिशत से 72 प्रतिशत तक नमी, 25 डिग्री से 32 डिग्री तक वायु का तापमान, भूमि के अन्दर अंधेरा, वापसा, ऊब और छाया चाहिए। इन परिस्थितियों के निर्माण को 'सूक्ष्म पर्यावरण' कहते हैं। ये परिस्थितियाँ आच्छादन द्वारा निर्मित की जाती हैं। 'आच्छादन' करने से भूमि में अंधेरा, नमी, वापसा, ऊब और छाया का निर्माण होता है।

8. केषाकर्षण शक्ति (पृष्ठ तनाव Capillary Action) : प्राकृतिक कृषि में पौधे केषाकर्षण शक्ति के द्वारा मिट्टी की गहराई से पोषक तत्त्वों को प्राप्त कर लेते हैं जिससे भूमि में जीवाणु की गतिविधियाँ बढ़ जाती हैं। भूमि के 5 इंच नीचे की मिट्टी में जीवाणु पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। रासायनिक खेती में रासायनिक खादों के कारण केषाकर्षण शक्ति कार्य नहीं कर पाती क्योंकि मिट्टी के दो कणों के बीच 50 प्रतिशत नमी व 50 प्रतिशत हवा का संचरण होना चाहिए। रासायनिक खादों से नमक (नैपदा) जमा हो जाता है, जैसे यूरिया में 46 प्रतिशत नाइट्रोजन और 54 प्रतिशत नैपदा (नमक) होता है जो मिट्टी के दो कणों के बीच में जमा हो जाता है। मिट्टी की गहराई में पोषक तत्त्वों का भंडार होते हुए भी पौधे उन्हें प्राप्त नहीं कर पाते क्योंकि वहाँ पर केषाकर्षण शक्ति काम नहीं कर पाती। प्राकृतिक कृषि में केंचुओं की गतिविधियां बढ़ जाने के कारण मिट्टी के दो कणों के बीच 50 प्रतिशत नमी

और 50 प्रतिशत हवा का संचरण होता है जिससे प्राकृतिक कृषि में शक्ति का उपयोग करके पौधे अपना विकास कर लेते हैं और अच्छा उत्पादन देने में समर्थ हो जाते हैं।

9. देशी केंचुओं की गतिविधियाँ : हमारे देशी केंचुए धरती माता के हृदय स्थान हैं क्योंकि जैसे हमारा हृदय धड़कता है, उसी तरह केंचुए भूमि के अन्दर जब ऊपर-नीचे आवागमन करते हैं तो इससे भूमि में स्पंदन होता है। देशी केंचुए मानो भूमि की जुताई कर रहे हैं। ये भूमि के अन्दर छेद कर अपनी विष्ठा से भूमि की सतह को खाद्य तत्त्वों से समृद्ध बनाते हैं लेकिन केंचुओं की गतिविधियों के लिए भूमि की सतह पर आच्छादन चाहिए। भूमि पर अंधेरा होने से सूक्ष्म पर्यावरण का निर्माण होगा। अगर सूक्ष्म पर्यावरण का निर्माण नहीं होता है तो केंचुए अपना कार्य नहीं कर पाते हैं और भूमि बलवान नहीं हो पाती, इसलिए प्राकृतिक कृषि में आच्छादन एक मुख्य घटक होता है।

10. गुरुत्वाकर्षण बल : प्राकृतिक कृषि में गुरुत्वाकर्षण बल की मदद से पोषक तत्त्वों को पौधे बड़ी आसानी से प्राप्त कर लेते हैं क्योंकि जिस पोषक तत्त्व को पौधा जहाँ से उठाता है वहाँ उसको जाना ही पड़ता है। जैसे पौधा अपने शरीर के निर्माण में हवा से 78 प्रतिशत पानी लेता है लेकिन अपने जीवन की समाप्ति पर वह पुन: हवा को ही लौटा देता है। यह कार्य गुरुत्वाकर्षण आदि प्राकृतिक बल की मदद से पूर्ण हो जाता है।

11. भवंडर : प्राकृतिक कृषि में भवंडर की मदद से संतुलित वर्षा होती है। वर्षा द्वारा हवा से नाइट्रोजन प्राप्त करके पौधे विकसित होते हैं। भवंडर सदैव अलग-अलग स्थान पर आते हैं जिससे ध रती पर पानी की उपलब्धता बनी रहती है और भूमि में पानी का

स्तर बढ़ जाता है। वर्षा का सारा पानी भूमि में ही समा जाने के कारण भूमि मुलायम बन जाती है जिससे सूक्ष्म जीव अपना कार्य तेजी से करते हैं। इस तूफान से पौधों के पत्तों में गतिविधियाँ बढ़ जाती हैं जिससे पौधे सौर ऊर्जा को अच्छी प्रकार से प्राप्त कर उत्पादन में बढ़ोत्तरी करते हैं।

12. देशी बीज : प्राकृतिक कृषि में देशी बीजों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है क्योंकि देशी बीज पोषक तत्त्व कम लेकर उत्पादन अधिक देते हैं।

गुरुकुल कुरुक्षेत्र की श्री गोपाल कृष्ण गोशाला की देशी नस्ल की गायें

गुरुकुल के कृषि फार्म पर मिश्रित फसल में आच्छादन को दर्शाते हुए गुरुकुल के प्रधान श्री कुलवंत सिंह सैनी व कृषि वैज्ञानिक डॉ. हरि ओम जी

12. पेड़-पौधों का शरीर अर्थात् पाँच महाभूतों का भंडार

प्राकृतिक कृषि में पौधों के निर्माण में जिन पांच महाभूतों का सहयोग होता है, वे हैं - पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश। ये पाँच महाभूत मिलकर पेड-पौधों के शरीर का निर्माण करते हैं। ये पाँच महाभूत कितने भूतों से मिलकर बनते हैं, इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भारतीय दर्शन शास्त्र कहते हैं कि ये पंच महाभूत पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश 108 तत्त्वों से अर्थात् भूतों से बनते हैं। अब यह विज्ञान का कार्य है कि प्रमाण खोजे। हमारा शरीर भी 108 तत्त्वों से बना है। पेड़-पौधों के विकास पर 27 नक्षत्र और हर नक्षत्र के 4 चरणों का बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। प्रत्येक नक्षत्र में सूर्य की किरणों की तीव्रता अलग-अलग होती है। प्रत्येक नक्षत्र में पौधों की रचना ही अलग-अलग होती है। कुल नक्षत्र 27, प्रत्येक के 4 चरण अर्थात् 27 X 4 = 108

पहला विभाग - इसमें कार्बन, हाइड्रोजन और प्राणवायु (ऑक्सीजन) इन तीन तत्त्वों का समावेश होता है।

दूसरा विभाग - इसमें नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश इन तीन तत्त्वों का समावेश होता है।

तीसरा विभाग - इसमें कैल्शियम, मैगनेशियम और गन्धक का समावेश होता है।

चौथा विभाग - सूक्ष्म खाद्य तत्त्व 99 होते हैं, वे सभी चौथे विभाग में रखे जाते हैं।

13. कार्बन तत्त्व

सभी पौधे जीवित रहने व बढ़ोत्तरी करने के लिए अपने पत्तों में सूर्य के प्रकाश व वातावरण से कार्बन डाईऑक्साइड लेकर भोजन (स्टार्च) का निर्माण करते हैं। भोजन का निर्माण करने में जो प्रक्रिया होती है, उस दृष्टि से पौधों को तीन भागों में बांटा जा सकता है:-

1. कार्बन-3 पौधे, 2. कार्बन-4 पौधे, 3. कैम (CAM) पौधे।

कार्बन-3 पौधों में भोजन की प्रक्रिया के समय सबसे पहले जो स्थिर कार्बन का यौगिक पदार्थ बनता है वह कार्बन-3 युक्त होता है जिसे फास्फोग्लीस्रीक एसिड (PGA) कहते हैं और कार्बन-4 पौधों में यह आरम्भिक स्थिर यौगिक पदार्थ 4-कार्बन युक्त होता है जिसे ओग्जेलो एसेटिक एसिड (OAA) कहते हैं। कैम पौधे रेगिस्तान की सूखी रेतीली भूमि में होते हैं जो दिन के समय अपने रंध्र (स्टोमेटा) बंद रखते हैं ताकि इनमें से नमी का ह्रास न हो और रात के समय इन्हें खोल देते हैं ताकि वायुमण्डल से कार्बन डाईऑक्साइड लेकर भोजन का निर्माण कर सकें।

कम लागत प्राकृतिक खेती में कार्बन-3 तथा कार्बन-4 दोनों तरह के पौधों से युक्त अन्तर्वर्तीय फसलें ली जाती हैं ताकि सौर ऊर्जा व वायुमंडल से ली गई कार्बन डाईऑक्साइड का अधिक से अधिक प्रयोग किया जा सके। धान, गेहूं, दालें कार्बन-3 पौधे होते हैं जबकि गन्ना, मक्का, ज्वार जैसे पौधे कार्बन-4 पौधे कहलाते हैं। कार्बन-4 पौधे कार्बन डाईऑक्साइड का अधिक प्रयोग कर पाते हैं और उनमें अधिक तापमान पर श्वसन प्रक्रिया के समय होने वाली ऊर्जा की हानि भी कार्बन-3 पौधों से कम होती है। उदाहरण

के तौर पर गन्ने के साथ चना, लोबिया आदि की खेती एक साथ करने से अधिक सफलता मिलती है।

कार्बन-चक्र: कार्बन चक्र तीन प्रकार के होते हैं।

1. चंचल कार्बन - यह कार्बन पारा जैसा चंचल और उड़नशील होता है। इस प्रकार का कार्बन ह्यूमस में अपना योगदान नहीं करता। जब तापमान 36 डिग्री से ऊपर जाता है तब यह कार्बन उठना आरम्भ हो जाता है। यह हमारी फसलों को कोई लाभ नहीं देता है। दलहन की फसल में कार्बन तो होता है परन्तु उड़ जाता है इसलिए यह 'चंचल कार्बन' कहलाता है।

2. अस्थिर कार्बन - यह कार्बन उस जैसा चंचल भी नहीं होता और स्थिर भी नहीं होता। यह कार्बन ह्यूमस के निर्माण में सहायक है परन्तु थोड़ा सहायक है। जब तापमान 28 डिग्री से लेकर 36 डिग्री तक होता है तब इस अस्थिर कार्बन को हवा में उड़ने की शक्ति मिलती है। इस क्रिया से हमारी फसलों को कुछ समय के लिए लाभ मिलता है परन्तु लम्बे समय तक नहीं मिलता क्योंकि यह तापमान सदैव 28 डिग्री नहीं रहता है। जैसे 45 दिन के ढैंचा को जब हम मिट्टी में मिला देते हैं तो कुछ कार्बन उड़ जाते हैं और कुछ स्थिर रह जाते हैं। ये ही 'अस्थिर कार्बन' कहलाते हैं।

3. स्थिर कार्बन - यह कार्बन हमारी फसलों के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण होता है क्योंकि यह कार्बन स्थाई होता है। यह ह्यूमस का निर्माण करता है, इसलिए फसलों को सबसे अधिक लाभ प्रदान करता है। प्राकृतिक कृषि में हम स्थिर कार्बन को अधिक बढ़ाते हैं जिससे हमारी फसलें लहलहाती हैं। फसल की आयु-समाप्ति के बाद उसके शरीर को मिट्टी में मिलाते हैं। जैसे आम से फल लेने के बाद पतझड़ के रूप में प्राप्त पत्ते 'स्थाई कार्बन' कहलाते हैं।

14. पेड़-पौधों की जड़ों का खाद्य भण्डार: जीवद्रव्य (ह्यूमस)

जीवद्रव्य अमृत है। भूमि की सजीवता उपजाऊ शक्ति को मापने का पैमाना 'जीवद्रव्य' कहलाता है। जीवद्रव्य भूमि के अनन्त जीवाणुओं की शाश्वत सजीवता है। मृदा वैज्ञानिक एस. ए. वाक्सन ने जीवद्रव्य को परिभाषित करते हुए लिखा है -

Humus is an aggregation of reddish black colour matters-

जीवद्रव्य जो थोड़े-से लाल व गहरे काले रंग के असंख्य पदार्थों का एक ऐसा समूह है जिसमें वनस्पति पदार्थ, प्राणी, केंचुए, कीट और सूक्ष्म जीवाणु इन सभी सजीवों के मृत शरीरों को सूक्ष्म जीवाणु के द्वारा विघटन करके मुक्त किया जाता है। इसके बाद जीवद्रव्य की उत्पत्ति होती है। जीवद्रव्य गोलाकार कणों का एक ऐसा समूह है जो अत्यन्त क्लिष्ट पद्धति से निर्मित होता है। जीवद्रव्य में 50-60 प्रतिशत कार्बन और 6 प्रतिशत नाइट्रोजन होता है। उसमें कार्बन और नाइट्रोजन का अनुपात 10:1 होता है। यही अनुपात सबसे अच्छी उर्वरक व समृद्ध भूमि का होता है। जब 10 किलो कार्बन से 1 किलो नाइट्रोजन वायु का संयोग होता है तब जीवद्रव्य का निर्माण होता है। जीवद्रव्य के निर्माण में वनस्पति, मानव, प्राणी, पक्षी, जन्तु, कीट और सूक्ष्म जीवाणुओं के मृत शरीर महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कार्बन, नाइट्रोजन के अनुपात (10: 1) को स्थिर रखने के लिए आच्छादन में एकदल व द्विदल का संमिश्रण होना चाहिए। इसके आच्छादन में गन्ने की पुआल, गेहूँ के तुड़े के साथ चना, मसूर, अरहर, उड़द, मूँग के तुड़े का सम्मिश्रण करने से कार्बन और नाइट्रोजन का अनुपात बनाया जाता है जिससे अधिक से अधिक जीवद्रव्य का निर्माण किया जा सके। एक दल व

द्विदल वाले फसलों के आच्छादन से अधिक से अधिक जीवाणुओं की संख्या बढ़ती है। देशी गाय के गोबर में सबसे ज्यादा जीवाणु का जामन होता है क्योंकि एक देशी गाय के 1 ग्राम गोबर में 300 से 500 करोड़ सूक्ष्म जीवाणु होते हैं। अधिक जीवाणु होने के कारण अधिक से अधिक जीवाणुओं की मृत्यु के बाद उनका शरीर विघटित होता है और कार्बन व नाइट्रोजन का अनुपात 10: 1 होने पर ह्यूमस का निर्माण अधिक से अधिक होता है।

जीवद्रव्य का महत्त्व

जीवद्रव्य में सर्जन और विघटन दोनों क्रियाएं एक साथ निरन्तर चलती हैं। जीवद्रव्य न केवल फसलों की जड़ों को खाद्य की आपूर्त्ति करने वाला महत्त्वपूर्ण स्रोत है बल्कि असंख्य सूक्ष्म जीवाणुओं के माध्यम से खाद्य उपलब्ध कराने वाला स्रोत भी है। जीवद्रव्य खाद्य तत्त्वों का विनिमय करने की अद्‌भुत क्षमता रखता है। भूमि में जीवद्रव्य की उपस्थिति से भूमि बहुत ही नरम, मुलायम, कोमल, मृदु, कणाकार और हवा का संचारण करने वाली बनती है। इसके द्वारा भूमि की उत्तम संरचना होने से वर्षा का पूरा पानी भूमि में रिसता है और जल भूमि के स्रोतों में जमा हो जाता है। एक दिन में 1 कि.ग्रा. जीवद्रव्य हवा से 6 लीटर पानी सोख लेता है। हवा में पूरे साल में 35 से 90 प्रतिशत तक नमी होती है। जीवद्रव्य उसको हवा से सोखकर जड़ों व जीवाणुओं को पहुँचा देता है। जीवद्रव्य वायुमंडल व भूमि से बड़ी मात्रा में जो नमी सोखता है, उस सारी नमी को वह अपने शरीर में संग्रह करता है। जीवद्रव्य का शरीर स्पंज जैसा होता है। जो पानी वह सोखता है उसमें से कुछ पानी पौधों की जड़ों के लिए, कुछ पानी सूक्ष्म जीवाणुओं के लिए उपयोग करता है। जीवद्रव्य सूक्ष्म जीवाणुओं को अपने वात्सल्य और ममता से लोट-पोट कर देता है। जीवद्रव्य बालू (रेत) के कणों के साथ

भी खुद को बांधकर उसको कणों के रूप में परिवर्तित करता है और साथ ही चिकने कणों के चिकनेपन को खत्म कर देता है। इस उपचार से जीवद्रव्य मिट्टी के कणों को गोलाकार, कणाकार, मुलायम और हवादार बनाता है। जीवद्रव्य सभी प्रकार की फसलों की जड़ों को खाद्य तत्त्वों की आपूर्त्ति करता है। जीवद्रव्य सूक्ष्म जीवाणुओं की वृद्धि के लिए आवश्यक खाद्य तत्त्वों और ऊर्जा की आपूर्त्ति करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

धान की फसल के डंठल को जलाये बिना गेहूं की बीजाई करते हुए

15. पौधों को नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश प्राकृतिक कृषि में कैसे मिलता है?

प्राकृतिक कृषि में पौधों के शरीर का निर्माण पाँच महाभूतों से होता है। ये पाँच महाभूत हैं – जल, वायु, अग्नि, आकाश और पृथ्वी। इनकी मदद से सृष्टि के प्रत्येक जीव या पेड़-पौधों का निर्माण होता है। जिस प्रकार मानव के निर्माण में 108 तत्त्वों की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार इन पेड़-पौधों को भी 108 तत्त्वों की आवश्यकता पड़ती है, जिनको चार भागों में बांटा गया है–

भाग 1: कार्बन, हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन

भाग 2: नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटाश

भाग 3: चूना, मैगनिशियम तथा गंधक

भाग 4: 99 अन्य पोषक तत्त्व।

कार्बन, हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन : ये सब पेड़-पौधों के लिए भोजन बनाने का कार्य करते हैं। पत्तों का रंग हरा होता है क्योंकि उसमें हरे रंग का हरित द्रव्य पाया जाता है। इस हरित द्रव्य में सूर्य की ऊर्जा संग्रह करने वाले कुछ सौर-ऊर्जा-संग्राहक घटक होते हैं, जिन्हें अंग्रेजी में ATP कहते हैं। हरे पत्तों के भोजन बनाने की क्रिया को प्रकाश-संश्लेषण कहते हैं। एक वर्ग फीट में 1250 कैलोरी सौर-ऊर्जा एक पौधा प्राप्त करता है लेकिन पत्ते इसका 1 प्रतिशत ही ले सकते हैं। एक वर्ग फीट पत्ता एक दिन में 12.5 कैलोरी ऊर्जा संगृहीत करता है। उसी समय हरे-पत्ते हवा से कार्बनडाईऑक्साइड लेते हैं। पत्तों पर सूक्ष्म छिद्र होते हैं जिन्हें पूर्ण छिद्र कहते हैं। इन्हें सुरक्षा कोशिकाओं के माध्यम से घेरा जाता है। हवा से लिए हुए कार्बनडाईऑक्साइड के कणों को संगृहीत सौर

ऊर्जा तोड़ती है जिससे कार्बन एवं ऑक्सीजन अलग-अलग हो जाते हैं और इस ऑक्सीजनरूपी प्राणवायु को पौधे हवा में छोड़ते हैं। जड़ें भूमि से वाष्प के रूप में पानी लेती हैं जो कार्बन से जुड़कर कच्ची शर्करा बनाती है। एक वर्ग फीट हरा पत्ता एक दिन में 4.5 ग्राम कच्ची शर्करा बनाता है। इसमें से वह कुछ शर्करा अपने श्वसन के लिए खर्च करता है, कुछ जड़ों के माधयम से जीवाणुओं को खिलाया जाता है, कुछ दूसरे दिन के पौधों की वृद्धि के लिए रख लेता है, कुछ जड़ों के लिए तने में आरक्षित की जाती है, कुछ फलों, दानों, सुगंध, पोषक द्रव्य, भण्डारण क्षमता और प्रतिरोध शक्ति के लिए आरक्षित की जाती है। इस विधि से एक वर्ग फीट हरा पत्ता हमें एक दिन में 1.5 ग्राम दाने की उपज देता है। 2.25 ग्राम फलों, गन्ना, सब्जियों की उपज देता है। इसका मतलब है कि सौर ऊर्जा जितनी अधिक मात्रा में पड़ेगी उतनी अधिक उपज हमें प्राप्त होगी।

नाइट्रोजन : जंगल के किसी भी पेड़-पौधे का कोई भी पत्ता तोड़ें, विश्व की किसी भी प्रयोगशाला में जांच करवायें उसमें नाइट्रोजन की कमी नहीं मिलेगी। इसका मतलब हुआ उसे नाइट्रोजन प्रकृति से मिला है। हवा में 78.6 प्रतिशत नाइट्रोजन होता है। हवा नाइट्रोजन का महासागर है। हवा से कोई पत्ता नाइट्रोजन नहीं ले सकता, किसी भी पेड़-पौधे को मानव ने नाइट्रोजन नहीं दिया। इसका मतलब मनुष्य के अतिरिक्त कोई तो है जिसने जंगल में पौधों को नाइट्रोजन उपलब्ध कराया है। उसका नाम 'नाइट्रोजन स्थिरीकरण जीवाणु' है।

नाइट्रोजन जीवाणु दो प्रकार के होते हैं -

1. सहजीवी जीवाणु
2. असहजीवी जीवाणु।

सहजीवी जीवाणु – राईजोबियम जीवाणु, माइकोराइजा, नील हरित शैवाल। ये सहजीवी जीवाणु हवा से उतना नाइट्रोजन लेते हैं जितने नाइट्रोजन की जरूरत पौधों को होती है। नाइट्रोजन लेकर ये जड़ों को सुपुर्द कर देते हैं। जड़ भी मुफ्त में नाइट्रोजन नहीं लेती बल्कि इसके बदले जीवाणुओं को कच्ची शर्करा प्रदान करती है, इसलिए इन्हें सहजीवी जीवाणु कहते हैं। ये जीवाणु जिनको फल्लियाँ लगती हैं, जिनकी जड़ों पर गांठे होती हैं और जिनके बीज द्विदल होते हैं, ऐसे दाल वर्गीय (लेग्यूमिनोसी) परिवार की फसलों की जडों की गांठों में निवास करते हैं। इसलिए यदि हवा से नाइट्रोजन लेने का कार्य करना है तो दलहन की फसल लगानी होगी। देशी गाय की आंत में ये जीवाणु पाये जाते हैं।

असहजीवी जीवाणु – ये जीवाणु घास ग्रामिनी परिवार वर्गीय एक दल वनस्पति के जड़ों के पास बैठे होते हैं। एकदल फसलें जैसे धान, गन्ना, गेहूँ, मक्का, ज्वार, बाजरा, रागी, कपास, अलसी, सूरजमुखी, अरण्डी, सरसों, तिल इत्यादि। एजोटो बैक्टर इत्यादि असहजीवी जीवाणु जड़ों के माध्यम से संदेश प्राप्त करते ही हवा से नाइट्रोजन लेकर जड़ों के सामने रख देते हैं, इनका निर्माण देशी गाय की आंत में होता है। ये जीवाणु जीवामृत, घनजीवामृत के माध्यम से भूमि में जाते हैं और अपना कार्य करते हैं। सहजीवी और असहजीवी जीवाणु तभी सक्रिय होते हैं, जब साथ-साथ होते हैं अतः इनसे कार्य कराने के लिए हमें खेत में एक दल मुख्य फसल और सहयोगी फसल द्विदल की लगानी चाहिए। जब हम मुख्य फसल द्विदल की लेते हैं तब सहायक फसल एक दल की लेनी होती है।

फास्फोरस : जड़ों को फास्फोरस प्रदान करने वाले घटक के निर्माण के लिए सूर्य की ऊर्जा आवश्यक होती है। फास्फोरस के

तीन रूप होते हैं- एककणात्मक, द्विकणात्मक तथा त्रिकणात्मक।

जड़ों को एक कण की आवश्यकता होती है, वे द्विकण अथवा त्रिकण नहीं ले सकते। भूमि में एक कण नहीं होता, द्विकण और त्रिकण होते हैं। भूमि में द्विकण अथवा त्रिकण के रूप होने के बावजूद जंगल के पेड़-पौधों को फास्फोरस उपलब्ध होता है। इसका मतलब है कि जंगल की भूमि में ऐसा कोई तत्त्व है जिसने द्विकण/ त्रिकण फास्फोरस को एक कण में परिवर्तित करके जड़ों को उपलब्ध कराया। ये जीवाणु स्फुरदाणु हैं। इस जीवाणु का निर्माण भी देशी गाय की आंत में होता है। जो जीवामृत, घनजीवामृत के माध्यम से खेतों में जाकर जड़ों को फास्फोरस उपलब्ध कराते हैं।

पोटाश : पोटाश भूमि में अनेक कणों के समूह में होता है जबकि जड़ों को एक-कण के रूप में चाहिए। जंगल के पौधों में कोई पोटाश नहीं डालता लेकिन उनको पोटाश की कमी नहीं होती, इसका मतलब है कि उन्हें पोटाश मिल गया जबकि वहाँ पोटाश अनेक कणों के समूह में होता है। इस कार्य को करने के लिए प्रकृति ने वैसिलस सिलिकस नाम के जीवाणु को कार्य दिया है। यह जीवाणु भी देशी गाय की आंत में होता है।

16. आच्छादन

भूमि की ऊपरी सतह का ढकना 'आच्छादन' कहलाता है। भूमि की सजीवता और उर्वरा शक्ति को सुरक्षित और संरक्षित करने का कार्य आच्छादन करता है। आच्छादन करने से सूक्ष्म पर्यावरण का निर्माण होता है जिससे देशी केंचुए भूमि की ऊपरी सतह पर आकर अपनी विष्ठा डालते हैं और इससे भूमि में जीवद्रव्य का निर्माण होता है अर्थात् मिट्टी मुलायम व बलवान बन जाती है। इस मिट्टी में सभी प्रकार के जीवाणुओं की संख्या शीघ्रता से बढ़ती है। इन जीवाणुओं के कारण ह्यूमस को लू, शीत लहर, तीव्र वर्षा, तीव्र वायु और बाह्य शत्रुओं से सुरक्षित रखने के लिए आच्छादन की आवश्यकता होती है। आच्छादन 3 प्रकार के होते हैं–

1. मृदाच्छादन (मिट्टी का आच्छादन)
2. काष्ठाच्छादन
3. सजीवाच्छादन (आन्तरवर्तीय फसलें और मिश्रित फसलें)

मृदाच्छादन का अर्थ है भूमि की जुताई। भूमि की जुताई बैलों से जुड़े हल या कम वजन वाले ट्रैक्टर से जुड़े रोटावेटर से की जाती है क्योंकि हल्की जुताई से जीवाणुओं को कोई नुकसान नहीं होता। कड़ी धूप 36 डिग्री से ज्यादा तापमान होने पर भूमि से कार्बन उड़ना शुरू हो जाता है। साथ ही ह्यूमस के कण भी तेज हवा में उड़ना आरम्भ कर देते हैं। कड़ी धूप या अत्यन्त ठंड से भूमि का प्रसारण एवं संकुचन होता है जिससे भूमि में दरारें पड़ती हैं। इन दरारों में से नमी वाष्पोत्सर्जन क्रिया द्वारा हवा में चली जाती है, इससे भूमि में नमी की कमी हो जाती है और भूमि के जीवाणुओं व जड़ों को भारी नुकसान होता है। इस नुकसान को कम करने के लिए भूमि की हल्की जुताई की जाती है और भूमि की सतह

पर फसलों को काष्ठ से ढका जाता है जिससे नमी सुरक्षित रहे। जुताई के तीन उद्देश्य होते हैं-

(1) भूमि में हवा का संचारण करना जिससे जीव-जन्तु एवं जड़ों को ऑक्सीजन मिल सके।

(2) वर्षा का सम्पूर्ण जल भूमि में संगृहीत करना, जिससे जीव-जन्तु व जड़ों को नमी मिल सके।

(3) खरपतवारों का नियंत्रण करना।

जब हम खेतों में यूरिया डालते हैं तो न सिर्फ फसल बल्कि खरपतवार भी तेजी से बढ़ते हैं। प्राकृतिक कृषि में हम यूरिया नहीं डालते, उस कारण खरपतवार भी कम उगते हैं या कम गति से बढ़ते हैं। जैविक कृषि में भी हम देशी गाय के गोबर का खाद ट्रैक्टर-ट्राली से भारी मात्रा में डालते हैं जिससे बहुत से खरपतवार के बीज खेत में आ जाते हैं और कृषि का खर्च बढ़ जाता है।

सबसे उत्तम खरपतवार नाशक विधि काष्ठाच्छादन है। खरपतवारों के बीजों को अंकुरित होने के लिए सूर्य का प्रकाश चाहिए परन्तु जब हम भूमि पर काष्ठाच्छादन करते हैं तब खरपतवारों के बीजों को सूर्य का प्रकाश नहीं मिलता, इससे खरपतवारों के बीज अंकुरित नहीं होते। इस प्रकार हम खरपतवारों का नियंत्रण कर लेते हैं। आच्छादन से ह्यूमस के कण भी नहीं उड़ पाते और भूमि में ह्यूमस भी बढ़ जाता है जिससे भूमि सजीव बन जाती है। आच्छादन हवा की गति कम करता है जिससे ह्यूमस सुरक्षित रहता है। यह वर्षा की तेज गति को कम करता है जिससे भूमि पर गड्ढा नहीं बनता और ह्यूमस पानी में बहने से बच जाता है। तेज धूप से बचाकर ह्यूमस को सुरक्षित रखने में आच्छादन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण योगदान करता है। तेज धूप के कारण ह्यूमस जलकर

कार्बन डाईआक्साइड बनकर हवा में उड़ जाता है, इससे वैश्विक तापमान बढ़ जाता है।

किसी वर्ष यदि अकाल पड़ जाए तो भी आच्छादन हवा से नमी लेकर पौधों को सुरक्षित रखता है। जब हम एक दल व द्विदल फसलों के अवशेषों को मिलाकर भूमि की सतह पर आच्छादन करते हैं तब भूमि में ह्यूमस (जीवद्रव्य) का अच्छा निर्माण होता है। जीवद्रव्य की उपस्थिति से भूमि बलवान बनती है। 1 लीटर ह्यूमस हवा से 6 लीटर पानी सोख लेता है। इस कारण प्राकृतिक कृषि अकाल के समय में भी लहलहाती है अर्थात् अच्छा उत्पादन देती है क्योंकि जीवद्रव्य जड़ों का खाद्य भण्डार होता है। जड़ें जीवद्रव्य से पोषक तत्त्व लेती हैं और फसल के शरीर में संगृहीत कर देती हैं। जब हम भूमि पर सजीव आच्छादन करते हैं अर्थात् मिश्रित फसल लेते हैं और आन्तर फसल लेने के बाद फसल के शरीर का भूमि पर विघटन कर देते हैं तो उनके विघटित शरीर से मुक्त हुए पोषक तत्त्व हमारी फसल को मिल जाते हैं। प्राकृतिक कृषि में हमारी भूमि में जीवाणुओं की संख्या बढ़ने लगती है और जब जीवन-चक्र समाप्त होने पर जीवाणुओं का शरीर मिट्टी में मिल जाता है तब हमारी फसल को सभी प्रकार के पोषक तत्त्व मिल जाते हैं और हमारी फसल अच्छा उत्पादन देने में समर्थ हो जाती है।

प्राकृतिक कृषि में हम कोई भी खरपतवार नाशक दवा नहीं डालते हैं जिससे हमारी भूमि में वही खरपतवार पैदा होगा जो हमारी भूमि के लिए आवश्यक हो। उस खरपतवार के शरीर का जब विघटन होगा तब हमारी फसल को वे पोषक तत्त्व मिलेंगे, जिनकी आवश्यकता फसल को होती है। खरपतवार धरती माता का दर्पण होता है। खरपतवार के पौधों के पत्तों पर मित्र कीटों का

निवास होता है जो हानि पहुँचाने वाले कीटों का नाश कर देते हैं। इसी कारण प्रकृति स्वयं ही हानि पहुंचाने वाले कीटों का नाश कर प्राकृतिक संतुलन बना देती है। एक फसल के साथ जब हम अनेक फसलों को एक साथ लेते है और फसलों का विविधीकरण करते हैं तब हमारी फसलों पर मधुमक्खियां आती हैं और पराग सिंचन का कार्य करती हैं जिससे हमारी उपज बढ़ जाती है।

प्राकृतिक कृषि में हम खरपतवारों का विनाश नहीं करते परन्तु मुख्य फसल से छोटा कर देते हैं जिससे खरपतवार के पौधों में और मुख्य फसल के पौधों में कोई प्रतिस्पर्धा नहीं होती। मुख्य फसल के पत्ते सौर ऊर्जा लेने में आजाद होते हैं। मौसमी फसलों के लिए जुताई आवश्यक है लेकिन ट्रैक्टर से गहरी जुताई न करें क्योंकि प्राकृतिक कृषि में गहरी जुताई हमारे देशी केंचुए करते हैं जिससे हमारी फसल की जड़े बहुत गहराई तक जाती है। केंचुए भूमि में असंख्य छिद्र करते हैं जिस छिद्र को करते हुए वे ऊपर आते है, उसी छिद्र से दोबारा नीचे नहीं जाते बल्कि नया छिद्र बनाकर नीचे जाते हैं। केंचुए छिद्र को अपने शरीर से वार्निवाश करते जाते व आते हैं, जिससे भूमि बलवान बनती है। इस प्रकार आच्छादन करने से केंचुए अपने कार्य में लग जाते हैं। केंचुए की विष्ठा में सामान्य मिट्टी से 5 गुना ज्यादा नाइट्रोजन, 9 गुना ज्यादा फास्फोरस तथा 11 गुना ज्यादा पोटाश होता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आच्छादन मिश्रित फसलें, खरपतवार के पौधे, देशी केंचुए, फसलों के अवशेष व हल्की जुताई करने से भूमि बलवान, मुलायम व पानी को अपने में समाहित करने वाली बन जाती है व भूमि सजीव हो उठती है।

17. साथ बोयी जाने वाली फसलों का चुनाव कैसे करें?

1. यदि मुख्य फसल एक दल की है तब सहयोगी फसल द्विदल की होनी चाहिए।
2. यदि मुख्य फसल की जड़ गहराई में जाने वाली हो तब सहयोगी फसल ऐसी लेनी चाहिए जिसकी जड़ कम बढ़ने वाली हो।
3. सहयोगी फसल मुख्य फसल से कम आयु अर्थात् 1/3 या आधी आयु वाली हो अर्थात् मुख्य फसल से कम समय में तैयार होने वाली हो।
4. सहयोगी फसलों के पौधों की ऊंचाई की छाया मुख्य फसल के पत्तों पर नहीं पड़नी चाहिए।
5. सहयोगी फसल तेज गति से बढ़ने वाली व भूमि को जल्दी ढकने वाली हो।
6. यदि मुख्य फसल के पत्तों में सूर्य के प्रकाश को तीव्रता से सहन करने की शक्ति हो तो सहयोगी फसल जिनको कड़ी धूप नहीं चाहिए, ऐसी लेनी चाहिए।
7. यदि मुख्य फसल तेज गति से बढ़ने वाली हो तो सहयोगी फसल धीमी गति से बढ़ने वाली होनी चाहिए।
8. यदि मुख्य फसल पतझड़ वाली न हो तो सहयोगी फसल पत्तों को गिराने वाली होनी चाहिए।

18. वापसा और वृक्षाकार प्रबन्धन

कृषि वैज्ञानिक किसानों को बताते हैं कि पौधों की जड़ों को पानी चाहिए। वास्तव में जड़ों को पानी नहीं चाहिए बल्कि पौधों की जड़ों को नमी चाहिए अर्थात् वापसा चाहिए। भूमि के अन्दर मिट्टी के दो कणों के बीच जो खाली जगह होती है, उसमें पानी का अस्तित्व नहीं चाहिए बल्कि उस खाली जगह में 50 प्रतिशत वाष्प और 50 प्रतिशत हवा का सम्मिश्रण चाहिए। इस स्थिति को 'वापसा' कहते हैं। जब हम दो कणों के बीच पानी भर देते हैं तो वहाँ की हवा ऊपर निकल जाती है, इससे जड़ों व जीवाणुओं को ऑक्सीजन नहीं मिलता और वे मर जाते हैं या फसल पीली पड़ जाती है। कभी-कभी फसल सूख भी जाती है, इसलिए प्राकृतिक कृषि में पानी उतना देना चाहिए जिससे जड़ों के पास खाली जगह में वापसा रहे अर्थात् पानी न भरे।

वापसा का निर्माण : किसी भी पेड़-पौधे पर 12 बजे दोपहर में जो छाया पड़ती है, उसकी अन्तिम सीमा पर वापसा लेने वाली जड़े होती हैं। छाया के अन्दर वापसा लेने वाली जड़े नहीं होती। जब पानी छाया में भरता है, तब वापसा का निर्माण नहीं होता बल्कि जड़े सड़ने लगती हैं। इस नुकसान से बचने के लिए छाया से बाहर नाली निकालनी चाहिए व तने पर मिट्टी चढ़ानी चाहिए।

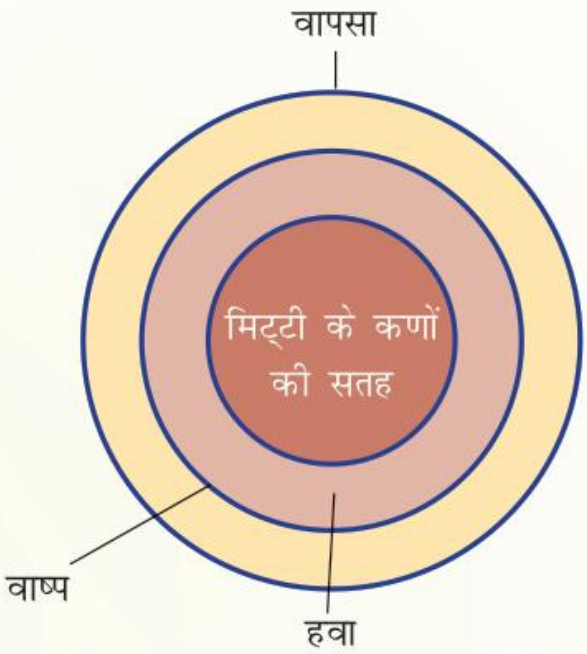

वृक्षाकार प्रबन्धन

1. हरे पत्ते प्रकाश-संश्लेषण क्रिया के माध्यम से जो खाद्य निर्मित करते हैं, वे खाद्य तनें में संगृहीत होते हैं। तना व पत्तों का आपस में हमेशा सम्पर्क रहता है। यदि पत्तों ने 100 किलो खाद्य निर्मित किया है लेकिन तने की गोलाई इतनी कम है कि उसमें केवल 70 किलो खाद्य निर्मित हो तो उस अवस्था में तना पत्तों से सम्पर्क करता है। तना छोटा है, 70 किलो खाद्य ही ले सकता है तो 70 किलो खाद्य भेजने की व्यवस्था करता है और अगले दिन पत्ता 70 किलो ही खाद्य का निर्माण करता है। यदि 100 किलो खाद्य संगृहीत कर लेता तो 30 किलो दाना मिलता लेकिन यदि पौधे 70 किलो ही खाद्य का निर्माण करते हैं तो स्वाभाविक रूप से हमारी फसल का उत्पादन कम होगा। इसका मतलब है कि हमें फसल बढ़ाने के लिए पत्तों द्वारा निर्मित सारा खाद्य तने में संगृहीत करने के लिए तने का आकार बढ़ाना चाहिए।

2. तने का आकार सीधा जड़ों से सम्बन्धित है। तने की गोलाई बढ़ाने के लिए जड़ों की गोलाई बढ़ानी चाहिए।

3. जब जड़ों की गोलाई बढ़ेगी तब जड़ों की लम्बाई भी बढ़ जायेगी।

4. जड़ की लम्बाई तब बढ़ेगी जब पानी जड़ से दूरी पर दिया जायेगा।

5. पौधों को 6 इंच दूरी से पानी देने से जड़ की लम्बाई बढ़ेगी और तने का आकार भी बढ़ेगा। इस प्रकार पौधे का आकार व शाखायें बढ़ जायेंगी। परिणामस्वरूप पत्ते ज्यादा भोजन का निर्माण करेंगे और इससे फसल का उत्पादन अधिक होगा।

19. सेब की बागवानी कैसे करें?

सेब का मूल स्थान हिमाचली वन व दक्षिण-पूर्व एशिया है। भारत में सेब का उत्पादन हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल, पंजाब व जम्मू-कश्मीर में होता है। सेब का पेड़ 35 फुट तक ऊंचा बढ़ने वाला, चौड़े पत्ते वाला, गोलाकार बढ़ने वाला पतझड़ी होता है।

हवामान : सेब समशीतोष्ण प्रदेशों में उत्पादन देने वाला पेड़ है। सेब की अच्छी अभिवृद्धि व अच्छी गुणवत्ता के लिए ठंड की आवश्यकता पड़ती है। सेब के पेड़ पर फल आने के समय तापमान 21.1 डिग्री से 26.7 डिग्री होना आवश्यक है।

जमीन : पानी का पर्याप्त रिसाव, उर्वरा, पानी का जमाव न होना - इन विशेषताओं से युक्त जमीन सेब के लिए उपयुक्त होती है।

किस्में : सेब की अनेक प्रजातियाँ हैं और उनके अनुसार उनकी उत्पादन क्षमता भी अलग-अलग है। इन किस्मों में कुछ महत्त्वपूर्ण किस्में निम्न प्रकार की हैं- 1. मालस बंकाटा 2. मालस कारोनेरिया 3. मालस आयोन्सीस 4. मालस "यूमिला 5. मालस सिन्टहेस्ट्रिस।

इन किस्मों को सन् 1887 में अलेक्जेन्डर कोटस ने हिमाचल प्रदेश में शिमला के पास लगाया था।

हिमाचल प्रदेश की किस्में : रेड डेलिसियस, गोल्डन डेलिसियस, ओरेस्टर, पिअरमेन, न्यूटन वंडर, कॉक्स ऑरेंज पिप्पीन, किंग आफ पिप्पीन्स, स्टार किंग आदि।

सहयोगी फसलें : नाशपाती, स्ट्रॉबेरी, दलहन बीन्स आदि।

ढलान पर सीढ़ियां बनाना और अभिवृद्धि : हिमालयन पहाड़ियों में ज्यादा ढलान होती है। जब भी हम सेब के पौधे लगाते हैं तब हमें ध्यान रखना चाहिए कि ढलान के विरुद्ध नाली तैयार करें। ऐसा इसलिए करते हैं ताकि पानी को रोका जाए, पानी रोकने से भूमि का ह्यूमस रुकता है। पहाड़ी के तलहटी से ऊपर जाते हुए गोलाकार सीढ़ियों का निर्माण करें। इन सीढ़ीयों में काष्ठ पदार्थ डाल दें और निश्चित अन्तर पर निशान लगाएं। वहां 1.5 x 1.5 x 1.5 फुट के खड्ढे खोदिए, खड्ढे भरने के लिए चार हिस्से मिट्टी, दो हिस्से छना हुआ गोबर, एक हिस्सा घनजीवामृत मिलायें। यह मिश्रण तैयार रखें। साथ-साथ हर दो सेब के बीच एक और चार सेबों के बीच एक उसी आकार के खड्ढे सहयोगी फसल नाशपाती लगाने के लिए खोदें। अब एक साल पहले क्राफ्ट की सेब की कलम को खड्ढे में डालकर उस तैयार मिश्रण से अच्छी तरह दबाएं और बाद में हल्का पानी दें। इसी प्रकार नाशपाती की एक वर्ष पूर्व क्राफ्ट की हुई कलम किसी भी खड्ढे में रखकर तैयार मिश्रण से अच्छी तरह दबाएं और बाद में हल्का पानी दें। कलम लगाते समय इस बात का ध्यान दें कि कलम की जड़ भूमि के सतह से एक फुट ऊपर आनी चाहिए।

सेब और नाशपाती के बीच में स्ट्रॉबेरी के तने के टुकड़े लगायें और जहां भी रिक्त स्थान दिखाई देता हो वहाँ आपके क्षेत्र में जो भी दलहन की फसल आती हो उसके बीज लगाएं। यदि आवश्यकता पड़े तो कलम को सहारा देने के लिए बांस गाड़ दें।

जीवामृत : कलम लगाने के बाद निरन्तर महीने में एक या दो बार पानी के सिंचन के साथ 200 से 400 लीटर जीवामृत दें। यदि सिंचन नहीं है तो पौधों के पास भूमि पर थोड़ा-थोड़ा जीवामृत महीने में एक या दो बार डालें। साथ-साथ शुरू से ही महीने में

एक बार 5 प्रतिशत से 10 प्रतिशत तक जीवामृत का स्प्रे भी करें। साल में एक बार पौधों के पास घनजीवामृत भी डालते रहें।

आच्छादन : सेब के बगीचे में जहाँ भी खाली जगह मिले वहां पर काष्ठाच्छादन करते रहें। आप जितना भी काष्ठ पदार्थ बिछाएंगे, उतनी ही अच्छी फसल का उत्पादन होगा।

छटाई : जब-जब सेब सुप्तावस्था में जाते हैं और धूप कड़ी होती है तब अनावश्यक उप-डालियों और खड़े ऊपर बढ़ने वाले अंकुर निकाल देने चाहिए। इससे पेड़ को सही आकार प्रदान किया जाता है। इस छटाई से फसल का उत्पादन बढ़ता है, फलधारण की क्षमता बढ़ती है तथा फलों की गुणवत्ता बढ़ती है। छटाई के बाद एक कपड़े से नीम पेस्ट लगायें।

फलों की थिनिंग : सेब के फल बहुत बड़ी मात्रा में लगते हैं लेकिन यदि इन सभी फलों को बढ़ने दिया जाए तो फलों का ठीक से विकास नहीं होगा। कम विकसित फलों के दाम भी कम मिलेंगे अत: फलों के प्रत्येक गुच्छे में एक या दो फल रखें और शेष निकाल दें। थिनिंग हाथ से करें, इसके करने में रसायनों का प्रयोग न करें। फल गिरना एक आम बात है। पकने से पहले फल गिरने के कई कारण होते हैं। फलधारण की शुरूआत में बारीक फल गिरते हैं, वे पराग सिंचन न होने से होते हैं। जून महीने में प्राकृतिक तापमान में अचानक परिवर्तन के कारण फल गिरते हैं और फलों को तोड़ने से पहले भी फल गिरते हैं। तापमान में अचानक वृद्धि या अचानक गिरावट, लगातार घने बादलों से आकाश के ढक जाने से सूर्य के प्रकाश का पत्तों को उपलब्ध न होना, भूमि में किसी सूक्ष्म खाद्य तत्त्व की कमी के कारण, पोषक तत्त्व का जड़ों को उपलब्ध न होना, फल-पोषण के लिए आरक्षित खाद्य पर्याप्त

मात्रा में न होना, रासायनिक खादों का आवश्यकता से अधिक प्रयोग होना, फलों के गिरने के कारण होते हैं लेकिन कम लागत प्राकृतिक कृषि में फल गिरते नहीं हैं।

फलों को तोड़ना : जब फलों का रंग हरे से पीला होने लगे तब फलों को तोड़ना चाहिए। फल तोड़ने की शुरूआत शाखाओं के पिछले हिस्सों से करनी चाहिए और अन्त में अग्रभाग की ओर के फल तोड़ने चाहिए। फल पर्णदण्ड (डण्ठल) के साथ ही तोड़ने चाहिए।

उत्पादन : सेब का एक पेड़ औसतन 30 से 50 किलो फल देता है।

20. सब्जियों की खेती कैसे करें?

आजकल हम जिस तरह फसल लेते हैं, वह आमतौर पर गलत है क्योंकि न तो वहाँ सिंचन का नियंत्रण होता है और न ही सहजीवी फसलों या पौधों को लगाया जाता है। आज की सब्जियाँ जहर से युक्त हैं। ये जहर शरीर में जमा हो जाते हैं जो अनेक बीमारियों के कारण बनते हैं जैसे डायबिटीज, कैंसर, दिल के रोग, महासंहारक रोग। इन सबसे मुक्ति पाने के लिए जहर मुक्त खेती एकमात्र उपाय है।

खेत की तैयारी : जब हम किसी भी सब्जी को लगाते हैं, तो उसमें हम हरी खाद के रूप में ढैंचा, किसी भी दलहन जैसे लोबिया, मूंग, उड़द आदि को मिट्टी में मिलाते हैं और साथ ही खेत का पलेवा करते हुए एक एकड़ में 200 लीटर जीवामृत पानी के साथ छोड़ते हैं। मिट्टी के बातर आते ही हम मिट्टी को हल्की व बारीक करें ताकि मिट्टी में अच्छी तरह से बेड (Row) बनाये जा सकें। अंतिम बुआई करते समय 400 कि.ग्रा. घनजीवामृत को डालकर सवागा (फंटा) लगायें और बाद में उत्तर-दक्षिण दिशा में पंक्तियां निकालें।

बीज-संस्कार : सब्जी के अच्छे उत्पादन के लिए बीजों को बीजामृत से संस्कारित करें। बीजों को संस्कारित करने से बीजों में अच्छा अंकुरण आएगा और अच्छी फसल के रूप में अच्छा उत्पादन मिलेगा। बीजों को बीजामृत में डुबोएं और सामान्य बीजों को 6-7 घंटे और कुछ विशेष बीजों को 12-14 घंटे तक डुबोएं। जैसे - करेले का बीज, टिंडे का बीज सही समय के बाद उन्हें निकालें। उन्हें छाया में सुखाएं। उसके बाद बीजों को खेत में रोपित करें।

सावधानियां : 1. जब हम पहले वर्ष रासायनिक खेती से प्राकृतिक खेती में आते हैं तब हम उन सब्जियों को लगायें जो कम रासायनिक खादों का प्रयोग करके अच्छा उत्पादन प्रदान करती हैं। जैसे-जैसे आपकी भूमि बलवान होगी, आप अधिक रासायनिक खाद खाने वाली सब्जियाँ भी ले पाएंगे। इस प्रकार हम पहले वर्ष मिट्टी को सजीव बनाने का प्रयास करें।

2. सब्जियों की फसल लेने से पहले हरी खाद के रूप में ढैंचा या द्विदल, दलहन की फसल लें।

3. उत्तर से दक्षिण दिशा में पंक्तियां निकालें।

4. एक दल वाली सब्जियों के साथ द्विदल वाली सब्जियां एक साथ लगायें।

5. सही समय पर जीवामृत फसल को देते रहें।

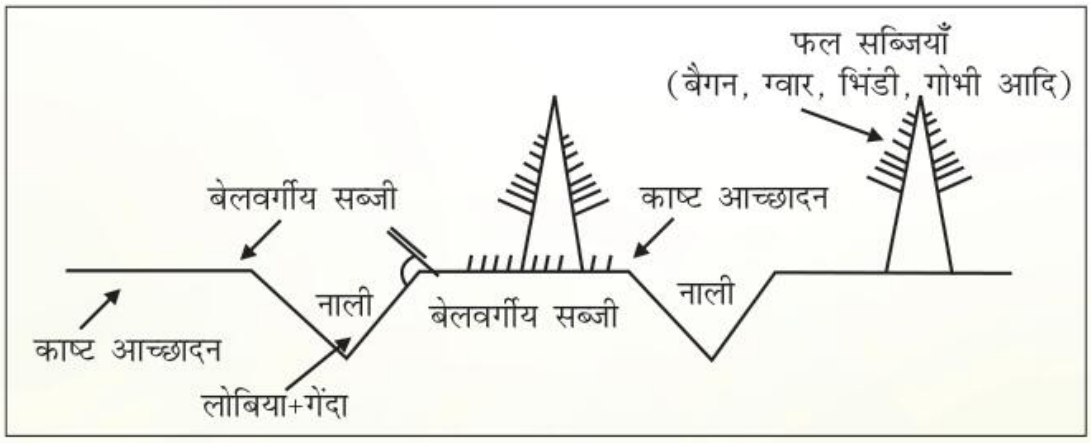

विधि : यदि आप दो पौधों के बीच 2 फीट का अन्तर रखते हैं तो 4 फीट अन्तर पर और यदि 2.5 फीट अन्तर रखते हैं तो 5 फीट अन्तर पर और यदि 3 फीट अन्तर रखते हैं तो 6 फीट अन्तर पर क्यारियां (नालियां) निकालें।

चौड़े बेड की सतह पर जीवामृत छिड़कें और प्रति एकड़ 100 किलो देशी गोबर खाद के साथ 20-25 किलो घनजीवामृत

मिलाकर बेड की सतह पर छिड़क दें और अन्त में उस पर काष्ठ-आच्छादन कर दें। नालियों में पानी और पानी के साथ जीवामृत छोड़ दें। दो दिन बाद बेड के अन्तर्गत वापसा आ जाएगा। बाद में नाली के दोनों ढलान पर ऊपर बेल वर्गीय सब्जियां जैसे टमाटर, ककड़ी, तोरी, पेठा, करेला, लौकी, तरबजू, खरबूजा इनके बीज बीजामृत संस्कार करके भूमि को हल्का छेद करके उसमें डाल दें और मिट्टी से ढक दें। इन ढलानों पर थोड़ा नीचे दोनों ओर लोबिये के बीज लगा दें और गेंदा की रोप लगा दें। इस नाली में पानी दें। पानी के साथ जीवामृत दें। चार-पांच दिन में केषाकर्षण (पृष्ठतनाव Capillary Action) से नाली में से नमी चौड़े बेड के अन्दर ऊपर तक पहुंच जाएगी। आच्छादन और जीवामृत केषाकर्षण शक्ति को शीघ्रता से काम में लायेगा। बीज डालने के सात दिन बाद चौड़े बेड की सतह पर बिछाए आच्छादन में बेड के नीचे बीच में लोहे की रॉड से छेद करके और रॉड को चारों ओर हिलाकर उसे निकाल लें, तत्पश्चात् उस छेद में बैंगन, गोभी या मिर्च का रोप लगायें अथवा भिंडी या गंवार के बीज उस छेद में डालें। भूमि के अन्तर्गत नमी से ये बीज छेद में से निकलकर अपने-आप ऊपर आ जाएंगे और बढ़ने लगेंगे। सात से दस दिन के बाद नाली में से पानी दें और इस पानी के साथ महीने में एक या दो बार जीवामृत भी दें। महीने में एक या दो बार सभी पौधों पर जीवामृत का 5 प्रतिशत से 10 प्रतिशत तक छिड़काव करें। वर्षाकाल में सिंचाई की आवश्यकता नहीं हो तब थोड़ा-थोड़ा जीवामृत सीधा भूमि की सतह पर, पौधों के पास डालें। जैसे-जैसे नाली में लगाई सब्जियों की लताएं बढ़ेगी, वैसे-वैसे चौड़े बेड पर बिछाए हुए आच्छादन पर चढ़ा दीजिए। गेंदा और लोबिया साथ-साथ बढ़ेंगे। आच्छादन और जीवामृत दोनों के प्रभाव से केंचुए अपने-आप कार्यरत हो जाएंगे

और अपनी विष्ठा के माध्यम से सभी प्रकार के पौधों के अन्न भंडार को खोल देंगे। लोबिया हवा में से जितनी आवश्यकता होगी, उतना नाइट्रोजन लेगा और सब्जियों को देगा। लोबिया और गेंदा पर मित्र कीट आकर बसेंगे और हानि पहुंचाने वाले कीटों का नियंत्रण करेंगे। गेंदा अपनी ओर बहुत सारी मधुमक्खियों को खींचेगा और इससे सब्जियों के फूलों में पराग सिंचन हो जाएगा। साथ-साथ गेंदा और लोबिया हमें पैसा भी देंगे। गेंदा सब्जियों के जड़ों पर निवास करके उनका रस चूसने वाले नेमाटोड का नियंत्रण करेगा। बेड पर लगाये गये फल-सब्जियों के पौधे सब्जियों की बेल को आवश्यक छाया देंगे, हवा को सोखकर पत्तों की खाद्य निर्माण की गति को भी बढ़ाएंगे। भूमि को उर्वरा बनाएंगे, और हमें उत्पादन भी देंगे। सब्जियों की बेल जब काष्ठ आच्छादन पर फैलेंगी, तब सब्जियों के फल आच्छादन पर रहेंगे, उन्हें मिट्टी नहीं लगेगी तो मिट्टी के संसर्ग से खराब नहीं होंगे।

अगर कोई कीट या बीमारी आती है तो नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र, अग्न्यस्त्र, छाछ, सोंठास्त्र का प्रयोग करें। खरपतवार निकालें। आच्छादन के कारण बेड पर खरपतवार नहीं आएंगे। केवल नाली में से पानी देना है और भूमि आच्छादन से ढकी हुई है तो 90 प्रतिशत सिंचाई के पानी की बचत होगी। उतनी ही बचत बिजली और मजदूरी की होगी।

मैंने यहां जिन सहयोगी फसलों का नाम दिया है वे सभी सहजीवी हैं और एक-दूसरे के बढ़ने में सहयोग देने वाली हैं। आपको दशहरा, दीपावली के पर्व पर गेंदा के फूल बेचने के लिए मिल जाएंगे। साथ-साथ लोबिया की हरी फलियां आपको प्रारम्भ से ही निरन्तर पैसा देती रहेंगी। बेड पर बीच में लगायी फल-सब्जी के पौधे और मुख्य बेल सब्जी आपको अन्त तक पैसा देंगे। यदि

आप जीवामृत का सही उपयोग करेंगे तो आपको कोई कीट हानि नहीं देगा और इतने फल देंगे कि आप तोड़ नहीं पायेंगे। यह वास्तविकता है कि आपकी वह सब्जी विषमुक्त और सम्पूर्ण पोषण से भरी हुई होगी। औषधि और अमृत होगी। मंडी में आप एक बैनर लगायें- **'विषमुक्त प्राकृतिक सब्जी खाइये, कैंसर जैसे रोगों से मुक्ति पाइये'** इससे आपको दोगुने दाम मिलेंगे।

जीवामृत का उपयोग : 1. रोपण के तुरन्त बाद एक एकड़ भूमि में 200 लीटर जीवामृत पानी के साथ दें।

2. महीने में दो बार 200 लीटर जीवामृत पानी के साथ दें, जब तक फसल चलती रहे।

3. सब्जी की एक फसल में लगभग 6 बार पानी के साथ जीवामृत देने की आवश्यकता पड़ती है लेकिन यदि फसल पीली पड़े तब 10 प्रतिशत गोमूत्र का स्प्रे करें।

जीवामृत का स्प्रे के रूप में प्रयोग - एक एकड़ भूमि में

पहला स्प्रे - रोपण के एक महीने बाद 5 लीटर जीवामृत को 100 लीटर पानी के साथ स्प्रे करें।

दूसरा स्प्रे - पहले स्प्रे के 21 दिन बाद 7.5 लीटर जीवामृत को 120 लीटर पानी के साथ स्प्रे करें।

तीसरा स्प्रे - दूसरे स्प्रे के 21 दिन बाद 10 लीटर जीवामृत को 150 लीटर पानी मिलाकर स्प्रे करें।

चौथा स्प्रे - तीसरे स्प्रे के 21 दिन बाद 15 लीटर जीवामृत को 150 लीटर पानी मिलाकर स्प्रे करें।

पांचवा स्प्रे - चौथे स्प्रे के 21 दिन बाद 3 लीटर खट्टी छाछ में 100 लीटर पानी मिलाकर स्प्रे करें।

छठा स्प्रे - पांचवे स्प्रे के 21 दिन बाद 15 लीटर जीवामृत को 150 लीटर पानी मिलाकर स्प्रे करें।

कीट व बीमारियां : जब भी हमारी सब्जियों पर कोई भी कीट लगता है तब हमें नीचे लिखी हुई दवाओं का प्रयोग करना चाहिए–

क) **रस चूषक कीटः** रस चूषक कीटों के लिए निम्बास्त्र का प्रयोग करें।

ख) **नीम के तेल** का भी प्रयोग कर सकते हैं। 1500 पीपीएम नीम के तेल की मात्रा 2 मिली प्रति लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें।

ग) **इल्ली (सुंडी) :** 3 लीटर ब्रह्मास्त्र 100 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ में स्प्रे करें।

घ) **तना बेधक, फल बेधक, सुंडी के लिएः** 3 लीटर अग्न्यस्त्र को 100 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ फसल पर स्प्रे करें।

ड) **फफूंद (फंगल) बीमारी :** फफूंद (फंगल) व विषाणुओं से फैलने वाले रोगों की रोकथाम के लिए 3 लीटर खट्टी छाछ में 100 लीटर पानी मिलाकर स्प्रे करें। खट्टी छाछ 3 से 4 दिन पुरानी होनी चाहिए।

21. गन्ने का उत्पादन कैसे करें?

गन्ना तृणवर्गीय ग्रामीण परिवार का बहुवर्षीय सदस्य पौधा है। बहुवर्षीय होने का अर्थ है कि जिसे एक बार लगाने के बाद दोबारा लगाने की आवश्यकता नहीं पड़े। ऐसे ही अनेक वर्षों तक उत्पादन मिलता रहे। गन्ना पारिवारिक पौधा है। यदि हम इसकी एक आंख लगाते हैं तो उस आंख से अनेक पौधे निकल आते हैं और परिवार बनाते हैं। एक परिवार में अधिक से अधिक 108 पौधे निकल सकते हैं लेकिन सभी पौधे गन्ने का रूप नहीं ले सकते, रासायनिक कृषि में एक आंख से 6–7 गन्ने के पौधे निकलते है जबकि प्राकृतिक कृषि में एक आंख से 15 से 21 तक गन्ने के पौधे हमें प्राप्त होते हैं।

समयः अगस्त से लेकर 10 नवम्बर तक।

जुताईः खेत की भूमि को गन्ना उत्पादन लेने से पहले समतल करें। समतल करने के बाद 400 लीटर जीवामृत पानी के साथ देकर पलेवा करें। पलेवा बातर आते ही हल्की जुताई करें। अन्तिम जुताई के समय 400 कि.ग्रा. घनजीवामृत भूमि में मिला दें। उसके बाद उत्तर–दक्षिण दिशा में पंक्ति निकाल दें।

बीज के लिए गन्ने का चुनावः बीज के लिए 8–9 महीने पुराने खेत का गन्ना चाहिए। इसमें 12 प्रतिशत चीनी की मात्रा चाहिए। पौधे का रंग हरा व उसकी आंख ऊभरी हुई होनी चाहिए। पूरा गन्ना हरा व स्वस्थ होना चाहिए। किसी भी प्रकार का कीट उस पर लगा नहीं होना चाहिए। एक गन्ना सबसे अच्छे खेत का चुने, एक एकड़ के लिए एक ही गन्ने की आवश्यकता पड़ती है। यदि हो सके तो प्राकृतिक कृषि में तैयार गन्ने का प्रयोग करें। इसमें 30 प्रतिशत उत्पादन अधिक मिलेगा। गन्ने से बीज आंख इस

प्रकार निकालें कि आंख के पीछे का चौड़ा भाग 2/3 और आंख के सामने का भाग 1/3 हो क्योंकि गन्ने का अंकुरण बीच के खाद्य से होता है। अंकुरण के समय पहले अंकुर पिछले हिस्से से खाद्य लेता है और उसकी समाप्ति के बाद अगले हिस्से से खाद्य लेता है। एक एकड़ बीज के लिए एक गंठा जमीन की आवश्यकता पड़ती है। (लगभग 1089 वर्ग फीट जगह) जुताई करने से पूर्व फसल के अवशेष एक स्थान पर एकत्र करें। खेत को कड़ी धूप में सुखा लें। अन्तिम जुताई से पूर्व 10 किलो घनजीवामृत छिड़क दें और बाद में 8 गुना 8 फुट अन्तर पर लाइन (Row) निकाल लें। एक गुंठे में चार रॉ आएंगी।

बीज कोषः चुने हुए एक गन्ने से 16 स्वस्थ बीज आंख निकालें। उसके बाद बीजामृत से संस्कार करके हर चौराहे पर एक आंख लगायें। बीच में लोबिया, मिर्च, गेंदा, प्याज, चना आदि सह-फसलें लगायें। बाद में पानी के साथ जीवामृत दें और आवश्यकता पड़ने पर जीवामृत का स्प्रे व कीट पर नियंत्रण का प्रबंध करें। प्रत्येक आंख से 12-48 गन्ने मिलेंगे। 16 आंखों से कुल 192 गन्ने मिलेंगे। इनमें से स्वस्थ्य 171 गन्ने की आवश्यकता होगी।

गन्ने के बीज की मात्राः 171 गन्ने या 2.5 क्विंटल बीज।

गन्ने के बीज की किस्मः उत्तर भारत में जे-85, सीओ-118, सीओ-88 आदि मिल द्वारा अनुमोदित सभी किस्में लगायी जा सकती हैं।

गन्ना लगाने से पहले की तैयारीः संभव हो सके तो गन्ने की फसल लेने से पूर्व दलहन की फसल लें।

गन्ना लगाने की विधि : गन्ने लगाने से पहले 2 फुट पर उत्तर-दक्षिण दिशा में लाईन खुड़ निकालने हैं या ढलान के विरुद्ध

दिशा में निकाली गई नाली की चौड़ाई 2 फुट होगी। एक पैड में चार नालियां होंगी। नाली को क्रमानुसार नाम 1,2,3,4 रखें।

नाली नं 1 : बायें तरफ एक आंख के गन्ने का बीज लगायें। 2 गन्ने की आंखों में 2 फुट का अन्तर रखें। ढलान के ऊपरी हिस्सों में दोनों तरफ प्याज लगायें। प्याज के पत्तों का आकार पिरामिड जैसा होने से यह सबसे ज्यादा सौर ऊर्जा संगृहीत करता है।

नाली नं 2: गन्ने की तरफ लोबिया, उड़द, मूंग, मेथी, चना जैसी दलहन के बीज डालें। दायीं तरफ मिर्च व गेंदा लगायें। दोनों के बीच 6 इंच का अन्तर रखें।

नाली नं 3: दोनों तरफ सब्जी, अनाज, तिलहन लगायें।

नाली नं 4: गन्ने की तरफ दलहन लगायें और बायीं ओर मिर्च व गेंदा लगायें।

जीवामृत: गन्ना लगाने के बाद 200 लीटर जीवामृत प्रति एकड़ महीने में एक या दो बार दें।

गन्ना लगाने की दूसरी विधि

यह विधि उत्तर भारत में ज्यादा प्रचलित है क्योंकि इस विधि में श्रम कम लगता है। इस विधि में छोटे ट्रैक्टर द्वारा श्रम का सारा कार्य आसानी से सम्पन्न हो जाता है।

इस विधि में 4 फुट के अन्तर के बेड तैयार किये जाते हैं। प्रत्येक बेड का अन्तर 4 फुट होता है। बेड की दो पंक्तियों में गन्ना लगाया जाता है। उसके 4 फुट के तीन बेड निकाले जाते है। इन तीन बेड़ों पर बेड नंबर 1 पर सभी मौसमी सब्जियां लगायी जाती हैं। बेड नंबर 2 पर सभी मौसमी दलहन की फसलें लगायी जाती हैं। बेड नंबर 3 पर फिर सभी मौसमी सब्जियां लगायी जाती

हैं। बेड नंबर 4 के सी तथा डी बिन्दु पर गन्ना लगाया जाता है। बेड नंबर 4 के ऊपरी हिस्सों पर प्याज या लहसुन लगाया जाता है। आरम्भ में 3 महीनों में हर बेड पर पानी दिया जाता है परन्तु 3 महीने के बाद या 4 फुट गन्ना हो जाने के बाद बेड नंबर 0 व बेड नंबर 4 का पानी बंद कर दिया जाता है। 3 महीने के बाद आन्तर फसलें निकल जाती हैं। गन्ने की सहयोगी फसल निकल जाने के बाद गन्नों को अच्छी सौर ऊर्जा प्राप्त होती है, जिससे गन्ने का अच्छा उत्पादन मिलता है।

इस विधि में गन्ने की फसल में मानव श्रम कम लगता है और सारा कार्य छोटे ट्रैक्टर से किया जाता है। इसमें लागत कम आती है। यह कम खर्चीली होने के कारण उत्तर भारत में अधिक प्रचलित पद्धति है। इस विधि में प्राय: गन्ना गिरता नहीं क्योंकि गन्ने की दो पंक्ति आपस में जोड़ दी जाती हैं। गन्ने की फसल जब 5-6 फुट ऊंची हो जाती है तो ट्रैक्टर की सहायता से मिट्टी चढ़ायी जाती है। मिट्टी चढ़ने से वापसा अच्छी आती है और गन्ने की फसल तूफान में नहीं गिरती क्योंकि जब गन्ने की फसल गिरती है तो 30 प्रतिशत उत्पादन कम हो जाता है। इस विधि में गन्ने का उत्पादन खर्च सहायक फसलों से निकल जाता है। मुख्य फसल बोनस के रूप में मिल जाती है।

छिड़काव की समय सारणी

क्र.सं.	समय	मात्रा (प्रति एकड़)
1	गन्ना लगाने के एक महीने बाद	100 लीटर पानी + 5 लीटर छाना हुआ जीवामृत
2	पहले छिड़काव के 21 दिन बाद	150 लीटर पानी + 10 लीटर छाना हुआ जीवामृत

3	दूसरे छिड़काव के 21 दिन बाद	200 लीटर पानी + 20 लीटर छाना हुआ जीवामृत
4	तीसरे छिड़काव के 21 दिन बाद	200 लीटर पानी + 5 लीटर खट्टी छाछ
5	चौथे छिड़काव के 21 दिन बाद	200 लीटर पानी + 20 लीटर छाना हुआ जीवामृत
6	पांचवे छिड़काव के 21 दिन बाद	200 लीटर पानी + 20 लीटर छाना हुआ जीवामृत

सह-फसलें : दलहन गन्ने और मिर्च को व अन्य फसलों को नाइट्रोजन देगा। गन्ने की आयु को अगर हमने तीन भागों में बांटा तो पहला हिस्सा 4 महीने बाल्यावस्था होती है। इन 4 महीनों में गन्ना तेजी से नहीं बढ़ता लेकिन जड़ें तेज गति से बढ़ती हैं और पौधों को एक आधार देती हैं। अगले 4 महीने गन्ने की युवावस्था होती है। इसमें गन्ना तेज गति से बढ़ता है। बाल्यावस्था में ली गई सहयोगी फसलें गन्ने की फसल के लिए पोषक तत्त्वों का भण्डार का कार्य करती हैं। पहले चार महीने की सहयोगी फसल लेने के बाद गन्ने पर सूर्य की रोशनी अच्छी पड़ती है जिससे गन्ने का उत्पादन बढ़ता है। गन्ने को दक्षिण की ओर लगाना चाहिए क्योंकि 21 जून से 20 दिसम्बर तक के इस दक्षिणायन काल में सूर्य की किरणें दक्षिण की ओर से आती हैं और गन्ने के पत्ते पर उपलब्ध रहती हैं। गन्ने को उत्तर-पूर्व दिशा में लगाने पर एक ही दिशा से सूर्य का प्रकाश मिलता है, ढलान अधिक है तो दिशा को ध्यान में रखते हुए ढलान के विरुद्ध गन्ना लगाया जाता है। इससे वर्षा का सम्पूर्ण जल मिट्टी में समा जाता है।

जल प्रबंधन : गन्ना लगाने के बाद पहले 3 महीने हर नाली में पानी देना है। 3 महीने के बाद नाली संख्या 1 का पानी बंद कर

देना है, तब तक गन्ना लगभग 4 फुट का हो जाता है। अगले 3 महीने के बाद नाली संख्या 3 में पानी देना है और सभी नालियों का पानी बन्द करना है क्योंकि जब हम पानी को दूरी से देते हैं तो पौधों की जड़े पानी की खोज में आगे बढ़ने लगती हैं। लम्बाई बढ़ने से पौधे की जड़ों की गोलाई बढ़ेगी, गोलाई बढ़ने से गन्ने का तना मोटा होगा, तना मोटा होने से पौधों की ऊंचाई बढ़ेगी, ऊंचाई बढ़ने से गन्ने का उत्पादन बढ़ेगा। इससे कम से कम प्रति एकड़ 40 हजार स्वस्थ गन्नों का उत्पादन होगा।

रटूना पेढी : गन्ना काटने के बाद गिरे हुए पत्तों को सूखने दें। बाद में नाली संख्या 4 में नाली संख्या 2 के पत्तों को उठाकर डाल दें। इसी प्रकार नाली संख्या 1 के पत्ते नाली संख्या 3 में डाल दें। आच्छादन डालते समय ध्यान रखें कि गन्ने के खूट न दबें। इसे अंकुरण के लिए खाली छोड़ दें। नाली संख्या 2 व नाली संख्या 4 में दलहन के बीज लगा दें, इससे फसल का उत्पादन बढ़ेगा।

कीट प्रबंधन : जब भी फसल पर कोई कीट व कीट के अण्डे दिखाई दें तो 3 लीटर ब्रह्मास्त्र और 3 लीटर अग्न्यस्त्र दोनों 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

बीमारी : जब भी गन्ने की फसल पीली दिखाई दे या फंगस दिखाई दे तब 3 लीटर खट्टी छाछ में 150 लीटर पानी मिलाकर छिड़काव करें।

खरपतवार नियंत्रण : गन्ने की फसल में पहले 3 महीने कोई भी खरपतवार पैदा न होने दें। इसके लिए समय-समय पर निराई-गुड़ाई करते रहें परन्तु 3 महीने के बाद यदि खरपतवार रहता है तब उस खरपतवार को फसल से नीचे काट दें और वहीं पर आच्छादन कर दें। ऐसा करने से खरपतवार फसल की मदद करता है और गन्ने का अच्छा उत्पादन मिलता है।

22. सहजन (सहिजन, मुनगा)
(DRUM STICK)

फलदार वृक्षों की बागवानी में सहजन की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सहजन बड़ी तेजी से बढ़ने वाला वृक्ष है। उसकी जड़ों के माध्यम से वातावरण से पर्याप्त मात्रा में नाइट्रोजन पड़ोसी फलदार वृक्षों को उपलब्ध होता है। इससे आच्छादन के लिए पर्याप्त मात्रा में काष्ठ पदार्थ मिलता है। सहजन मुख्य रूप से लगाये गये फलदार वृक्षों को आवश्यक छाँव (छाया) भी उपलब्ध कराता है तथा वायुरोधक भी बनता है।

सहजन के कोमल हरे पत्तों की और सफेद फूलों की सब्जी बनती है जो अत्यन्त पौष्टिक होती है। पालतू पशुओं को इसके पत्ते खिलाये जाते हैं जिससे दुग्धदायक पशुओं का दूध बढ़ता है। फरवरी-मार्च (माघ-फाल्गुन) के महीने में इस पर फूल लगते हैं और अप्रैल-मई (चैत्र-वैशाख) के महीने में फलियाँ लगती हैं। सहजन की फलियाँ विटामिन्स के भण्डार हैं। फलियों की लम्बाई दो से ढाई फीट होती है। उसके अन्दर गूदा भरा होता है। फली का रंग हरा होता है और उस पर ताम्रवर्णीय आभा होती है। वर्ष में दो बार इसका उत्पादन मिलता है जिससे प्रारम्भ से ही प्रति एकड़ दस हजार से लेकर पचास हजार तक का उत्पादन मूल्य हमें प्राप्त होता है। एक बार इसे लगाने से तीन-चार वर्ष तक उत्पादन मिलता रहता है। मुख्यरूप से लगाये गये फलदार वृक्षों के शैशवकाल में ही इससे हमें धन मिलना शुरू हो जाता है।

सहजन के वृक्ष की जड़ों में से जो द्रव्य पदार्थ स्रवित होता है उसमें सूत्र कृमिनाशक गुण होता है। सहजन के पत्ते, डालियाँ,

छाल और बीजों में कृमिनाशक गुण होते हैं। इसके पत्तों के रस में सूक्ष्म जन्तु-नाशक तथा कवक-नाशक गुण भी होते हैं।

जल को शुद्ध करने के लिए सहजन के बीजों का पाउडर अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ है। ग्रामीण जनता जल को शुद्ध करने के लिए फिटकिरी का प्रयोग करती हैं। जहाँ इसके प्रयोग से जल में उपस्थित सूक्ष्म जीव मरते हैं वहीं फिटकिरी में उपस्थित एल्यूमीन नामक जहरीला पदार्थ हमारे स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव डालता है। नगरों व महानगरों में जल को शुद्ध करने के लिए ब्लीचिंग पाउडर का उपयोग किया जाता है लेकिन उसके द्वारा शुद्ध किये गये जल के प्रयोग से आंतों पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इस स्थिति में सहजन के बीजों का पाउडर हानि रहित उत्तम जलशोधक है। इसके लिए आपको क्या करना है?

सहजन के वृक्ष से सूखी हुई फलियाँ तोड़ें, बीज बाहर निकालें, बीजों के छिलके बाहर निकालकर अन्दर का गूदा धूप में सुखायें और उसका पाउडर बनायें। 10 लीटर दूषित जल में 2 ग्राम पाउडर डालकर अच्छी तरह घोलें। एक-दो घंटे में जल शुद्ध बन जायेगा। इस पाउडर को आप 100 ग्राम, 200 ग्राम या 500 ग्राम के पैकेट बनाकर बेच भी सकते हैं। इससे आपकी आमदनी बढ़ेगी और जनसेवा भी हो जायेगी।

सहजन की सब्जी पाचन में हल्की, अग्निवर्धक होने से भूख को बढ़ाने वाली, धातु को पुष्ट करने वाली, हृदय को बल प्रदान करने वाली दिव्य औषधि भी है। आयुर्वेदिक ग्रन्थों में इसके गुणों का विस्तार से वर्णन किया गया है।

अभिवृद्धि- सहजन की अभिवृद्धि बीज लगाकर या वृक्ष की डालियाँ तोड़कर उसे लगाकर कर सकते हैं।

डाली 3 फीट (लगभग दो-तीन हाथ) लम्बी और 5-6 सेंटीमीटर (लगभग तीन उंगलियों के बराबर) चौड़ी होनी चाहिए। बीज निश्चित स्थान पर बीजामृत संस्कार करके लगायें। बीजारोपण से पूर्व बीजामृत में बीज को 24 घंटे भिगोकर रखें। दो कतारों के बीच में अन्तर 6 से 12 फीट तक रखें। यह अन्तर मुख्य फलदार वृक्षों या आन्तर फसल के ऊपर निर्भर करेगा।

सहजन के वृक्ष पर डालियाँ निरन्तर बढ़ती जाती हैं। जब तक इसका वृक्ष मुख्य फलदार वृक्ष के अग्रभाग के ऊपर दो फीट तक नहीं बढ़ता तब तक उसकी डालियाँ हटाते रहें। जब यह ठीक ऊँचाई पर पहुँच जायेगा तब उसके ऊपर फैलने दें। इस प्रकार यह मुख्य फलदार वृक्ष के ऊपर छाया देने वाला बन जायेगा। तोड़ी हुई डालियों का उपयोग आच्छादन के लिए करें।

सहजन के जबरदस्त फायदे

23. शरीफा (CUSTARD APPLE)

शरीफा मधुर फल देने वाला लघुकाय वृक्ष है। संस्कृत भाषा में इसके विविध नाम हैं यथा–सीताफल, वैदेहीवल्लभ, कृष्णबीजक, बहुबीजक, गण्डगात्र, श्रीफल आदि। यह अत्यल्प वर्षों में बढ़ने वाला वृक्ष है। इसकी एक विशेषता यह भी है कि यह वर्षा के जल से अत्यन्त मधुर व स्वादिष्ट बनता है जबकि कृत्रिम सिंचाई से इसका स्वाद उतना मधुर नहीं हो पाता। यह किसी भी प्रकार की भूमि में बढ़नेवाला वृक्ष है। शरीफा का वृक्ष पतझड़ी वृक्ष के अन्तर्गत आता है।

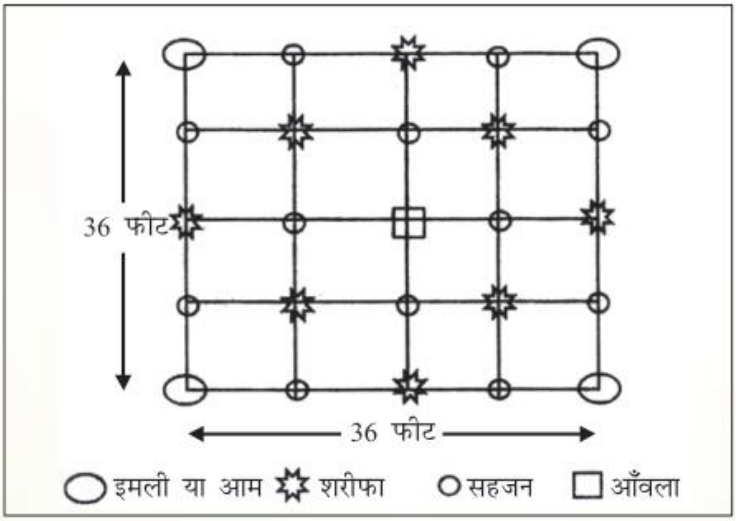

शरीफा भारत के सतपुड़ा की पहाड़ियों में, विदर्भ, मध्यभारत, मराठवाड़ा, खानदेश, सौराष्ट्र के गिर जंगल, सहयाद्रि, हैदराबाद के निकट वालानगर, विजयवाड़ा तथा मेड़क जिलों के जंगलों में पर्याप्त मात्रा में होता है।

शरीफा स्वादिष्ट, मधुर तथा औषधयुक्त फल है। यह शीतकारक, पित्तनाशक, बलवर्धक, शुक्रवर्धक, उन्मादनाशक, व्रणनाशक तथा रेचक है। आयुर्वेदिक ग्रन्थों में इसे हृदय की बीमारी के लिए अति उत्तम बताया गया है। शरीफा की जड़ को पानी में रगड़कर पीने

से रुका हुआ पेशाब पुनः चालू हो जाता है। शरीफा के पत्तों में अकोरिन, अनोनिन जैसे औषधियुक्त तत्त्व होते हैं जिससे ब्रह्मास्त्र, दशपर्णी अर्क, नीमास्त्र जैसी कीटनाशक दवाइयाँ बनायी जाती हैं। शरीफा फल के गूदा का उपयोग मिल्कशेक, शरबत, आइस्क्रीम, फ्रूट बटर, टॉफी, जैम, जेली, पाउडर आदि के बनाने में किया जाता है।

शरीफा के बीजों में 30% तेल होता है, जिससे साबुन बनता है। इसके तेल का उपयोग कीटनाशक दवा बनाने में भी होता है। शरीफा के बीजों से बनी खल्ली में 40% नाइट्रोजन होने से यह खेती में सेन्द्रीय खाद के रूप में उपयोग में लायी जाती है।

अभिवृद्धि- शरीफा के बीजों को संगृहीत करने के लिए सर्वोत्तम वृक्ष का चुनाव करें। यदि वृक्ष का चुनना सम्भव न हो तो फलों के समय बाजार से उत्तम किस्म का फल चुनकर अच्छा दाम देकर खरीदें और उससे बीज संगृहीत करें। बीजों से अभिवृद्धि करने से हमें भविष्य के लिए अच्छा उत्पादन देने वाले बीज मिल सकेंगे। कलम लगाने से यह सम्भव नहीं। साथ ही साथ कम लागत प्राकृतिक खेती में हम प्रत्येक फल को प्राकृतिक आकार, स्वाद, मिठास आदि गुण बीजों के माध्यम से दे सकते हैं।

शरीफा को इमली, आम या आँवला के बीच आन्तर फसल के रूप में आपको लगाना है। हर दो इमली या देशी आम के बीच 36 फीट अन्तर रखना है। हर चार इमली या आम के बीच एक आँवला लगाना है। हर इमली या आम और आँवला के बीच शरीफा लगाना है। इन हर दो फलदार वृक्षों के बीच सहजन (सहिजन, मुनगा) लगाना है। आम, इमली, आँवला, शरीफा और सहजन के बीज निश्चित स्थान पर लगायें। शरीफा का गूदा खाकर बीज छाया

में सुखाकर कम से कम तीन माह बाद ही लगाने में प्रयोग करना चाहिए क्योंकि फलों में से बीज निकालने के बाद वे तीन माह तक सुप्तावस्था में चले जाते हैं। अक्टूबर–नवम्बर में निकाले गये बीज को जून में लगा सकते हैं। लगाने से पूर्व बीज को 48 से 72 घंटे तक जीवामृत या बीजामृत में भिगोकर रखें।

बगीचे का रेखांकन करने के बाद जहाँ पर जो फलदार वृक्ष लगाना है वहाँ एक हाथ दाई, एक हाथ बाई, एक हाथ (1½ फीट x 1½ फीट x 1½ फीट) आकार का गड्ढा खोदिये। चार भाग वहीं की मिट्टी + दो भाग छाना हुआ गोबर खाद + एक भाग घनजीवामृत मिलाकर यह मिश्रण प्रत्येक गड्ढे में भर दीजिये। ऊपर से जीवामृत छिड़क दें और ऊपर थोड़ी सूखी हुई घास का आच्छादन डाल दें। बारिश से या ऊपर से जल का छिड़काव करने से कुछ दिन बाद अंकुरण हो जायेगा। अंकुरण के बाद आच्छादन हटा दें। 100 लीटर पानी में 5 लीटर कपड़े से छाना हुआ जीवामृत मिलाकर पौधों पर महीने में दो बार छिड़काव करें और पौधों के पास थोड़ा–थोड़ा जीवामृत भूमि पर महीने में दो बार डालते रहें। जिस दिन शरीफा के बीज डालेंगे उसी दिन शरीफा से दो फीट की दूरी पर लोबिये के बीज डालें। प्रारम्भ के तीन महीने तक खरपतवार निकालकर वहीं आच्छादन के रूप में प्रयोग करें। सम्पूर्ण क्षेत्र में जहाँ भी रिक्त स्थान हो वहाँ सब्जियों के बीज डालें।

शरीफा के फूल की कली का पूरा विकास होने के लिए 35 दिन लगते हैं। अधिकांश फूल जून–जुलाई में निकलते हैं और 4½ से 5 महीने में (दशहरा, दीपावली के समय) सितम्बर से नवम्बर तक फल बनकर तैयार हो जाते हैं। सालभर महीने में कम से कम एक बार प्रति एकड़ 200 लीटर पानी में 20 लीटर कपड़ें से छाना

हुआ जीवामृत मिलाकर शरीफा के वृक्षों पर छिड़काव करते रहें। शरीफा के ऊपर हल्की छाया देने वाला कोई वृक्ष चाहिए। इसकी जिम्मेवारी हमने सहजन को सौंपी है।

शरीफा के फल पर जब छिलके के ऊपर जो पपड़ी (Scale) आती है वह ऊपर उठने लगे, एक-दूसरे से अलग भी होने लगे, हर दो पपड़ी के बीच दरारें निर्मित हों, पपड़ी का निचला हिस्सा सफेद युक्त पीला पड़ जाये और हरे किस्म के फलों का गहरा हरा रंग बदलकर फीके हरे रंग में रूपान्तरित हो जाये तब समझना चाहिए कि फल तोड़ने के लिए तैयार हो गये हैं। ये स्थितियाँ सितम्बर से नवंबर तक के बीच में आती हैं।

फसल सुरक्षा- शरीफा के वृक्ष पर मिलीबग, फटु बोअरर, फटु फ्लाय, सॉफ्ट स्केल इन्सेक्टस्, लॅक इन्सेक्टस्, हवाइट फ्लाय, नेमटोड, रुट नॉट नेमटोड, डगर नेमटोड जैसे कीट हानि पहुँचाते हैं। इनसे सुरक्षा नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र और अग्न्यस्त्र छिड़कने के बाद हो जाती है। सूत्रकृमि (नेमटोड) के लिए गेंदा लगाना आवश्यक है जिसकी जड़ों में अल्फाटरथोनाइल नामक औषधि तैयार होती है जो सूत्रकृमि को नियंत्रित करती है। फलों एवं पत्तों पर जो बीमारियाँ आती हैं उनका नियंत्रण जीवामृत के छिड़काव, आच्छादन तथा खट्टी छाछ व सोंठास्त्र के छिड़काव से पूरी तरह हो जाता है। वैसे तो प्राकृतिक कृषि में कीटों से होने वाली बीमारियाँ प्रायः आती नहीं हैं।

24. आँवला (AONLA)

आँवले को संस्कृत में आमलकी, धात्री, अमृता, बहफुला, साधुफुला, पंचरसा, दिव्या आदि अनेक नामों से पुकारा गया है। आँवला विटामिन सी का भण्डार है। यह पित्तविकार, नेत्रविकार, केशविकार, चर्मरोग, अपच शरीर की उष्णता, डायबिटीज आदि रोगों की दिव्य औषधि है।

पहाड़ियों के ढलानों पर और उष्ण कटिबन्धीय वनों में आँवला की अच्छी तरह अभिवृद्धि होती है। हल्की या मध्यम भूमि में आँवला बहुत अच्छी तरह विकसित होता है। क्षारीय भूमि में भी यह उत्पादन दे देता है। यह वृक्ष मात्र वर्षा के सहारे होने वाला है। शिशिर ऋतु अर्थात् दिसम्बर-जनवरी में इसके पत्ते झड़ जाते हैं और वसन्त ऋतु अर्थात् फरवरी-मार्च में नये पत्तों का अंबार व फूलों की बहार निकलती है। शिशिर ऋतु में समाधिस्थ आँवला वसन्त ऋतु में जब समाधि से बाहर आकर अपना मनोहारी दृश्य बिखेरता है तो वह देखने लायक होता है। फूलों की बहार निकलते ही 10-15 दिनों में फल धारण की क्रिया हो जाती है लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि फल धारण की क्रिया के बाद आँवले का वृक्ष पुनः 100 दिनों के लिए समाधि की अवस्था(सुप्तावस्था) में चला जाता है। जैसे ही मानसून की शुरूआत होती है वैसे ही यह अपनी सुप्तावस्था से बाहर आकर फलों की वृद्धि करना शुरू कर देता है और जब मानसून लौटने लगता है तब, यानि अक्टूबर-नवम्बर मास में फल पककर मानसून को भेंट चढ़ाने के लिए तैयार खड़ा हो जाता है। आँवले के वृक्ष में एक और विशेषता देखी जाती है और वह है - भीषण अकाल में भी यह सूखता नहीं, मरता नहीं और वर्षा आते ही जीवित हो उठता है। आँवले को आपको अकेले

फसल के रूप में नहीं लेना है अपितु देशी आम या इमली के साथ आन्तर फसल के रूप में लेना है।

आँवला गर्मी और सर्दी दोनों को सहन करता है लेकिन छोटे पौधों को धूप और कड़ाके की ठण्ड से बचाना आवश्यक है। इसके लिए आँवला के पौधों को लगाने के बाद उससे दो फीट की दूरी पर चारों ओर गोलाकार अरहर और बाजरा के बीजों को लगायें।

किस्में- बनारसी, चकैय्या, कंचन (नरेन्द्र आँवला-4), कृष्णा (नरेन्द्र आँवला-5), नरेन्द्र आँवला-6, नरेन्द्र आँवला-7, आनन्द - 1, आनन्द - 2, आदि आँवला की विभिन्न किस्में हैं।

अभिवृद्धि- आँवले की अभिवृद्धि बीज लगाकर, भेंट कलम या मृदु काष्ठ कलम (Soft Wood Grating) द्वारा होती है। उत्तर भारत में प्रायः शिल्ड पद्धति से आँखें भरकर कलम तैयार करते हैं और बाद में वह कलम निश्चित स्थान पर लगाते हैं। इस पद्धति से 70-80% सफलता मिलती है। बीज के लिए देशी आँवला के वृक्ष से परिपक्व आँवला संगृहीत करें और ऊपर का भाग हटाकर गुठली सुखायें। प्रत्येक गुठली में सामान्यतः छः बीज होते हैं। यदि आप धूप में आँवले को सुखाते हैं तो वे अपने-आप विभक्त हो जाते हैं और उनमें से बीज स्वतः बाहर निकल पड़ते हैं। इन बीजों को चलनी पर घिसकर साफ करें और कपड़े के थैले में रखें। सप्ताह में एक बार इन बीजों को धूप में सुखाते रहना चाहिए।

24 फीट x 24 फीट के अन्तर पर (जैसा कि चित्र में दर्शाया गया है) आँवले को लगायें। हर चार आँवले के बीच शरीफा, पपीता या कड़ीपत्ता का एक पौधा लगायें। हर दो आँवले के बीच और हर आँवला और शरीफा, पपीता, कड़ीपत्ता इनमें से कोई एक के बीच सहजन के लिए (1½ फीट x 1½ फीट x 1½ फीट)

आकार का गड्ढा खोदिये। यहीं की मिट्टी चार भाग, छाना हुआ गोबर का खाद दो भाग, घनजीवामृत एक भाग मिलाकर मिश्रण तैयार रखें। साथ ही शरीफा, पपीता, कड़ीपत्ता, सहजन और अण्डी के बीज भी लाकर रखें। बीजामृत और जीवामृत भी तैयार करके रख लें।

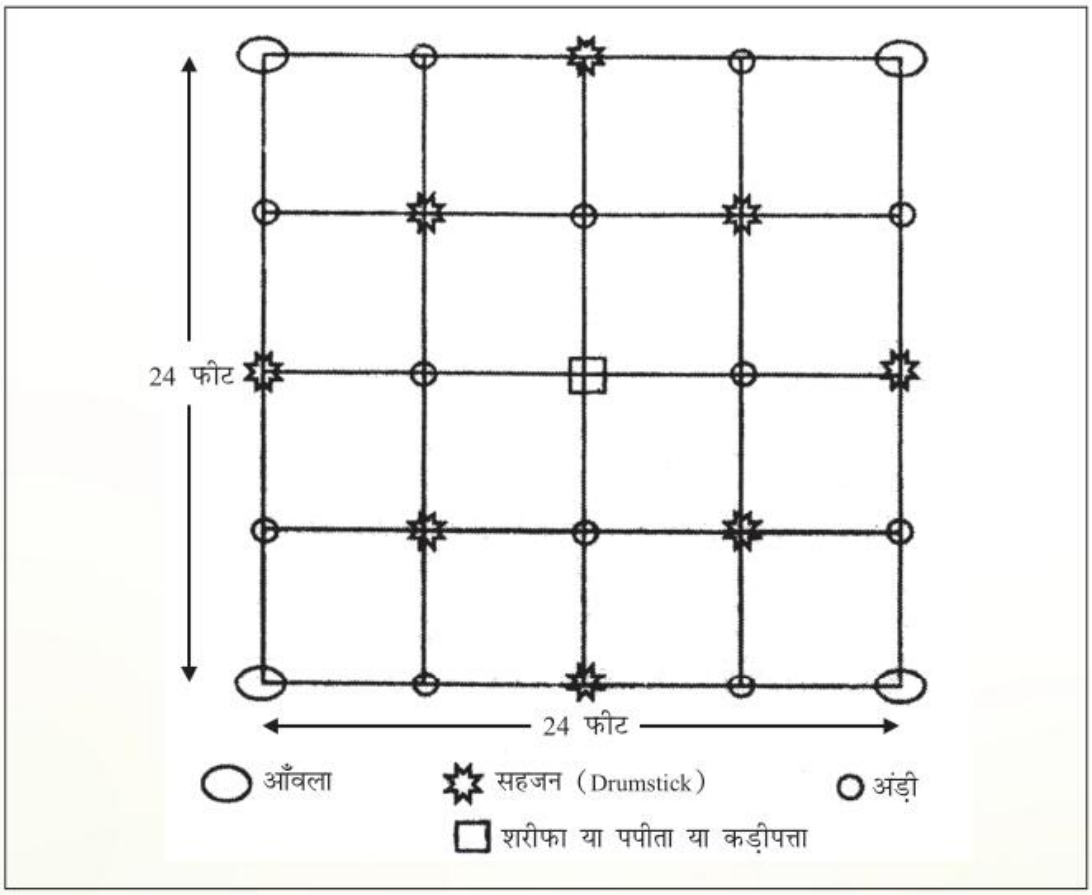

नर्सरी में पौधा तैयार करने के बजाय, जिस स्थान पर आँवले का पेड़ लगाना है उसी स्थान पर सीधो बीज डालें और बाद में उगकर आये हुए रुट स्टॉक पर कलम बाँधें। यह अत्यन्त सरल विधि है और लाभ भी अधिक है। इस विधि से मुख्य जड़ (Top Root) और दोयम जड़ें (Secondary Root) भूमि के अन्दर गहराई में जल स्रोत की ओर चलती हैं जिससे अकाल में भी बिना सिंचाई के हमें उत्पादन मिल जाता है। पानी की खोज में गहराई

में गई हुई जड़ों को एक मजबूत आधार मिलता है जिससे आंधी या तूफान में भी आँवले के पेड़ उखड़ते नहीं हैं।

कलम करने के लिए रुट स्टॉक कम से कम एक वर्ष का होना चाहिए। जिस आँवले के वृक्ष पर भरपूर फल आते हों तथा जो वृक्ष निरोग हो, वही वृक्ष चुनें। आपको अपने द्वारा चुने हुए किस्मों के साथ 5 से 10% देशी आँवला लगाना ही है। इन देशी आँवले के वृक्षों पर कलम (बडिंग) न करें। आँख भरने के लिए (बडिंग करने के लिए) उपयोग में लायी जाने वाली डालियाँ कम से कम छः महीने पहले की हों। जिस डाली की आँखें निकालनी हैं उस डाली को लेकर उस पर आँख के चारों ओर 2½ से.मी. लम्बा और 1.0 से.मी. चौड़ा तेज चाकू से आयताकार छेद देकर वह आँख डाली से निकाल लें। सहायता के लिए चित्र देखें।

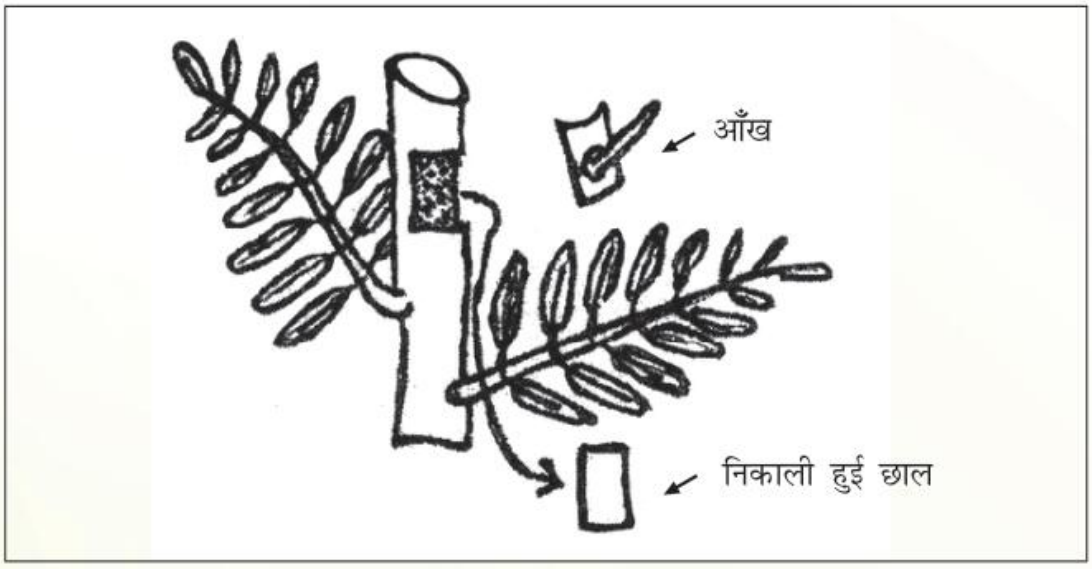

रुट स्टॉक पर भूमि की सतह से एक फीट ऊँचाई पर आयताकार छेद करके जितना आकार आँख का है उतने ही आकार की छाल निकालें और यह आँख ठीक ढंग से लगा दें। बाद में इसे पॉलिथीन से बाँध दें। यदि यह आँख 20–25 दिनों में हरी हो जाती है तो समझें कि कलम सफल हो गई उसके बाद रुट स्टॉक

पर जहाँ आँख कलम किया है, उस आँख के ऊपर रुट स्टॉक के अग्रभाग की ओर का हिस्सा काट दें ताकि आँखों में से नया अंकुर शीघ्र निकलकर बाहर आ जाये।

कलम लगाने के बाद वर्षा ऋतु में बगीचे में खड़े प्रत्येक पौधों के पास थोड़ा-थोड़ा जीवामृत महीने में एक या दो बार डालें। वर्षा ऋतु के बाद सिंचाई के जल के साथ प्रति एकड़ 200-400 लीटर जीवामृत महीने में एक या दो बार दें। जीवामृत फल पकने तक देना है। यदि देशी गाय या बैल का गोबर आपके पास अधिक मात्रा में हो तो घनजीवामृत बनाकर पौधों के पास डालते जायें। इससे आपको विशेष लाभ मिलेगा।

कलम और बीज लगाने के बाद दो माह तक प्रति एकड़ 100 लीटर पानी में 5 लीटर जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें। इसके बाद पुनः दो महीने तक प्रति एकड़ 150 लीटर पानी में 10 लीटर जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें। बाद में निरन्तर फल आने तक प्रति एकड़ 200 लीटर पानी में 20 लीटर जीवामृत मिलाकर छिड़काव करते रहें।

आँवला अंसिचित अर्थात् बिना सिंचाई के चलने वाला, मात्र वर्षा पर निर्भर रहने वाला वृक्ष है अतः उस पर आच्छादन अत्यन्त आवश्यक है। सहजन, लोबिया, बीन्स आदि आन्तर फसलें पर्याप्त काष्ठ आच्छादन देंगे ही। साथ ही साथ इस काष्ठ आच्छादन के बीच छेद करके ककड़ी, करेला, कद्दू (लौकी), तरबूज, आदि के बीज भी डालते जायें। नीचे काष्ठ आच्छादन और ऊपर सजीव आच्छादन के साथ जीवामृत मिलकर असंख्य जीवाणुओं और केचुओं को पैदा करेगा और ये सब मिलकर आँवला व आन्तर फसलों की जड़ों के पास पर्याप्त खाद्य तत्त्व संगृहीत कर देंगे।

आँवला और आन्तर फसलों के छः-छः फीट पर आने वाले हर दो कतारों के बीच तीन फीट चौड़ी और 1½ फीट गहरी नालियाँ निकालें और इन नालियों में जो भी काष्ठ आच्छादन उपलब्ध हों उन्हें डाल दें। आच्छादन के कारण वर्षा के जल का वाष्पीकरण नहीं होगा और नालियों के सहारे वर्षा का जल भूमि के अन्दर संगृहीत होकर जड़ों को हमेशा मिलता रहेगा।

आँवले के वृक्ष पर फल अधिक लगने के कारण उसके भार से डालियाँ टटूती हैं अतः उन्हें मजबूत करने के लिए उन्हें एक विशिष्ट आकार देना आवश्यक है। भूमि की सतह से 75 से.मी. की ऊँचाई तक एक ही तना रखें और उसके ऊपर तीन-चार मजबूत चारों ओर फैलने वाली डालियाँ (शाखायें) रखें।

आँवले के वृक्ष पर कीट व बीमारियाँ आती ही नहीं, तथापि यदि आती हैं तो नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र, अग्न्यस्त्र, सोंठास्त्र या छाछ का छिड़काव करें।

25. केला (BANANA)

सम्पूर्ण संसार में केला अत्यन्त लोकप्रिय है। प्रत्येक उत्सव या धाार्मिक संस्कारों में केला अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। यह पौष्टिक, स्वादिष्ट, खाने में सरल व सस्ता भी है।

केले की फसल अकेली क्रमवार परिवर्तन से, मिश्र फसल, आन्तर फसल, सहजीवी फसल की तरह विभिन्न पद्धतियों से ली जाती है। दक्षिण भारत (केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, महाराष्ट्र आदि) में केले की फसल मुख्य फसल नारियल और सुपारी के साथ आन्तर फसल के रूप में ली जाती है।

केले की बुआई उसके कन्द (बीज) लगाकर की जाती है। कन्द का वजन 400 से 600 ग्राम होता है। उसका आकार पके हुए नारियल के समान होना चाहिए। बीज का रंग गहरा लाल होना चाहिए। कन्द लगाने के बाद उससे 200 से 500 तक जड़े आती हैं। बीज यदि प्राकृतिक केले के पौधों से लेते हैं तो उत्पादन बढ़ता है।

तीन हंगाम (काल, समय) में केले की फसल लगाई जाती है

1. मृग हंगाम – जून, जुलाई, अगस्त
2. कान्दा हंगाम – सितम्बर, अक्टूबर
3. हस्त हंगाम – दिसम्बर, जनवरी

अन्तराल – 8 x 4 फीट, 9 x 4½ फीट, 9 x 4½ फीट, x 4½ फीट, 8 x 8 फीट, 12 x 12 फीट

नाटे किस्म के पौधों में अन्तराल – 8 x 4 फीट, 9 x 4½ फीट, 9 x 4½ फीट x 4½ फीट

बीजामृत से संस्कार करके बीज लगायें। जितना आकार बीज का है उतना ही गड्ढा खोदें। उसमें दो मुट्ठी गोबर खाद तथा

घनजीवामृत का मिश्रण डालें। इसके बाद पास की मिट्टी डालकर उसे दबायें और ऊपर से जीवामृत डालें। बीच में लोबिया, मिर्च, प्याज, गेन्दा और सब्जियों की आन्तर फसलें लें। केले के दो पौधों के बीच सहजन लगायें। हर पन्द्रह दिन में एक बार सिंचाई के समय जीवामृत दें। केले का गुच्छा काटने के पहले पौधों का कोई भी हरा या सूखा पत्ता न काटें। यह पत्ता पौधों का रिजर्व बैंक (आरक्षित कोष) होता है। बीज लगाने के बाद तीन महीने तक हर नाली में जल दें। तीन महीने के बाद पौधों की नाली को पानी देना बन्द करें। शेष तीन नालियों को जल दें। हर बार पानी के साथ जीवामृत दें। फूल बाहर निकलने तक पौधों की जड़ों से जो अंकुर निकलते हैं उन सब को काटकर वहीं आच्छादन के रूप में डालें। जिस दिन फूल बाहर निकलेगा उस दिन, वह जिस दिशा की ओर निकला है उसके ठीक विपरीत दिशा का एक अंकुर शाखा रखें और शेष को काटकर उसका आच्छादन करें। केले का गुच्छा काटने के बाद तना न काटें। उसे वैसे ही खड़ा रहने दें। जैसे-जैसे रखा हुआ यह रटून बढ़ेगा वह तना अपने आप जगह पर ही नीचे आयेगा और अन्त में गुच्छे में सज जायेगा। गुच्छा (Bunch) काटने के बाद पत्ते काटकर उनका आच्छादन करें।

26. पपीता (PAPAYA)

आम के बाद पपीता समृद्ध फलों की सूची में दूसरे नम्बर पर आता है। इसका उत्पादन भारत के उत्तर प्रदेश, बिहार, असम, प. बंगाल, मध्य प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम, जम्मू-कश्मीर व दक्षिण भारत के राज्यों में लिया जाता है।

पपीता वर्षपर्यन्त फल देता है लेकिन पपीता नर है या मादा - यह फूल लगने तक ज्ञात नहीं होता। पपीता उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में बढ़ने वाला पेड़ है। कड़ाके की ठण्ड, कोहरा, तेज हवा इसके विकास में बाधा पहुँचाती है।

किस्में- मधुबिन्दु, सिलेक्शन-7, सिलोन, वाशिंगटन - ये प्राचीन किस्में हैं। नई किस्मों में को-1, को-2, को-7, कूर्ग हनीडयू, रेडफ्लेश आदि हैं। पूसा डेलिसीयस, पूसा मैजेस्टी, पूसा जाएण्ट, पूसा ड्वार्फ और पूसा नन्हा - ये सब भी नई किस्में हैं।

अभिवृद्धि- पपीते की अभिवृद्धि बीजों के द्वारा होती है। इसके लिए आपको उत्तम किस्म के पपीते खरीदकर उनसे बीज निकालकर उन्हें लगाना है। पपीते के बीज सीधे निश्चित स्थान पर लगाये जा सकते हैं। इन्हें नर्सरी में लगाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

यदि नर्सरी में बीज लगाने हों तो उन्हें चौड़े बेड पर लगायें। 4½ फीट की दूरी पर नाली निकालें जिसमें से 1½ फीट की नाली होगी और तीन फीट का बेड होगा। बेड पर तीन-तीन इंच की दूरी पर मिट्टी में चौड़ी लकीरें निकालें और उन लकीरों में बीजामृत से संस्कारित बीजों को डालें। उन बीजों को वहीं की

मिट्टी से ढककर, उनके ऊपर जीवामृत छिड़ककर काष्ठाच्छादन कर दें। आच्छादन पर इतना पानी छिड़कें कि बीजों के अंकुरण के लिए उन्हें नमी मिल जाये। सायंकाल प्रतिदिन आच्छादन पर पानी तथा जीवामृत का छिड़काव करते रहें। 15 से 20 दिनों के अन्दर अंकुरण हो जायेगा। अंकुरण के बाद आच्छादन हटा दें और बाद में नाली के द्वारा जल + जीवामृत मिलाकर दें। छिड़कने के लिए जीवामृत की मात्रा 10 लीटर पानी में 300, 400 या 500 मिली लीटर है। इससे उत्तम किस्म के सशक्त पौधे तैयार होंगे।

एक एकड़ भूमि में 200 से 250 ग्राम बीज काफी हैं। चूंकि पपीते के बीजों में अंकुरण क्षमता 45 दिन होती है अत: पपीते के बीज इस समयावधि में अथवा जल्दी लगा देने चाहिए।

सहजीवी आन्तर फसलें- पपीता स्वयं आम, अमरूद, सन्तरा, मौसमी, चीकू, लिची आदि में आन्तर फसल है अत: इसका उत्पादन इनके साथ ही लेना ज्यादा बेहतर है। पपीते के साथ सहजन, अरहर, अण्डी, मिर्च, अदरक, हल्दी, लोबिया, प्याज, गेंदा, टमाटर, बैंगन, उड़द, गवार, तथा लताओं के सहारे लगने वाली सभी सब्जियाँ लेनी चाहिए।

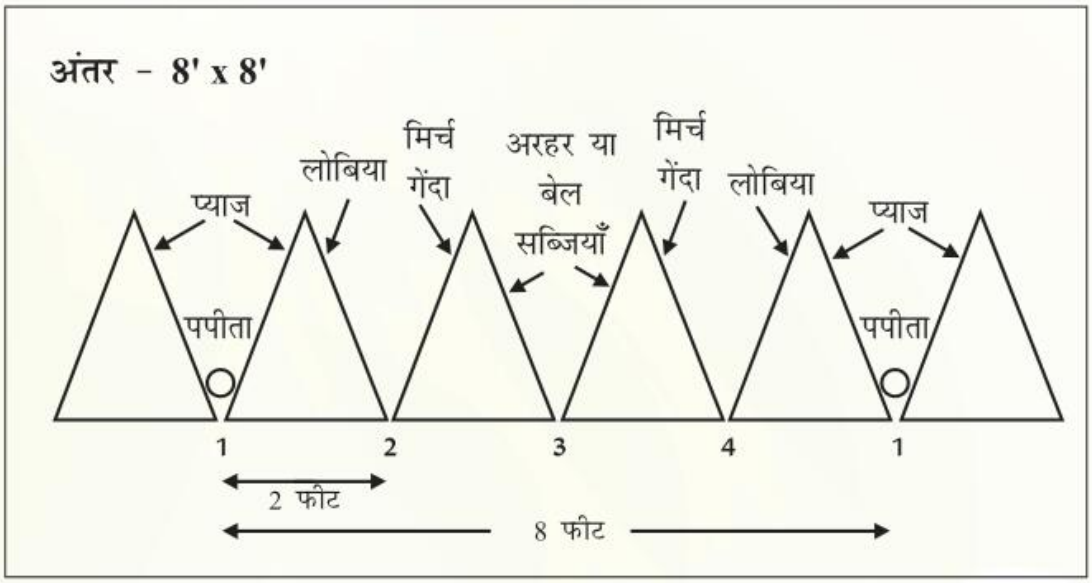

बुआई- भूमि की जुताई के बाद किसी साधन से दो फीट की दूरी पर नाली निकालें। आठ फीट में चार नालियाँ आ जायेंगी। नाली संख्या एक में आठ या निश्चित की हुई दूरी पर बीज डाल दें अथवा पौधे लगा दें। नाली के दोनों ढलानों पर प्याज के पौधे लगा दें। दो पपीते के मध्य नाली संख्या एक में सहजन लगायें और पपीते से आठ फीट की दूरी पर निकाले गये दूसरी नाली में दो पपीतों के मध्य अरहर लगायें। पपीते की एक नाली में सहजन और दूसरी नाली में अरहर ऐसा क्रम चलने दें। नाली संख्या दो और चार के ढलानों के दोनों ओर लोबिया, मिर्च और गेंदा लगायें। नाली संख्या तीन में सभी प्रकार की लताओं में फलने वाली सब्जियाँ लगायें। इस तरह ये क्रम पूरे भूमिखण्ड में चलने दें।

जहाँ पौधे या बीज लगाने हों, उस जगह की चार भाग मिट्टी + दो भाग छाना हुआ गोबर खाद + एक भाग घनजीवामृत मिलाकर थोड़ा-थोड़ा डालें।

जीवामृत- वर्षा ऋतु में जब वर्षा रुक जाती है तब पौधों के पास भूमि पर थोड़ा-थोड़ा जीवामृत महीने में दो बार डालें। इसके साथ ही पपीते और आन्तर फसलों पर महीने में एक या दो बार जीवामृत का छिड़काव भी करें।

अंकुरण के एक महीने बाद	100 लीटर जल + 5 लीटर जीवामृत
अंकुरण के दो महीने बाद	100 लीटर जल + 7 लीटर जीवामृत
अंकुरण के तीन महीने बाद	100 लीटर जल + 10 लीटर जीवामृत
इसके बाद फल आने तक	100 लीटर जल + 10 लीटर जीवामृत

फल आ जाने के बाद	100 लीटर जल + 3 लीटर खट्टी छाछ
तदनन्तर 15 दिन बाद	100 लीटर जल + 1 लीटर नारियल का पानी
पन्द्रह दिन बाद अंतिम छिड़काव	100 लीटर जल + 1 लीटर नारियल का पानी

आच्छादन- दो पपीतों के बीच जो नालियाँ बनी हैं, उन नालियों के दोनों ओर आच्छादन बिछाकर रखें। इसके लिए हमारी आन्तर फसलें सजीव आच्छादन बनकर भूमि को ढक देंगी जिससे खरपतवार नहीं आयेंगे और जो आयेंगे उन्हें उखाड़कर उसी स्थान पर डाल दें। जब आन्तर फसलों की आयु समाप्त हो जाएगी तो उनके शरीर काष्ठाच्छादन के रूप में परिवर्तित हो जायेंगे। इसके साथ ही साथ उन आन्तर फसलों के स्थान पर पुनः ऋतु के अनुकूल आन्तर फसलों के बीज डालते हैं ताकि पुनः सजीव आच्छादन और तदनन्तर उनके शरीर से काष्ठाच्छादन मिलता रहे।

पपीता लगाने का समय- 1. जून-जुलाई, 2. सितम्बर-अक्टूबर, 3.जनवरी-फरवरी

इसे पहले भी बताया जा चुका है कि पपीता के पौधों पर जब तक फूल नहीं लगते तब तक पहचान नहीं हो पाती कि यह पौधा नर है या मादा? इसलिए निश्चित स्थान पर एक की बजाए दो या चार बीज या पौधे लगाने चाहिए। दो बीज या पौधों के बीच का अन्तर 10 सेमी. रखें। पौधे लगाने के चार से छह महीने के बाद फूल लगने शुरू होते हैं। नर पौधों पर लम्बी दण्डी लगती है और उन दण्डियों पर सफेद-पीले रंग के फूल लगते हैं। इन नर पौधों को तना से काटकर हटा दें। केवल परागण के लिए 5.7 प्रतिशत

नर पौधे सम्पूर्ण बगीचे में रहने दें।

पपीते के पौधों में 10–11 महीने में फल लगने शुरू हो जाते है और 14 महीने तक फल पक जाते हैं। प्राय: एक स्थान पर बहुत फल आते हैं। उन फलों में से कुछ को छांटकर हटा दें अन्यथा छोटे और निम्न श्रेणी के फल मिलेंगे।

फसल सुरक्षा– जब वर्षा का जल या सिंचाई का जल तने के पास अधिक जमा हो जाता है तब बीमारियाँ और कीट आते हैं अत: इस समस्या के लिए नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र, अग्न्यस्त्र, छाछ, सोंठास्त्र का छिड़काव करें।

27. अमरूद (GUAVA)

भारत में आम, सन्तरा और केला के बाद सबसे अधिक उत्पन्न होने वाला फल अमरूद है। इसका उत्पादन उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, असम, उड़ीसा, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु, केरल, पंजाब, जम्मू-कश्मीर आदि राज्यों में बड़े पैमाने पर होता है। इन राज्यों में भी उत्तर प्रदेश व बिहार इसके उत्पादन में सर्वोच्च स्थान रखते हैं जबकि उत्तर प्रदेश का इलाहाबाद जिला उत्तम किस्म के अमरूद उत्पादन में प्रथम स्थान पर है।

प्राकृतिक कृषि में कम लागत के अन्तर्गत अमरूद 50 वर्षों तक उत्पादन देता है। इसमें विटामिन ए और सी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है। इसके अतिरिक्त इसमें लोहा, फास्फोरस, कैल्शियम, थायमिन, नियासिन आदि स्वास्थ्यवर्धक तत्त्व उपलब्ध होते हैं। अमरूद में जितने विटामिन्स होते हैं उनका 80 प्रतिशत भाग फल के बीज में होता है अतः पूरा फल अच्छी तरह चबाकर खाना चाहिए।

अभिवृद्धि- बीज लगाकर आप अमरूद की अभिवृद्धि कर सकते हैं लेकिन इससे आपको नुकसान या फायदा दोनों हो सकते हैं, अतः बीज लगाने के बजाए दाब कलम कर अभिवृद्धि करना ज्यादा बेहतर साबित होगा।

दाब कलम- अमरूद के जिस वृक्ष को आप दाब कलम के लिए चुनेंगे उसमें निम्न गुण होने आवश्यक हैं-

1. विस्तृत, सशक्त डालियाँ, कम ऊँचाई।
2. अधिक उत्पादन, उत्तम किस्म।

3. बीज कम, गूदा ज्यादा।
4. गूदे का रंग सफेद, उत्तम स्वाद।
5. प्रतिरोधक शक्तियुक्त।

उपरोक्त गुणों से युक्त वृक्ष को हरे रंग की या अन्य किसी रंग की पट्टी से बांधें और उन्हीं वृक्षों की डालियों का उपयोग दाब कलम के लिए करें।

दाब कलम करने का तरीका– न ज्यादा नई, न ज्यादा पुरानी भूमि की सतह पर फैली हुई सशक्त डालियों को चुनें।

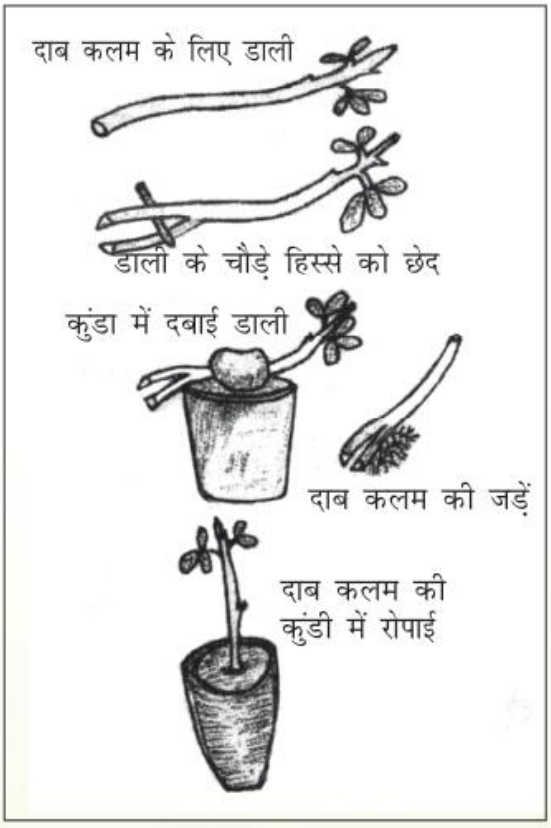

सामान्यतः डाली की लम्बाई डेढ़ फुट अर्थात् एक हाथ होनी चाहिए। उस डाली के पिछले चौड़े हिस्से पर जो पत्ते हों, उन्हें तोड़ दें। चित्र देखकर सहयोग लें।

मिट्टी द्वारा निर्मित एक कुण्डा (चौड़े मुंह का बना हुआ बड़ा पात्र गमला) लें। उसमें चार भाग अच्छी मिट्टी, दो भाग छाना हुआ देशी गाय का गोबर और एक भाग घनजीवामृत, इन सबको मिलाकर कुण्डे को भर दें और जल के साथ जीवामृत भी डाल दें। दो दिनों में कुण्डे में जैविक गतिविधियाँ प्रारम्भ हो जायेंगी। डाली के पिछले चौड़े भाग को चाकू से बीच में (जैसा कि चित्र में दिखाया गया है) छेद कर दें और उस छेद में एक छोटी लकड़ी डाल दें ताकि छेद के दो भाग पुनः एक न हों। अब

उस डाली को कुण्डे (गमले) के मध्य में रखकर मिट्टी से दबायें और उस पर एक पत्थर रख दें। कुण्डे में इतना जल दें कि नमी बरकरार रहे। एक महीने के बाद इस कलम की जडें उगनी प्रारम्भ हो जाएंगी और तीन महीने में यह कलम निश्चित स्थान पर लगाने के लिए तैयार हो जाएगा। निश्चित स्थान पर कलम लगाकर हर 15 दिन के बाद 100 लीटर जल + 5 लीटर जीवामृत मिलाकर इन पर छिड़काव करें और सिंचाई के जल के साथ महीने में एक या दो बार जीवामृत दें। अमरूद के साथ सहजन और एरण्ड (अण्डी) लगायें और इसके साथ अरहर, मिर्च, अदरक, हल्दी व गेंदा लगायें। कोई भी आन्तर फसल लेने से पहले 100 किलो देशी गाय का गोबर खाद + 50 किलो घनजीवामृत प्रति एकड़ मिलाकर देना न भूलें। दाब कलम करने का उचित समय 21 दिसम्बर से मार्च तक है।

अन्तराल- अमरूद के दो वृक्षों के बीच अन्तराल 15 x 15 फीट या 18 x 18 फीट होना चाहिए। यदि हम अन्तराल कम रखते हैं तो फल तो अधिक मिलेंगे लेकिन उसकी किस्म निम्न होगी।

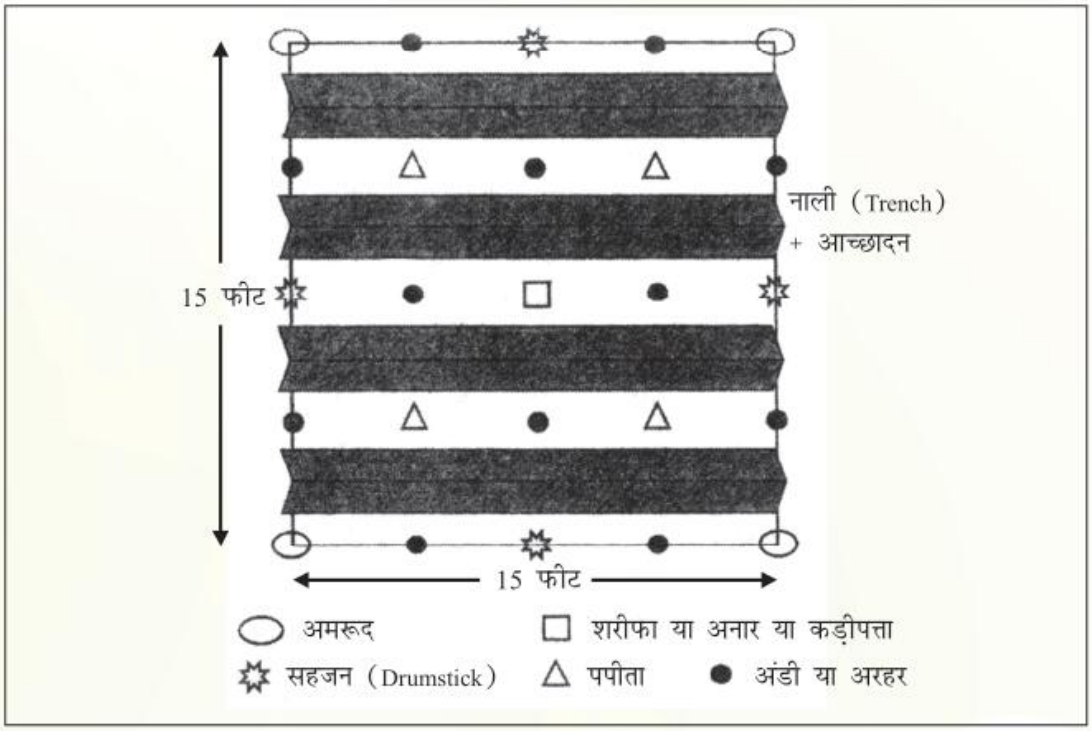

भूमि- यदि भूमि में जल के निकलने की व्यवस्था हो तो किसी भी प्रकार की भूमि अमरूद के लिए उपयुक्त है। अमरूद का वृक्ष अकाल व बाढ़ग्रस्त क्षेत्र में भी अपने-आप को बचा लेता है।

आच्छादन- पतझड़ के मौसम में अमरूद के वृक्ष के नीचे गिरे हुए पत्ते ही आच्छादन का कार्य कर देते हैं तथापि द्विदल वनस्पतियों के शरीर का आच्छादन अधिक लाभदायक होता है। अमरूद के दो वृक्षों के बीच सहजन लगाने से उसे आवश्यक नाइट्रोजन की आपूर्ति हो जाती है। इसके साथ लगाये जाने वाले आन्तर फसल यथा लोबिया, मिर्च, अरहर, अदरक, हल्दी, बेलवर्गीय सब्जियाँ हैं। इनकी आयु समाप्त होने पर ये सब काष्ठाच्छादन का कार्य करते हैं।

फूल लगना- अमरूद के पेड़ पर वर्ष में दो बार फूल लगते हैं। उत्तर भारत में ये महीने अप्रैल-मई और अगस्त-सितम्बर होते हैं लेकिन दक्षिण भारत तथा गुजरात, महाराष्ट्र में वर्ष में तीन बार फूल लगते हैं। ये महीने हैं- जून, अक्टूबर और जनवरी।

फलों का उत्पादन- अमरूद की दाब कलम लगाने के बाद लगभग चार-पाँच वर्षों में फल आने शुरू हो जाते हैं जबकि कायिक अभिवृद्धि में कलम लगाने के दो-तीन वर्ष बाद ही फल आने प्रारम्भ हो जाते हैं। जैसे ही फलों का रंग परिवर्तित होता है वैसे ही उनमें से सुगन्ध फैलनी शुरू हो जाती है और उस सुगन्ध से पक्षी आकर्षित होकर फल खाने के लिए आने लगते हैं। ये लक्षण फलों को तोड़ने की अवस्था को प्रदर्शित करता है। फलों को एक बार ही न तोड़कर विक्रय के हिसाब से तोड़ा जाना चाहिए। इससे फल ताजा बना रहता है और मूल्य भी अच्छा मिलता है।

यद्यपि फलों का उत्पादन मिट्टी की किस्म, वायु, सिंचाई, उम्र, जीवामृत, आच्छादन की उपलब्धता आदि अनेक बातों पर निर्भर करता है तथापि प्रति पेड़ 500 की संख्या में फल लेना उचित है। वैसे तो हजार-बारह सौ की संख्या में प्रति पेड़ फल लगते हैं। हिसार सफेदा और हिसार सुर्खा ये दोनों देशी किस्मों ने हायब्रिड की तुलना में अधिक उत्पादन दिया है।

फसल सुरक्षा- हानि पहुँचाने वाले कीटों और अनेक प्रकार की बीमारियों का आक्रमण अमरूद के पेड़ों पर होता है। वैसे कम लागत प्राकृतिक खेती में अमरूद के पत्तों व फलों में प्रतिरोधक शक्ति निर्मित होती है जिससे कीट नहीं लगते व बीमारियाँ भी नहीं आतीं तथापि यदि कोई कीट या बीमारी आती है तो नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र, अग्न्यस्त्र, सोंठास्त्र, वायविडंगास्त्र, खट्टी छाछ व नारियल का पानी आदि का प्रयोग छिड़काव के रूप में पेड़ों पर करें, इससे सभी कीटों व बीमारियों पर नियंत्रण हो जायेगा।

28. अनार
(POMEGRANATE)

अनार के उत्पादन में भारत में प्रथम स्थान महाराष्ट्र राज्य का है। महाराष्ट्र के अतिरिक्त गुजरात, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान, उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में अनार का उत्पादन किया जाता है।

अनार का पेड़ विकट परिस्थितियों को भी सहन करने में समर्थ है इसलिए अनार का उत्पादन हम कहीं भी ले सकते हैं, यहाँ तक कि वीरान ऊसर भूमि में भी, अकाल में भी इसका उत्पादन लिया जा सकता है। वैसे अनार निम्न उष्ण कटिबन्धीय पेड़ है।

अनार शक्तिदायक फल है अत: चिकित्सक इसे निर्बल रोगियों के लिए विशेष रूप से लेने का परामर्श देते हैं। इसमें 12% से 16% तक शर्करा होती है जो पाचनशक्ति के लिए अच्छी होती हुई शीघ्र शक्ति प्रदान करती है।

अनार की किस्में- अनार की कंधारी, ढोलका, जालोर सीडलेस, मस्कल, गणेश, मृदुला, ज्योति आदि विभिन्न किस्में हैं। कंधारी हिमाचल प्रदेश में, ढोलका गुजरात में, जालोर सीडलेस राजस्थान में, मस्कल, गणेश व मृदुला महाराष्ट्र में उत्पादित होने वाली लोकप्रिय किस्में हैं।

अन्तर- अनार के पेड़ों में अन्तर भूमि के अनुसार दें। यदि भूमि हल्की है तो अन्तर 12 x 12 फीट रखें। भूमि की किस्म मध्यम हो तो अन्तर 12 x 15 फीट रखें। भारी भूमि में यह अन्तर 15 x 15 फीट रखना चाहिए।

अभिवृद्धि- अनार की अभिवृद्धि बीज लगाकर, शाखाओं को लगाकर या गुटी कलम से करते हैं। शाखाओं को तोड़कर छाँट कलम से अभिवृद्धि करना या गुटी कलम से अभिवृद्धि करना दोनों एक समान हैं।

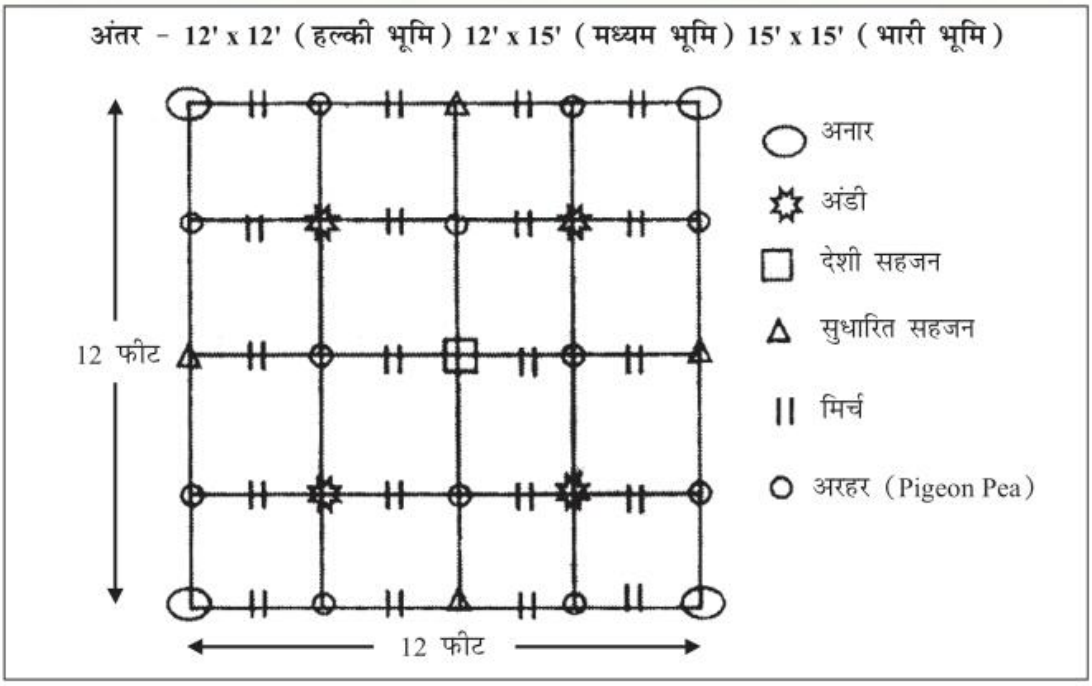

छाँट कलम से अभिवृद्धि- अनार के जिन बगीचों का रख-रखाव उत्तम तरीके से किया जाता हो, उन बगीचों में से रोगमुक्त, उत्तम फल देने वाले पौधों को चिन्हित करने के लिए उन पर पुराने रंगीन कपड़े बाँध दें। पेड़ के तने के आस-पास जो अंकुर निकलकर डालियों में परिवर्तित होते हैं वे कलम के लिए उत्तम होते हैं। छाँट कलम का चुनाव करते समय यह देखें कि उसकी चौड़ाई पेन्सिल के बराबर है या नहीं? डाली के पीछे के भाग तथा आगे के कोमल भाग को छोड़कर बीच का भाग कलम के लिए लें। छाँट कलम की लम्बाई लगभग 22 से 26 सेमी. होनी चाहिए और उस पर न्यूनतम चार से छः आँख अवश्य होनी चाहिए। छाँट कलम पर जो पत्ते हैं उन्हें आँखों को क्षति पहुँचाये बिना निकाल दें। छाँट कलम को बीजामृत में डुबोयें और लगायें। लगाते समय छाँट कलम का तीन चौथाई हिस्सा और दो आँखें भूमि के अन्दर हों। सायंकाल सूर्यास्त से दो घंटे पहले छाँट कलम लगाना उत्तम है।

गुटी कलम से अभिवृद्धि- गुटी कलम पद्धति सर्वोत्तम पद्धति है। इस पद्धति में पेड़ की सभी डालियाँ कलम करने के लिए ठीक

होती हैं। पेन्सिल की आकार वाली शाखाओं को चुनकर, आगे और पीछे वाले भाग को छोड़कर बीच वाले भाग में से 15 से 20 सेमी. की शाखा को ले लें और पत्ते निकाल दें। इसके बाद 2 से 3 सेमी. लम्बाई की गोलाकार छाल चाकू से निकालकर उस पर शैवाल (गीला स्पैगनम मॉस) लपेट दें और उस पर पॉलीथिन पेपर को सुतली (पतली रस्सी) से बाँध दें। शैवाल में पानी को ग्रहण करने की क्षमता होती है इसलिए आगे जल देने की आवश्यकता नहीं पड़ती। गुटी कलम वर्षा ऋतु में बांधना उत्तम है।

रोपाई- खेत में 12 x 12 फीट, 12 x 15 फीट और 15 x 15 फीट की दूरी पर अनार की कलमें लगायें। खेत में तीन-तीन फीट की दूरी पर नाली निकालें। इस प्रकार 12 फीट में चार नालियां निकलेंगी। नाली संख्या 1 में गुटी कलम को गड्ढे खोदकर लगा दें और लगाये हुए गुटी कलम के पास कोई लकड़ी या डंडा आधार (सहयोग देने के लिए) गाड़कर उसे सुतली या रस्सी से बांध दें। शेष अन्तराल पर जैसा कि चित्र में दर्शाया गया है, आन्तर फसलों को बो दें। बोने के पहले प्रति एकड़ 100 किलो देशी गोबर खाद, 50 किलो घनजीवामृत और 300 किलो वहीं की मिट्टी का मिश्रण तैयार कर रख लें और बोते समय इन तीनों के मिश्रण का प्रयोग प्रत्येक गुटी कलम और आन्तर फसलों के साथ करें।

बोने के बाद तुरन्त जीवामृत के साथ जल दें। कलम के बढ़ने के साथ भूमि पर उस कलम के जो अंकुर आएंगे उनको निकाल दें। केवल भूमि से 15-20 सेमी. की ऊंचाई पर जो चार-पांच अच्छी शाखाएं आयेंगी उन्हें बढ़ने का मौका दें। चित्र में प्रदर्शित आन्तर फसलों यथा सुधारित सहजन, अण्डी (एरण्ड), अरहर के बीज लगायें और हर दो पौधों के मध्य मिर्च लगायें तथा नालियों के दोनों ढलानों पर गेंदा, लोबिया, बेलों में होने वाली सब्जियां, टमाटर, बैंगन, गवार आदि के बीज या पौधे लगा दें।

जीवामृत– वर्षा ऋतु में जब वर्षा दो–चार दिनों के लिए रुक जाती है तब थोड़ा–थोड़ा जीवामृत सभी कलम तथा आन्तर फसलों के पास भूमि पर डालें। महीने में एक या दो बार जीवामृत डालना है। वर्षा ऋतु के समाप्त हो जाने के बाद सिंचाई के जल के साथ महीने में एक या दो बार जीवामृत 200 से 400 लीटर प्रति एकड़ के हिसाब से डालें। महीने में एक या दो बार सभी फसलों पर 100 लीटर जल में 5 लीटर जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें। इसके बाद 100 लीटर जल में 7 लीटर जीवामृत डालकर छिड़काव करें और इसके बाद 100 लीटर जल में 10 लीटर के हिसाब से जीवामृत मिलाकर छिड़काव करते रहें।

आच्छादन– जीवामृत और आच्छादन का परस्पर घनिष्ठ संबंध है। प्रारम्भ में आन्तर फसलें खड़ी होने के बाद वे ही सजीव आच्छादन बन जायेंगी। जब आन्तर फसलों की आयु उत्पादन देने के बाद समाप्त हो जायेगी तब उनके मृत शरीर उसी स्थान पर स्वत: काष्ठाच्छादन बन जायेंगे। सहजन के वृक्ष से हरी फलियां तोड़ लेने के बाद जब वृक्ष की छंटाई की जायेगी तो पर्याप्त मात्रा में काष्ठाच्छादन प्राप्त होंगे। छंटाई का दूसरा लाभ यह भी मिलेगा कि नये अंकुर उस पर तेज गति से बढ़ेंगे और अगला काष्ठाच्छादन हमें और भी अधिक मात्रा में उपलब्ध हो सकेगा। आन्तर फसलें आपको पुन: उन्हीं स्थानों पर बोना है जिससे नीचे काष्ठाच्छादन और ऊपर सजीव आच्छादन मिल सकेगा। जीवामृत और आच्छादन से असंख्य जीवाणु और केचुएं पैदा होंगे जो कई वर्षों तक प्रत्येक पेड़–पौधों की जड़ों को पर्याप्त पोषक तत्त्व देते रहेंगे जिस कारण आपको ऊपर से कुछ भी डालने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

फसल सुरक्षा– अनार को घनी छाया चाहिए। अनार का पेड़ यदि खुले आकाश में अर्थात् कड़ी धूप में खड़ा होता है तो उचित

उत्पादन नहीं मिलता, अतः एरण्ड और सहजन के माध्यम से उस पर छाया की व्यवस्था करनी चाहिए।

कम लागत प्राकृतिक कृषि की सभी बातों को यदि हम क्रियान्वित करते हैं तो कीट व बीमारियां आती ही नहीं। जब हम इसमें कुछ कमी कर देते हैं तो प्रतिकारक शक्ति पर्याप्त मात्रा में विकसित न होने के कारण कीट हानि पहुंचा सकते हैं या बीमारियां लग सकती हैं। इनसे बचाव के लिए आप कुछ विशेष नियमों का पालन करें। यथा जब आप अनार के पेड़ की छंटाई करते हैं उसी दिन सायंकाल या दूसरे-तीसरे दिन सायंकाल अनार के पेड़ों के दो पंक्तियों के बीच जलती हुई मसाल लेकर दौड़ें। इससे 80 प्रतिशत अनार को खाने वाले कीट मसाल पर आत्मदाह कर देंगे।

अनार को नुकसान पहुंचाने वाले मावा, थ्राट्स, जसीड्स, हनाइट प्लाय, माइट्स, मेली बग, ईडर वेल, स्टेम बोअरर आदि कीट हैं। इन सबसे बचाव के लिए नीमास्त्र, अग्न्यस्त्र, ब्रह्मास्त्र, वायवीडंगास्त्र आदि का छिड़काव करना चाहिए। इनसे छुटकारा पाने में जीवामृत, वाफसा, आच्छादन आदि बेहद मदद पहुंचाते हैं। इसमें खट्टी छाछ का छिड़काव भी उपयोगी है।

29. आम (MANGO)

आम को फलों का राजा माना जाता है। संस्कृत भाषा में आम के विभिन्न नाम हैं यथा –आम्रम्, रसालम्, सहकारफलम् आदि। मलयालम भाषा में आम को 'माग्गां' कहते हैं उसी आधार पर पुर्तगालियों ने आम का नाम मैंगो रख दिया। हिमालय की तराई से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक एक भी गांव ऐसा नहीं होगा जिसमें आम का वृक्ष न हो, इस प्रकार सम्पूर्ण भारतवर्ष की विविधता को यदि किसी फल ने बांध रखा है तो वह है आम। उत्तर प्रदेश, बिहार, आन्ध्रप्रदेश, बंगाल, तमिलनाडु, उड़ीसा आदि में इसका पर्याप्त उत्पादन होता है। वैसे आम के उत्पादन में उत्तर प्रदेश का स्थान सर्वोच्च है।

किस्में– आम की लगभग एक हजार किस्में भारतवर्ष में उपलब्ध हैं तथापि इसकी प्रसिद्ध किस्में हैं – दशेरी, लंगड़ा, हेमसागर, मालदा, गोपाल भोग, कृष्णा, चौसा, सफेदा, अल्फांसो, स्वर्णरेखा, बेनीशान, नीलम, केसर, फजली, जर्दालु, गुलाब खश आदि।

अब तक जो आम के वृक्ष दस से पचास साल तक के खड़े हैं वे या तो रासायनिक खादों से पाले गये हैं या प्रकृति के सहारे छोड़ दिये गये हैं। यदि आप उन पर नीचे बताई गई विधियों का प्रयोग करते हैं तो उनका उत्पादन बढ़ जायेगा जिससे आपको अधिक पैसे मिल सकेंगे।

खड़े आम के दो पंक्तियों के बीच तीन फीट चौड़ी और दो फीट गहरी नाली खोदें। इन नालियों में उपलब्ध काष्ठाच्छादन भर दें। वर्षा आरम्भ होते ही प्रति एकड़ 200 से 400 लीटर तक जीवामृत महीने में एक या दो बार नाली में आच्छादन के ऊपर डालें। जैसे

ही वर्षा होगी यह जीवामृत नाली के अंदर भूमि की सतह पर चला जाएगा। आच्छादन, नमी और जीवामृत- इन तीनों के संयोग से केचुएं तीव्र गति से कार्य में लग जायेंगे। केचुओं की विष्ठा से अनेक पोषक तत्त्व आम के वृक्षों को मिलने शुरू हो जायेंगे। इसके साथ-साथ जब आच्छादन विघटित होगा तो आच्छादन के नीचे ह्यूमस बनेगा। ह्यूमस तो जड़ों को दूध पिलाने वाली मां के समान उपकारी है। इन सब क्रियाओं से आम के वृक्षों पर प्रतिवर्ष फल लगेंगे और फलों की संख्या व गुणवत्ता भी बढ़ेगी।

नाली के दोनों ओर लोबिया, अरहर लगायें। ये पौधे मन्द गति से बढ़ते हुए वायु से नाइट्रोजन लेकर भूमि में जमा करेंगे जिससे जड़ों को आवश्यक नाइट्रोजन प्राप्त हो सकेगा और ह्यूमस बनाने में काम आयेगा। ग्रीष्मकाल व शीतकाल में जीवामृत सायंकाल नाली में डालें। रात्रि में वायु में जो नमी होती है उस नमी को जीवामृत खींच लेगा जिससे आगे की प्रक्रिया चलती रहेगी। महीने में एक बार पेड़-पौधों पर 100 लीटर जल में 10 लीटर जीवामृत मिलाकर छिड़काव भी करते रहें। इन सबसे आपको सुखद परिणाम प्राप्त होंगे।

नालियों के बनने से वर्षा का पानी भूमि की सतह से बहकर व्यर्थ नहीं जायेगा अपितु नालियों में एकत्र हो जायेगा। आच्छादन होने से भूमि में स्थित नमी का वाष्पीकरण रुकेगा। ऐसा होने पर वर्षा या सिंचाई के जल के अभाव के कारण फलों की संख्या पर होने वाला दुष्प्रभाव रुक जायेगा। इस प्रकार बिना रासायनिक खाद, जैविक खाद, कम्पोष्ट, देशी गोबर का खाद, सिंचाई, कीटनाशक दवाओं के छिड़काव आदि से आप आम का अच्छा उत्पादन ले सकते हैं।

आम के सहजीवी मित्र- आँवला, अमरूद, अनार, अण्डी, पपीता, सहजन, केला, कढ़ीपत्ता, शरीफा, मिर्च, हल्दी, अरहर, लोबिया, तुलसी, मेथी, पुदीना, गेंदा व लताओं में लगने वाली सब्जियाँ आम के सहजीवी मित्र हैं।

अन्तराल- आम के दो वृक्षों के मध्य कम से कम 33 x 33 फीट का अन्तराल चाहिए। इस प्रकार एक एकड़ में 40 आम के वृक्ष होने चाहिये, लेकिन आजकल कम से कम अन्तराल रखने की प्रथा चल पड़ी है। इसके पीछे उनका कहना है कि अधिक अन्तराल रखने से फलों के तोड़ने में व्यय अधिक होता है। फलों के दूर लगने पर कुशल श्रमिक के अभाव में उन्हें तोड़ पाना कठिन हो जाता है, जिसके कारण फलों के पक जाने पर भी उन्हें तोड़ा नहीं जाता और वे स्वयं पककर गिरते हैं तो क्षतिग्रस्त हो जाते हैं जिससे वे बर्बाद भी होते हैं और उनका मूल्य भी अच्छा नहीं मिल पाता।

नवीनतम विधि में दो आम के वृक्षों के मध्य अन्तराल 10 x 10 फीट होता है। इस प्रकार एक एकड़ में 435 आम के वृक्ष मिलते हैं। कलम के आरोपण के तीसरे वर्ष फल लगने शुरू हो जाते हैं लेकिन हमें उनसे पाँचवें वर्ष से फल लेने शुरू करने चाहिए। नजदीक लगाने के कारण पाँचवें वर्ष से आम के वृक्ष एक-दूसरे से हाथ मिलाना शुरू कर देते हैं। इससे फल पकने के लिए आरक्षित खाद्य ऊर्जा के रूप में व्यय होनी शुरू हो जाती है। इसलिए इन टकराने वाली शाखाओं को फल तोड़ने के एक माह बाद छाँट देना चाहिए। इससे उत्पादन व क्वालिटी अच्छी होगी और मूल्य भी हमें अच्छा मिलेगा। साथ ही साथ फलों के तोड़ने में मजदूरी कम लगेगी व उनपर जीवामृत का छिड़काव भी आसान होगा।

जब आम के पौधो 10 x 10 फीट के अन्तराल पर बोये जायेंगे तो उस स्थिति में चार आम के पौधों के मध्य एक सहजन का पौधा, हर दो आम और हर दो सहजन के बीच एक अरहर व बाजरे के कुछ बीज बोने हैं। हर दो वृक्षों के कतारों के बीच 2½ फीट चौड़ी व 1½ फीट गहरी नाली ढलान के विपरीत दिशा में निकालना है। एक नाली को छोड़कर दूसरी नाली में जल + जीवामृत देना है तथा नाली में दोनों किनारों पर मिर्च, अदरक, लोबिया और लताओं में लगने वाली सब्जियाँ लगानी हैं। माह में एक या दो बार जल में मिलाकर जीवामृत दें तथा इसका छिड़काव भी करें। एक छोड़कर दूसरी नाली में अर्थात् जिसमें जल नहीं है उसे आच्छादन से भर दें।

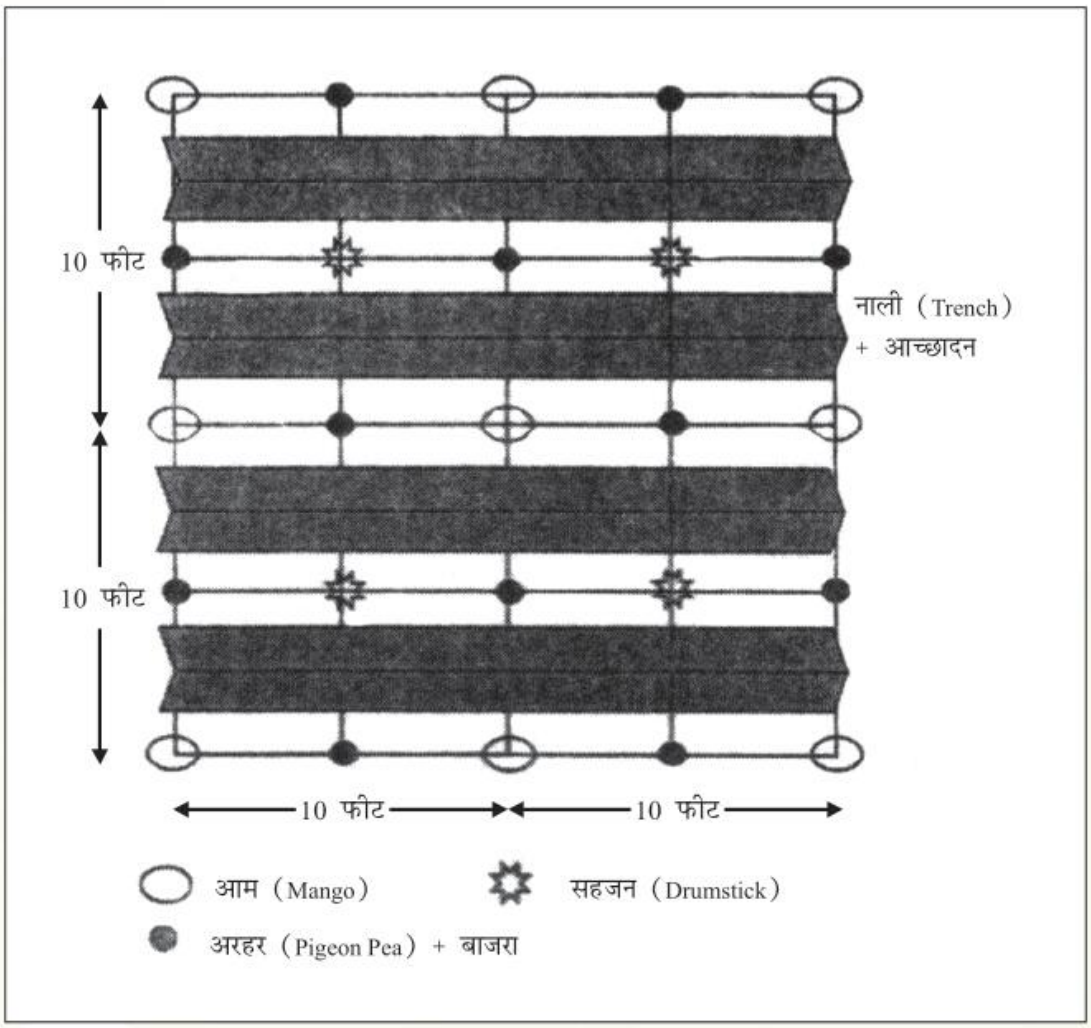

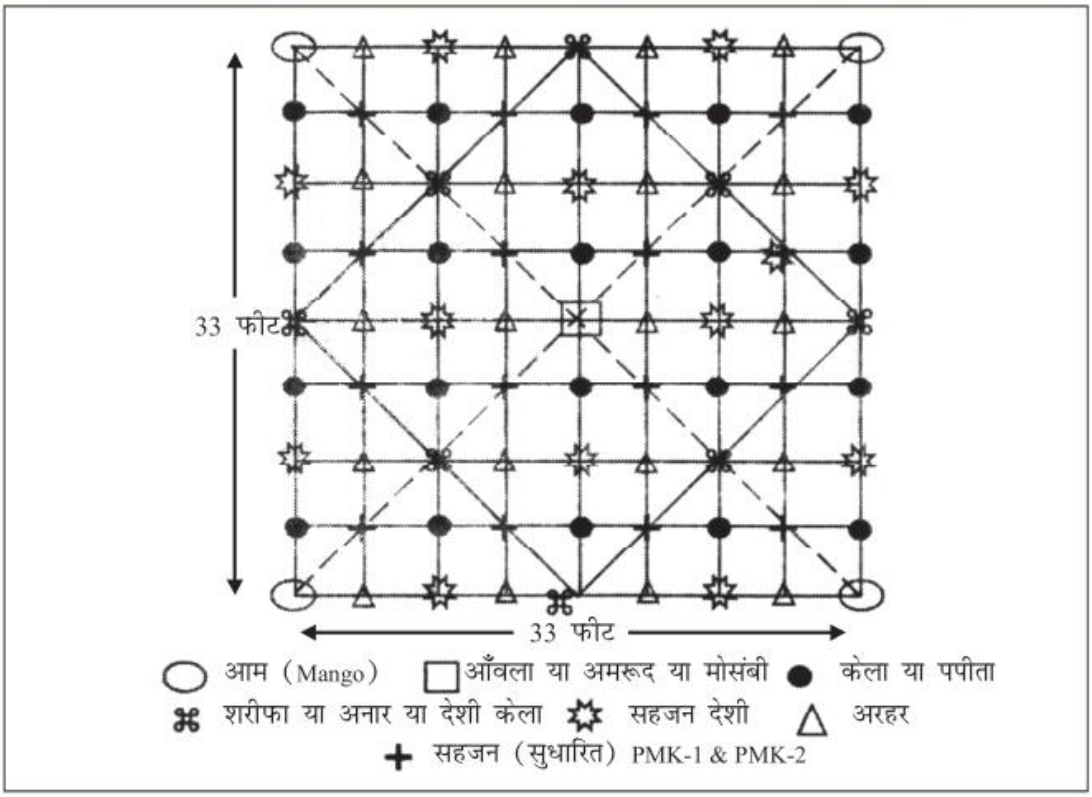

प्रकृति में जैविक विविधता है। आप वन में जायें या अपने खेत के मेड़ पर नजर डालें तो आप पायेंगे कि वहाँ विविध प्रकार की वनस्पतियाँ बढ़ती हुई नजर आयेंगी। ये एक-दूसरे की सहयोगी होती हैं। कोई वनस्पति दूसरी वनस्पति के भोजन का अवशोषण नहीं करती। यह सत्य नहीं है कि एक वृक्ष के पास दूसरा वृक्ष लगाया जाये तो वह दूसरे के भोजन को चुरा लेता है अर्थात् बाँट लेता है। वास्तविक स्थिति इसके सर्वथा विपरीत है। प्रकृति में शोषण नहीं, बल्कि साहचर्य है, सहयोग है, सह जीवन है। आम के पौधे लगाते समय हमें प्रकृति के इस नियम का अनुसरण करना है।

एक दूसरी बात भी है। जरा आप सोचें कि यदि आप केवल आम के वृक्ष लगाते हैं अर्थात् उनके साथ दूसरे सहजीवी पादपों को नहीं लगाते हैं तो यदि प्राकृतिक आपदा आ जाये तो पूरा फलोत्पादन प्रभावित हो जायेगा और हाथ में कुछ भी राशि नहीं मिलेगी। लेकिन यदि हम आम के पौधों के साथ सहयोग देने वाले आँवला, शरीफा,

अनार, सहजन आदि आन्तर फसलों को बोते हैं तो प्राकृतिक आपदा में कोई एक फसल ही तो नष्ट होगी, शेष सुरक्षित रहेंगी क्योंकि इन सब के फल तोड़ने का काल अलग-अलग होता है। ये आन्तर फसलें एक-दूसरे की उन्नति में सहयोग देती हैं। काष्ठाच्छादन के लिए काष्ठ देती हैं। आम को हानि पहुँचाने वाले कीटों को नियंत्रित करने वाले हमारे मित्र कीट इन्हीं दूसरे आन्तर फसलों पर ही तो जीते हैं। साथ ही साथ ये सालों भर पैसे भी देते रहते हैं।

अभिवृद्धि- आम के पौधे लगाने के लिए देशी आम की गुठलियाँ लीजिये। जिस आम्रवृक्ष का फैलाव विशाल हो, जिसके फल खट्टे हों, शाखायें सशक्त हों, सिंचाई के बिना भी मात्र वर्षा पर निर्भर हो तो ऐसा वृक्ष रुट स्टाक के लिए अति उत्तम होता है। गुठली की अंकुरण क्षमता, जैसे ही फल से गुठली निकालते हैं उस समय सर्वाधिक होती है। जैसे-जैसे समय बीतता जाता है उसकी अंकुरण क्षमता क्षीण होती जाती है, इसलिए जब आपको गुठलियाँ लगानी हों उसी समय पके फल से गुठलियाँ निकालें। गुठलियों को बीजामृत से संस्कारित करें और तब 33 x 33 फीट की दूरी पर गोलाकार किए हुए स्थान में तीन या चार गुठलियाँ लगायें, जैसा कि नीचे चित्र में दिखाया गया है।

छह इंच खड्डा

खड्डे में गुठलियों की स्थिति

उगे हुए पौधे

गुठलियों को गड्ढे में रखने के बाद ऊपर से चार भाग उसी स्थान की मिट्टी + दो भाग छाना हुआ देशी गोबर का खाद + एक भाग घनजीवामृत – इन सबका अच्छा मिश्रण मिलाकर के गुठलियों पर डालें और हाथ से अच्छी प्रकार दबा दें। तदनन्तर जार से पानी दें व जीवामृत छिड़ककर ऊपर से सुखी हुई घास का काष्ठाच्छादन बिछा दें।

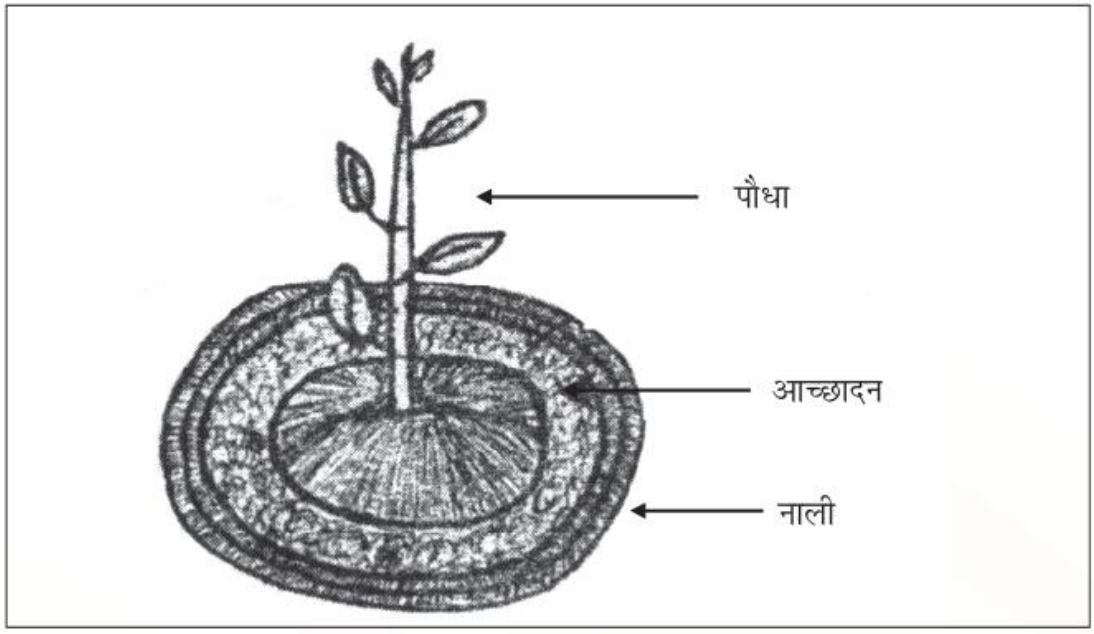

आम सदापर्णी वृक्ष होता है जो बिना सिंचाई के भी जीवित रहता है और फल देता है लेकिन जब आप नर्सरी से कलम लाते हैं तो उसकी मुख्य जड़ और उपजड़े काटी हुई होती हैं जिसके कारण तेज हवा, आँधी, अकाल व पानी के अभाव में वे दीर्घजीवी नहीं हो पातीं अत: नर्सरी से कलम न खरीदकर सीधे गुठली के माध्यम से इन्हें लगायें अथवा उनपर ग्राफ्टिंग (कलम) करें।

ग्राफ्टिंग (कलम) करना– जून में गुठलियाँ लगाने के बाद 20 से 40 दिनों के अन्दर उनका अंकुरण हो जाता है। अंकुरण के एक साल बाद आम के पौधों की जड़ें 150 सेमी. से भी अधिक गहराई में तथा 90 से 120 सेमी. से भी अधिक भूमि की सतह

से समानन्तर भूमि की गहराई में बढ़ती हैं। गुठलियों को लगाने के 12 से 15 माह बाद मुख्य रूप से अगस्त-सितम्बर में मृदु काष्ठ कलम (Soft Wood Grafting) उन पौधों पर करें। इस समय पौधों पर लगभग 15-16 पत्ते लगे हुए होते हैं। ये पत्ते कलम को जोड़ने के लिए आवश्यक खाद्य सामग्री का संचय किये हुऐ होते हैं। हमें पौधों के ऊपर के भाग में मातृकाण्ड (Scion) लगाना है। मातृवृक्ष के रूप में जिस आम के वृक्ष को लेना है उसमें नीचे लिखी विशेषतायें होनी चाहिए।

1. अधिक फल देने वाला
2. मिठासयुक्त
3. फल का स्वाद, रूप, रंग उत्तम
4. रोगमुक्त

इन विशेषताओं से युक्त वृक्ष की सीधी डालियों को चुनें। इसकी लम्बाई 10 से 15 सेमी. हों और उसपर 8-10 निकली हुई सुप्र आँखें हों। जितनी संख्या आम के वृक्षों की लगानी हो उससे दुगुने की संख्या में मातृकाण्ड (Scion) चुननी हैं। जिस दिन कलम करना है उससे 8-10 दिन पहले उस मातृकाण्ड (छोटी मुलायम शाखा) के ऊपर के भाग से लेकर नीचे तक सभी पत्तों को पर्णदण्ड (Petiole) रखकर हटा दें। पत्तों को हटाने के बाद पर्णदण्डों को तोड़ने से पहले सप्ताह में दो बार उनपर जीवामृत का छिड़काव करें। कपड़े से छाना हुआ जीवामृत 10 लीटर में 100 लीटर जल मिलाकर इस छिड़काव को करना है।

कलम लगाना- गुठलियों से निकलते हुए जिन 14-15 महीने आयु के पौधों पर कलम (रुट स्टाक) करना है उनके सबसे ऊपर का 6 से 8 सेमी. तक का भाग काट डालें। तत्पश्चात् तेज धार वाले चाकू से बीचों-बीच 5-6 सेमी. नीचे तक का भाग छेद दें। बाद में मातृकाण्ड को नीचे के भाग तक दोनों ओर अंग्रेजी वर्णमाला

के V (वी) आकार जैसा काट दें और इसे कलम के ऊपरी छेद में चित्र में दर्शाये गये अनुसार घुसेड़कर फँसा दें। मातृकाण्ड और कलम इन दोंनों का आकार समान होना चाहिए। तदनन्तर उसे ऊपर से पॉलीथिन की पट्टी से बाँध दें।

कलम करने के 10–15 दिन बाद मातृकाण्ड पर आँखें अंकुर में रूपान्तरित होकर बढ़ने लगते हैं और उनमें से नये पत्ते निकलने लगते हैं। पौधों के निम्न भाग में निकलने वाले इन पत्तों व अंकुरों को हर पन्द्रह दिन के बाद निकालते जायें। जब कलम एकरूप अर्थात् एकत्व को प्राप्त हो जाये और पत्ते हरे रंग के हो जायें तो पॉलीथिन की पट्टी छोड़कर निकालें। तदनन्तर कलम के ऊपर माह में एक या दो बार जीवामृत दें। अक्टूबर, नवम्बर से मई, जून तक इन नवजात पौधों को नुकसान पहुँचाने वाली कड़ाके की सर्दी और कड़ी धूप से बचाने हेतु अरहर, बाजरा आदि का सम्मिश्रण प्रतिवर्ष लगायें और इनके साथ ही साथ सहजीवी पौधों का आरोपण भी अवश्य करें।

मृदु काष्ठ कलम (Soft Wood Grafting) सर्वोत्तम पद्धति है। इस पद्धति में निश्चित स्थान पर आरोपण होने के कारण मुख्य जड़ गहराई तक चली जाती है। गुठली लगाने के बाद लगातार तीन वर्ष तक हम उसी स्थान पर मातृकाण्ड का कलम कर सकते हैं। यह पद्धति सरल, आसान व अल्पमूल्य साध्य होने के कारण सर्वोत्तम है।

मातृकाण्डों को बाहर से लाना– जब आप आम का बगीचा लगाने हेतु किसी विशेष आम की किस्म को चुनते हैं जो आपके गाँव से दूर किसी अन्य गाँव या प्रदेश में स्थित हो तो उस स्थिति में आपको मातृकाण्ड (Scion) निकालने से पहले उस स्थान में

जाकर चुनी हुई डालियों के पत्ते तोड़ने होंगे। तदनन्तर 8-10 दिन बाद वहाँ जाकर उस वृक्ष से पत्ते निकाले हुए मातृकाण्ड को काट लें। उन काटे हुए मातृकाण्डों के एक तिहाई भाग को दो मिनट तक जीवामृत में डुबोकर रखें। बाद में जूट के गीले बोरे में उनको लपेटकर, रस्सी से बाँध, अपने गाँव ले आयें। आवागमन के दौरान उष्णता अधिक हो तो बोरे पर तीन-चार बाद जल छिड़कें। मातृवृक्ष से मातृकाण्ड तोड़ने के बाद 24 घंटे के अन्दर उन्हें रूट स्टाक पर लगा दें, तब कहीं आपको 70-80% सफलता मिलेगी। 72 घंटे के बाद यह सफलता घटकर 50% पर आ जायेगी।

कलमीकरण के पश्चात् तना के चारों ओर आच्छादन बिछा देने से खरपतवार नहीं निकलेंगे। यदि कोई खरपतवार ऊपर आता है तो उसे उखाड़कर वहीं आच्छादन के रूप में डाल दें। पौधों को वायु के तीव्र झोंकों से सुरक्षा हेतु प्रारम्भ में लकड़ी के आधार की आवश्यकता होती है, अत: पौधों के बाजू में एक लकड़ी भूमि में गाड़कर खड़ी कर दें और पौधों को लकड़ी के साथ रस्सी से हल्का बाँध दें। कलम बाँधने के बाद चार वर्ष तक पौधों में जो भी पुष्पसमूह आयें उन्हें तोड़ते जायें। आरम्भिक अवस्था में पौधों से फल लेना अप्राकृतिक है क्योंकि इससे पौधे कमजोर होते हैं तथा उनकी आयु कम हो जाती है। पाँचवें वर्ष से दसवें वर्ष तक भी हमें सीमित मात्रा में ही पौधों से फल लेने चाहिए। दस वर्ष के बाद हम पूरे फल ले सकते हैं।

फूल बहार- फूल बहार निकलने के लिए पर्णदण्ड सहित फलों को तोड़ना चाहिए। जून माह में जैसे ही वर्षा होती है तो इस पर्णदण्ड के पार्श्व में दो या तीन नई शाखायें फूटकर बाहर निकलती हैं। ये नई शाखायें सितम्बर से लेकर नवम्बर तक परिपक्व

हो जाती हैं और जनवरी–फरवरी में उनकी आँखों में से फूल बहार निकलता है।

आम्रवृक्ष के पादपों में तीन प्रकार के पुष्प निकलते हैं– 1. नर पुष्प 2. मादा पुष्प 3. नपुंसक पुष्प

पुष्प बहार में नर पुष्प सबसे पहले विकसित होते हैं। मादा पुष्प बाद में निकलते हैं इसलिए मादा पुष्पों का पराग संक्रमण (Polination) होने के लिए नर पुष्प उपयोग के लायक नहीं होते। वायु के माध्यम से भी नर पुष्पों के पराग का विकीर्णन नहीं हो पाता, इसलिए पराग संक्रमण में मधुमक्खियों की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। इसी कारण मधुमक्खियों को आकर्षित करने के लिए प्रादेशिक फूल आन्तर फसल के रूप में लगाने आवश्यक हैं। मधुमक्खियों के माध्यम से फलित फल सर्वोत्तम व निरोगी होते हैं तथा फल लगने का प्रतिशत सर्वोच्च होता है।

पुरातन आम्रपादपों का नवीनावस्था में रूपान्तरण– देशी आम के वृक्ष की आयु लगभग 250 वर्ष होती है लेकिन प्राकृतिक व्यवस्था में हमारी अज्ञानता के कारण पचास वर्ष होते–होते ये समाप्ति की ओर जा रहे हैं। आपके बगीचे में खड़े पुराने वृक्ष उतने फल नहीं दे रहे हैं जितने पहले देते थे। यदि आप पुनः उत्पादन बढ़ाना चाहते हैं तो उसके लिए निम्न उपाय करें।

आम के बगीचे में जिन वृक्षों के फल छोटे, खट्टे व तेलग्रन्थियों से भरे हुए होते हैं उन वृक्षों के भूमि से 8–10 फीट ऊपर का भाग आरी से काट दें। काटते समय ध्यान रखें कि तना के नीचे वाले भाग को कोई हानि न हो। काटते समय मूल प्राथमिक शाखाओं को अधिकाधिक सुरक्षित रखने का प्रयास करें। काटने के बाद बचे हुए तने व शाखाओं पर नीमपेस्ट लगा दें।

नीम पेस्ट– 30 लीटर जल + 20 किलो देशी गाय का गोबर + 20 लीटर गोमूत्र + 20 किलो पिसी हुई नीम की पत्तियों का पेस्ट मिला दें और 48 घंटे तक छाया में रखें। दिन में इसे तीन–चार बार डण्डे से चलायें। बस नीम पेस्ट तैयार है। यह नीम पेस्ट सभी प्रकार के फलदार वृक्षों के तनों पर मई माह तथा अक्टूबर माह के अन्त में लगाना चाहिए। इससे वृक्ष विभिन्न प्रकार के रोगों से मुक्त रहते हैं।

फलों को तोड़ने के 20–25 दिन पश्चात् नये अंकुर फूटकर निकलने लगते हैं जो आगे 45 दिनों में मृदुकाष्ठ में परिवर्तित होकर कलम करने के लिए तैयार रहते हैं। शाखाओं के सबसे ऊपर के भाग पर निकलने वाले 8–10 मृदु काष्ठ अंकुर अर्थात् नई छोटी शाखायें रखनी हैं, शेष को हटा देना है। जब ये नये अंकुर 10 से 15 सेमी. लम्बाई के हो जाते हैं तब उन पर चुने हुए आम की किसी भी किस्म का मातृकाण्ड कलम लगा दें। लगाने की विधि पहले बताई जा चुकी है।

कलम बाँधना

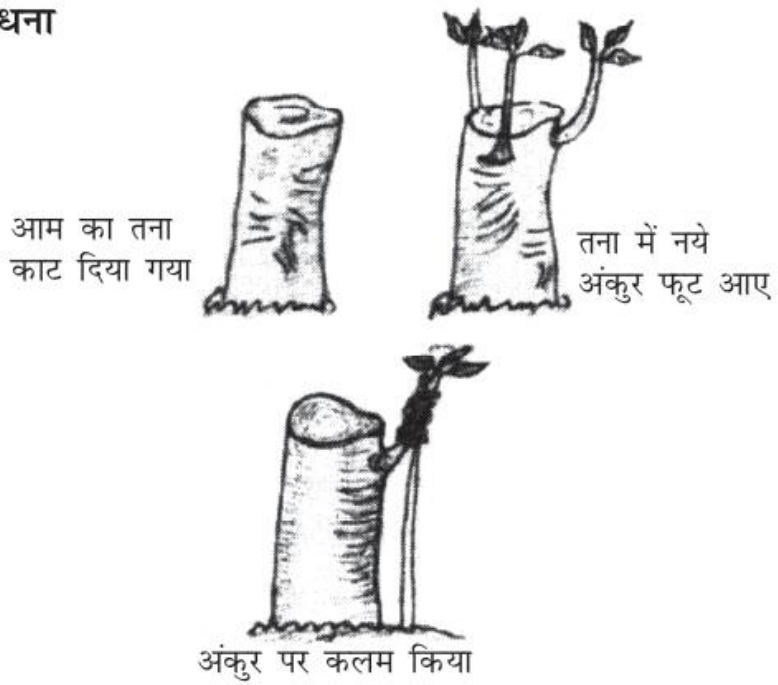

फल सुरक्षा– कम लागत प्राकृतिक खेती में भूमि के बलवान होने से कीट या बीमारियाँ नहीं आती हैं तथापि कभी इनकी आशंका हो तो समय-समय पर नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र, अग्न्यस्त्र, वायवीडंगास्त्र, सोंठास्त्र तथा छाछ का प्रयोग करें।

30. Analytical Report of Gurukul Farm Kurukshetra on Low Budget Natural Farming

Summary:

On the basis of initial investigations and observations at 180 acres of Gurukul Farm Kurukshetra, it appears that Low Budget Natural Farming (LBNF) may be a promising model in Indian Agriculture. The analytical results from different institutions (CCS HAU Hisar, PAU Ludhiana, IIFSR Modipuram and Kurukshetra University Kurukshetra) have reflected that there was incredible enrichment of soils in terms of Organic Carbon (OC), available phosphorus, available potash, micronutrients and biological health. The results indicated that the average OC in the soil samples collected from Gurukul farm in June 2017 and analysed at CCS HAU, Hisar and IIFSR, Modipuram was 0.61 and 0.62%, respectively. The 19 and 30% soil samples in the analysis of IIFSR and CCS HAU were found sufficient/rich in OC (>0.75%). After one year of cropping i.e. in June 2018, soil samples were again collected and analysed at CCS HAU Hisar. It was observed that 95% soil samples were rich in OC with average OC value of 0.91% in the range of 0.82-1.12%. For confirmation of results, soil samples were further drawn in October 2018 after Kharif season and analysed at CCS HAU Hisar and PAU, Ludhiana. These results indicated that the average OC was 0.84 and 0.78% in the soil analysis reports from the respective institutes. The increase in OC by 49% (from 0.61 to 0.91%) in a period of only one year and the maintenance of average OC at the level of more than 0.75% across the season on a farm of 180 acres exhibit the impact of LBNF practices. Seasonal variation and crop management practices may exert influence on OC content of soil.

The pronounced impact of LBNF practices on OC might be attributed to the exuberant multiplication of microbes in the soils of Gurukul Farm which was evident from the microbial studies conducted in the Deptt. Of Microbilogy, Kurukshetra

University Kuruskhetra. These studies revealed that there were 528 times more colony forming units of bacteria per gram soil in the soil samples of Gurukul Farm as compared to that recorded in the soils from farmers' fields.

The increase in the mean values of available P was 89 and 32% detected in the soil samples collected in June 2018 and October 2018, respectively, over that recorded in the soil samples collected in June 2017. Likewise, mean available K increased by 7 and 17% in the samples collected in June 2018 and October 2018, respectively, over those collected in June 2017. The extent of increase in micronutrients was 32, 27, 31 and 114% in Zinc, Iron, Copper and Manganese, respectively, during a period of one year from June 2017 to June 2018.

The crop yields obtained at Gurukul Farm were highly comparable to the level achieved by the farmers. Average yields of non-scented high yielding cultivars of rice (including hybrids) were in the range of 70-80 q/ha during pervious 5 years. Average wheat yields of Bansi, a desi variety, was 31.25 q/ha. Production of sugarcane achieved a level of 1300 q/ha with average cane yield of 860-1000 q/ha during the previous years. In vegetables, average tuber yield of potato ranged between 250-300 q/ha.

The present analytical studies do not quantify the contribution of earthworms which needs to be considered in future investigations. There is considerable multiplication of earthworms in the soils nurtured by organic and natural farming practices. The impact of earthworms in building soil health and improving crop yields is well known and established fact.

Detailed Report

Gurukul Kurukshetra owns 220 acres of land, out of which 180 acres are situated 5 km away from its main premises where Low Budget Natural Farming (LBNF) is practised since 2015. Earlier, some part of this farm was managed by adopting organic farming practices for the last 12 years. After 2015, by the inspiration of Padam Shree Awardee Sh. Subhash Palekar,

Acharya Devvrat, the Hon'ble Governor HP, decided to adopt LBNF on the whole farm of 180 acres. The crops which are primarily grown at the farm are rice, wheat, sugarcane, fodder, potato and other vegetables.

Scientific measures adopted to evaluate the impact of LBNF:

The scientific studies to evaluate the impact of LBNF practices was initiated from the summer/kharif season of 2017. Soil samples of Gurukul Farm were collected in June 2017, June 2018 and October 2018 and got analysed in the Department of Soil Sciences, CCS HAU Hisar. Similar exercise was done in June 2017 by the scientists of Indian Institute of Farming System Research, Modipuram (IIFSR). Soil samples were also drawn in June 2018 for getting the analysis done at PAU, Ludhiana. Underground water samples of 15 tubewells installed at Gurukul farm were taken for analysing the quality of water. The analysis of water samples was done at CCS HAU Hisar. For assessing the nutritional status of different herbal formulations used in LBNF for crop production and crop protection, samples were taken from these formulations and analysed at IIFSR, Modipuram. For microbial studies, soil samples from the Gurukul Farm and farmers' fields were taken and analysed in the deptt. of Microbiology, Kurukshetra University Kurukshetra.

The results on Organic Carbon, macro and micronutrients and microbial status of the soil of Gurukul Farm Kurukshetra and the nutritional status of different herbal formulations used in LBNF for crop production/crop protection are discussed in the present report.

Formulations/Products used as inputs in LBNF at the Farm:

There are two types of formulations prepared in the laboratory of Gurukul Kurukshetra and used as inputs in the crops grown at the farm.

(i) Those formulations which fulfil the nutritional requirement of the crops and promote growth and development of the crops.

(ii) Those formulations which control or help in the repulsion of pests and diseases in the crop.

Mainly there are two formulations viz. Jivamrit and Ghanjeevamrit which help in the fulfilment of nutritional requirement of the crops and enhance manifold multiplication of microbial population, earthworms and natural beneficial bio-agents like frogs etc. The formulations which are used for insect control are mainly Neemastra, Brahmastra and Agnistra. It has been observed that crops like rice and wheat and for the control of mild insects as hoppers, aphids, white fly, Jassid etc., Neemastra alone gives excellent results and there is no need of applying insecticides. For the insects like borers and catter pillar, Brahmastra and under extreme conditions, Agnistra plays vital role in insect control. In LBNF, it has been observed that there is natural control of most of the pests and diseases. Spray of Jeevamrit, Khatti Lassi and Desi-Cow urine remain effective for the control of diseases. These are sprayed as precautionary measures on the crops. For root and seedling diseases, seed treatment with Beejamrit is done as remedial measure.

For the fulfilment of nutritional requirement of crops, besides Jeevamrit and Ghanjeevamrit, other formulations which are used for insect-pest control like Neemastra, Brahmastra, Agriastra, Khatti Lassi and Cow Urine also have nutritional and growth promoting values as evidenced in the table 1 and 2. A perusal of data revealed that these formulations amply seem to support the growth and development of the crops.

Table 1 : Nutrient Composition in different formulations prepared at Gurukul Kurukshetra

Formulation	Macronutrients			Micronutrients		
	N	P	K	Zn	Fe	Cu
Vermicompost	0.49	0.42	1.94	296.0	8154	47.0
GhanJivamrit*	0.99	0.49	4.51	229.0	6002	45.6

* Ghanjeevamrit is prepared in 3-5 days, whereas Vermicompost takes 2.5 to 3 months in this process.

Source: *Report, IIFSR Modipuram (2018)*

Table 2 : Nutrient Composition in different formulations prepared at Gurukul Kurukshetra

Formulations	N (%)	P (ppm)	K (ppm)	Zn (ppm)
Jeevamrit	0.896	2.976	884	138
Neemastra	0.672	2.193	1584	3.88
Agnistra	1.176	0.379	709	1.09
Dashparni Ark	2.184	0.339	602	1.83
Khatti Lassi	2.80	25.835	430	2.24
Cow Urine	1.50	6.788	9000	-
Buffalo Urine	0.90	7.963	5130	-
Saptdhanya Ankur	1.42	3.916	852	-

Source: Report, IIFSR Modipuram (2018)

Underground water quality of tubewells at Gurukul farm:

The quality of water of the tubewells at Gurukul farm was analysed in the Soil and water Testing Lab of deptt. of Soil Science, CCS HAU Hisar. Generally underground quality of water of all the tubewells installed at Gurukul farm was found good (Table 3). Only one tubewell (No.3) was having RSC 1.5 meq/litre which require 50 kg gypsum per irrigation to neutralize the insoluble salts. The EC of all the tubewells was below critical level. Hence, it can be said that the underground water quality of the farm is not harmful for the growth and development of the crops.

Table 3: Water Quality of Tubewells installed at Gurukul Farm Kurukshetra

Tube well No.	EC x 10^6	Contents (meq/litre)						Gypsum required (Kg/irri.)
		CO_3^-	HCO_3^-	Cl^-	Ca^{++}	Ca^{+++} Mg^{++}	RSC	
1.	980	Nil	6.0	4.5	-	8.0	-	-
2.	600	Nil	5.2	3.0	-	6.5	-	-
3.	1300	Nil	8.5	6.0	-	7.0	1.5	50
4.	630	Nil	4.0	3.0	-	7.0	-	-
5.	860	Nil	4.0	3.8	-	8.5	-	-

6.	690	1.2	2.8	6.0	-	4.5	-	-
7.	520	0.5	4.0	3.0	-	5.5	-	-
8.	770	Nil	5.5	4.0	-	6.0	-	-
9.	350	Nil	5.5	3.5	-	6.0	-	-
10.	640	Nil	5.0	4.0	-	6.5	-	-
11.	590	Nil	7.5	3.0	-	6.5	-	-
12.	1060	Nil	6.0	4.0	-	9.0	-	-
13.	750	Nil	6.5	3.5	-	6.5	-	-
14.	840	Nil	5.0	4.0	-	6.5	-	-
15.	760	0.5	6.0	3.0	-	6.5	-	-

Impact of LBNF practices on Soil Chemical properties:

Random soil samples were taken from 180 acres Farm of Gurukul Kurukshetra starting from June 2017 to October 2018. These samples were got analysed from CCS HAU Hisar, PAU Ludhiana and Indian Institute of Farming Systems Research (IIFSR), Modipuram at different times for chemical composition.

Organic Carbon Content: In summer/Kharif season of 2017, 10 soil samples were drawn at random from Gurukul farm and got analysed at CCS HAU Hisar. Likewise 16 soil samples were taken by the scientists of IIFSR, Modipuram for analysis of organic carbon, macro and micronutrients. These analytical results presented in Table 4 and 5 revealed that 30% soil samples analysed at CCS HAU Hisar and 19% of those analysed at IIFSR were in rich category(>0.75%) with respect to organic carbon. Similarly 10 and 12% soil samples represented poor status of organic carbon (<0.40%) in the results registered by the respective institutions. Rest of the samples were categorised in the medium range of OC content. The average OC from both of the institutions was 0.61%.

After one year in June 2018, nineteen samples were again drawn randomly from 180 acres of Gurukul Farmland and got analysed in the soil testing laboratory of CCS HAU, Hisar. The results were incredible which depicted that 95% soil samples

represented in rich category with average OC of 0.91% in the range of 0.82 to 1.12% (Table 4). Sixteen percent soil samples had OC more than 1.0%. Only one sample was in medium category with OC of 0.45%.

Again in October 2018, the soil samples were drawn at random from the farm and got analysed in soil testing labs of CCS HAU, Hisar and PAU, Ludhiana. These results again confirmed the OC status of Gurukul Farmland, although at somewhat lesser scale might be due to seasonal variations (Table 4 and 6). The average OC was 0.84 and 0.78% in the samples tested at CCS HAU Hisar and PAU, Ludhiana, respectively. The figures of the samples representing rich category (>0.75%) were 90% (CCS HAU) and 70% (PAU Ludhiana). Only one sample out of 20 samples tested at CCS HAU and PAU fall under poor category (<0.40%) whereas 30% samples analysed by both institutions had OC more than 0.90%.

Table 4: Organic Carbon and macronutrient status of Gurukul Farm (Samples analysed at CCS HAU Hisar, Haryana)

Sr. No.	Organic Carbon (%)			Phosphorus (Kg/ha)			Potash (Kg/ha)		
	June 2017	June 2018	Oct. 2018	June 2017	June 2018	Oct. 2018	June 2017	June 2018	Oct. 2018
1.	0.82	1.12	0.82	25	40	40	-	431	238
2.	0.82	1.05	0.52	17	40	17	181	170	133
3.	0.75	1.05	0.82	20	32	20	275	152	143
4.	0.67	0.97	0.82	40	32	27	275	200	181
5.	0.60	0.97	0.75	29	34	17	190	133	133
6.	0.60	0.97	1.12	13	32	22	133	133	569
7.	0.52	0.97	0.82	10	40	29	112	133	162
8.	0.52	0.97	0.82	8	34	25	133	190	250
9.	0.45	0.97	0.97	8	37	25	133	200	238
10.	0.37	0.97	0.97	17	42	29	238	162	124
11.	-	0.90	-	-	42	-	-	300	-

12.	-	0.90	-	-	34	-	-	250	-
13.	-	0.90	-	-	29	-	-	170	-
14.	-	0.90	-	-	40	-	-	190	-
15.	-	0.82	-	-	42	-	-	325	-
16.	-	0.82	-	-	37	-	-	143	-
17.	-	0.82	-	-	34	-	-	152	-
18.	-	0.82	-	-	34	-	-	152	-
19.	-	0.45	-	-	27	-	-	190	-
Ave-rage	0.61	0.91	0.84	19	36	25	186	199	217

Status of Macronutrients: The samples collected at 3 times in June 2017, 2018 and October 2018 were analysed in Soil Testing Lab in CCS HAU Hisar. The data on mean available phosphorus reveal that there was increase of 89% in available P in the samples collected in June 2018 over that recorded in 2017 (19 kg/ha), but this increase was 32% in the samples collected in October 2018 (Table 4). This increase might be attributed to the possible increase in Phosphorus solubilizing microbes (PSM / PSB) due to addition of natural formulations of Jeevamrit and Ghanjeevamrit. The decrease in available P from 89% in June 2018 to 32% in the samples drawn in October 2018 could be due to the impact of seasonal variation which needs further studies for proper evaluation. The available P detected (Table 6) in the analysis done in the Soil Testing Lab of PAU, Ludhiana was almost similar (27.7 kg/ha) to that recorded in CCS HAU, Hisar (25.0 kg/ha) in October 2018.

Variation in available Potash was not pronounced (Table 4) in the soil samples collected in June 2017 (186 kg/ha) and June 2018 (199 kg/ha). But there was considerable increase of 17% in mean available potash (217 kg/ha) in the soil samples collected in October 2018 over that found in June 2017. The respective increase was 9% in soil samples of October 2018 over that of June 2018.

Table 5: Status of Organic Carbon and micronutrients at Gurukul Farm (Samples collected in June 2017 and analysed at IIFSR Modipuram)

Sr. No.	Organic Carbon (%)	Micronutrients (ppm)			
		Zn	Fe	Cu	Mn
1.	1.08	2.47	44.29	2.44	17.94
2.	0.93	1.14	12.36	1.56	6.06
3.	0.915	2.12	37.07	3.37	11.84
4.	0.72	1.28	40.42	3.27	12.01
5.	0.705	1.88	48.09	2.83	10.11
6.	0.645	1.12	16.76	1.13	2.29
7.	0.57	0.99	4.50	0.99	2.84
8.	0.555	1.00	9.89	1.28	2.49
9.	0.525	1.05	13.44	1.02	2.25
10.	0.525	1.61	25.76	1.94	8.26
11.	0.525	0.99	16.04	1.78	4.83
12.	0.495	0.98	15.21	1.48	6.24
13.	0.495	2.67	30.42	2.67	8.85
14.	0.48	1.03	21.12	1.05	2.37
15.	0.375	1.26	9.90	1.40	4.34
16.	0.33	1.15	2.90	1.18	3.38
Ave-rage	0.617	1.42	21.76	1.84	6.63

Table 6: Chemical status of soil of Gurukul Farm(Samples collected in October 2018 and analysed at PAU Ludhiana)

Sr. No.	Organic Carbon (%)	Phos-phorus (Kg/ha)	Potash (Kg/ha)	Micronutrients (ppm)			
				Zn	Fe	Cu	Mn
1.	1.17	43.3	231	1.38	44.78	3.08	9.0
2.	0.36	17.5	93	1.08	48.34	2.18	10.06
3.	0.66	24.8	114	1.76	46.74	2.10	7.78
4.	0.75	14.6	126	1.18	35.52	1.88	6.58
5.	0.60	21.6	111	1.80	29.80	1.50	4.92

6.	1.05	44.7	363	2.88	50.24	2.80	8.96
7.	0.75	19.5	129	2.74	52.68	2.88	7.14
8.	0.90	35.4	195	3.14	54.52	3.02	8.88
9.	0.81	28.2	180	2.70	53.30	4.04	7.74
10.	0.81	27.1	123	3.30	49.86	3.26	6.80
Ave-rage	0.78	27.7	166	2.20	46.58	2.67	7.79

A reverse trend was observed in the variation of mean available P and K in the samples collected in June 2018 and October 2018 (Table 4). Mean available K was found to be increased by 8% from June 2018 to October 2018, but mean available P decreased by 31% in the same scale of time. This variation and the reason of reverse trend of variation in the behaviour of available P and K needs to be confirmed in the future studies. This reverse trend in the availability of P and K from June 2018 to October 2018 indicates a possibility of decrease in the mobility and activity of P-solubilizing bacteria and increase in the activity of K-solubilizing bacteria during the kharif season which needs to be verified with respect to the different aerobic and non-aerobic crop environment. The similar studies need to be undertaken during the cropping situations in Rabi season.

Studies on Micronutrients: There was no deficiency of micronutrients (Zu, Fe, Cu and Mn) in any of the samples analysed at IIFSR, CCS HAU Hisar and PAU, Ludhiana at different times. The soil samples collected from Gurukul Farm and analysed in Soil Testing Lab of CCS HAU Hisar reflected that on an average there was 32, 27, 31 and 114% increase in Zinc, Iron, Copper and Manganese content in the samples collected in June 2018 as compared to those collected in June 2017 (Table 7). Although, in the present studies, there was positive effect of LBNF practices on the availability of micronutrients, but long-term experimentation is required to evaluate their sustainable impact on the availability of trace elements in the soil and their influence on crop yields.

Table 7: Status of micronutrients at Gurukul Farm Kurukshetra under Low Budget Natural Farming (Samples analysed at CCS HAU Hisar)

Sr. No.	Micronutrients (ppm)							
	Zn		Fe		Cu		Mn	
	June 2017	June 2018	June 2017	June 2018	June 2017	June 2018	June 2017	June 2018
1.	3.20	2.10	21.45	25.32	1.50	2.64	10.42	12.38
2.	2.20	2.41	20.83	25.67	1.90	2.34	3.94	12.11
3.	1.94	1.56	20.92	25.21	2.08	2.48	4.14	11.46
4.	1.68	1.79	22.08	18.34	2.50	2.25	4.62	12.31
5.	2.13	2.17	20.83	24.89	2.30	2.23	7.66	11.58
6.	1.34	2.35	21.25	24.77	1.70	2.49	4.44	11.83
7.	1.12	1.90	19.36	25.21	1.60	2.49	3.98	12.01
8.	1.10	1.88	19.32	24.50	2.02	2.41	7.36	11.50
9.	0.90	2.45	15.58	25.05	1.26	1.26	5.08	11.75
10.	0.74	2.75	10.42	25.05	0.94	2.74	5.36	11.98
11.	-	2.68	-	26.11	-	2.68	-	12.94
12.	-	2.44	-	24.24	-	2.31	-	12.68
13.	-	2.23	-	24.96	-	2.16	-	11.83
14.	-	1.90	-	25.81	-	2.34	-	11.92
15.	-	2.62	-	25.30	-	2.94	-	13.24
16.	-	1.47	-	24.86	-	1.78	-	12.81
17.	-	2.38	-	24.99	-	2.35	-	11.83
18.	-	2.30	-	25.48	-	2.67	-	12.13
19.	-	1.64	-	19.27	-	2.00	-	13.15
Ave-rage	1.64	2.16	19.21	24.48	1.78	2.34	5.70	12.18

Impact on Microbial Population: Eleven Soil samples, 7 from the fields of Gurukul Farm and 4 from farmers' fields, were drawn from upper 0-10 cm layer to assess the microbial load in the soil. The samples were collected from different cropping systems and analysed in the deptt. of Microbiology of Kurukshetra University, Kurukshetra. The results revealed

that the soils of Gurukul Farm where LBNF practices were adopted, were exuberantly loaded with bacterial population in comparison to that recorded in the samples collected from farmers' fields. On an average, irrespective of cropping systems, the total bacterial count in the soils of Gurukul Farm was 528 times more than that recorded in the soil from farmers' fields (Table 8). The respective colony forming units (cfu) per gram soil in Gurukul fields were 1610 millions as compared to 3.05 million in the soil from farmers' fields. These results indicate the efficiency of LBNF practices in manifold multiplication of microbes in the soil which might have contributed in enriching the nutritional status of the soil as reflected in the data on organic carbon and macro and micronutrients described earlier. Besides the role of microbes in improving physico-chemical properties of soil under LBNF, the contribution through incredible enhancement in the activity of earthworms needs to be quantified for proper budgeting of soil nutrition and evaluating soil health. Hence, the future investigations with respect to LBNF need to be directed towards generating information on the contribution of earthworms, besides microbes, in enriching the soil health and improving crop yields.

Table 8: Microbial Count of the soil samples collected from Gurukul Farm Kurukshetra and adjoining farmers fields

Sr. No.	Name of Sample	No. of colonies (cfu g-1 soil)
A. Samples from Gurukul Farm		
1.	Basmati Rice	17×10^7
2.	Hybrid Rice	37×10^7
3.	Berseem-Rice	17×10^7
4.	Moong-sugarcane 1st year	76×10^7
5.	Sugarcane 2nd year	66×10^8
6.	Sugarcane 4th year	21×10^8
7.	Gurukul Sorghum (Fodder)	11×10^8
B. Samples from Farmers fields		
8.	Sorghum (fodder)- Jaswinder Kainthla Khurd	12×10^5

9.	Rice- Jagir Singh Kainthla	10×10^5
10.	Rice- Karam Chand Kainthla	88×10^5
11.	Rice- Farmer Kainthala	12×10^5

Average Bactrial Count at Farmers' fields - 3.05 million per gram soil
Average Bactrial Count at Gurukul Farm – 1610 million per gram soil

Effect of LBNF practices on crop yields: Level of crop yields seems to be excellent at Gurukul Farm. Rice, Wheat, Sugarcane, Potato and fodder are the predominant crops grown at the farm under LBNF. Besides using natural formulations prepared from the dung and urine of Desi-cow, green manuring, in-situ incorporation of crop residues, mulching, crop rotation are some other practices which are followed for taking desirable results.

In rice, scented as well as non-scented varieties are grown. In scented group, CSR 30, HBC19 and PB1121 and in non-scented group, hybrids and inbred varieties like HKR47, PR126 and PR114 are the main cultivars grown at the farm. In wheat, Bansi, WH1105, WH1124 are some of the cultivated varieties. Bansi, a desi variety of wheat is the predominant variety at the farm which attracts lucrative prices. In Sugarcane, COJ85, CO118, CO238 and COH160 represent major varietal composition.

Rice, wheat and sugarcane are the most exhaustive crops and require high doses of fertilizers. The average yield level of non-scented rice varieties generally ranges between 70-80 q/ha (Table 9). The rice variety PR114 which is non-scented high yielding variety gave an average yield 65 q/ha when grown in 15 acres for the first time on newly acquired area under LBNF in Kharif 2017. This area where PR114 was grown for the first time was having organic carbon in the range of 0.31 to 0.45%, poor to medium in available P and medium in available K content. After completing one year of cropping sequence, there was tremendous increase in the level of organic carbon, available P and micronutrients as mentioned earlier in the document. Hence, the speculation and fear of farmers and scientists about the reduction in yield during the first 3-4 years

under LBNF as expressed in organic farming does not seem to hold true.

There is basic difference in organic farming and LBNF. In organic farming, there is need of bulky organic manures like FYM, Vermicompost and other organic materials for the fulfilment of nutritional requirement of the crops. It is slow process of building soil health and hence, crop yields are likely to decrease during the initial few years. In LBNF, not the manures in the form of FYM or vermicompost, but microbial inoculum in the form of Jeevamrit and Ghanjeevamrit are applied in the field which promote the multiplication of earthworms and microbes in the soil. However, green manuring, residue incorporation, mulching, minimum tillage, crop rotation etc. are other complementary practices which form a composite package in LBNF.

Jeevamrit is the backbone of LBNF. LBNF is desi-cow based farming. For the preparation of Jeevamrit, only one day dung and urine of desi-cow are required besides other minor constituents as Gur (jaggery) and pulse flour. It takes 4 days for final preparation and applied 4-6 times in a crop through irrigation water. One day (24 hour) desi-cow dung and urine is sufficient for single dose of one acre at a time. Second important input is Ghanjeevamrit which can be prepared in 3-5 days from decomposed manure of desi-cow or in 10-12 days from fresh desi-cow dung. For plant protection, herbal formulations like Neemastra, Brahmastra and Agristra can easily be prepared with the help of desi-cow dung and urine. Beejamrit, Khatti Lassi, cow-urine, Dashparni Ark, Saptdhanya Ankur are the other natural formulations used in LBNF.

The yield of Bansi variety of wheat is obtained with an average of 25-35 q/ha. The grain of this variety fetches more than Rs.4000 per quintal with a consistent demand from the consumers.

The sugarcane yield has crossed 1300 q/ha with an average productivity of 850-1100 q/ha. The mean productivity of potato excels in the range of 200-300 q/ha (Table 10). The better part of crop production in SBNF is that there is very less

incidence of pests and diseases in all the crops. In cereals like rice crop, it is the Neemastra which controls insects efficiently and Khatti Lassi remains effective in controlling diseases. In the crops lime sugarcane, besides Neemastra, Brahmastra may be used for the control of insects, whereas in vegetables like brinjal, Okra and tomato, Agnistra may be required for the control of seriously damaging insects like borers. In fruits like guava, spray of Neemastra remains effective in controlling fruit borer if needed. Spray of 10% Jeevamrit is also used for the control of pests and diseases in the crops.

Table 9: Average paddy yields of last five years at Gurukul Farm

Year	Non-scented Varieties (Average yield q/ha)	Scented Varieties (Average yield q/ha)
2014	76.0 (18 ha)	40.0 (10 ha)
2015	72.0 (16 ha)	41.0 (6.5 ha)
2016	80.0 (16 ha)	25.0 (10 ha)
2017	65.0 - 80.0 (34 ha)	32.5 - 40.0 (22 ha)
2018	70.0 - 80.0 (36 ha)	30.0 - 38.0 (25 ha)

Table 10: Average yield of last five years of Potato at Gurukul Farm

Years	Production (q)	Total area (ha)	Average Yield (q/ha)
2013-14	810	4.0	202
2014-15	1000	4.0	250
2015-16	1199	4.0	300
2016-17	510	3.6	142
2017-18	1250	4.0	312

Economics of Crops grown at Gurukul Farm:

Economics of rice and wheat crops grown at Gurukul farm and Farmers' fields is given in Table 11. Total cost of cultivation of the crops grown at farmers' fields is taken from the package of practices of Kharif and Rabi crops (2017) published form CCS Haryana Agricultural University Hisar. In LBNF, no money is spent for the purchase of pesticides and

chemical fertilizers. Due to the change in physico-chemical and biological properties of soil, there is considerable saving in the expenditure incurred on field preparation and some other requirements like irrigation. After considering all the aspects including weed control in rice and wheat crops grown at Gurukul Farm during 2017-18, it has been observed that the net return was 1.47 to 2.03 times more in comparison to the farmers. In non-scented high yielding rice varieties, this increase was the minimum i.e. 1.47 times as the produce was sold at minimum support price. The benefit cost ratio was 2.54 and 4.31 for non-scented rice varieties, 2.13 and 4.05 for scented rice variety (CSR 30), and 2.44 and 4.76 for wheat crop (variety Bansi at Gurukul farm and HD 2967 at Farmers field) for crop grown by farmers and Gurukul farm, respectively. The produce of variety CSR 30 (rice) and Bansi (Wheat) was sold at premium price due to the increased demand of consumers for natural products grown at Gurukul farm.

Table 11 :- Economics of rice and wheat crops at Gurukul Farm during 2017-18

Crop/Variety	Yield (q/ha)	Cost of cultivation (Rs./ha)	Total Return (Rs./ha)	Net Return (Rs./ha)	Benefit-Cost ratio
Non Scented Rice Varieties					
Gurukul Farm	72.50	29412	126875	97463	4.31
Farmers field	65.25	42802	108937	66135	2.54
Scented Rice Variety (CSR30)					
Gurukul Farm	32.00	34780	140800	106020	4.05
Farmers field	30.75	47680	101475	53795	2.13
Wheat Varieties					
Gurukul Farm (Var. Bansi)	31.25	26255	125000	98745	4.76
Farmers Field (Var. HD2967)	47.50	33835	82412	48577	2.44

Compiled by:

Dr. Hari Om
Senior Coordinator
CCS Haryana Agricultural University
Krishi Vigyan Kendra , Kurukshetra

Dr. Baljeet Singh
Associate Professor
Department of Microbiology
Kurukshetra University, Kurukshetra

गुरुकुल कुरुक्षेत्र की श्री गोपाल कृष्ण गोशाला की देशी नस्ल की गायें

गुरुकुल कुरुक्षेत्र के 180 एकड़ में फैले कम लागत प्राकृतिक कृषि फार्म का विहंगम दृश्य

गुरुकुल कुरुक्षेत्र के 180 एकड़ में फैले कम लागत प्राकृतिक कृषि फार्म का विहंगम दृश्य

कम लागत प्राकृतिक कृषि से उत्पन्न गुरुकुल कुरुक्षेत्र की भूमि पर खड़ी सरसों की फसल

कम लागत खेती से उत्पन्न गुरुकुल के खेत में खड़ी धान की फसल

कम लागत खेती पर आधारित गुरुकुल के खेत में लहलहाती गेहूं की फसल

कम लागत खेती से गुरुकुल के खेत से उत्पादित गन्ना व गन्ने की फसल

मेथी, फूलगोभी और धनिया – कम लागत खेती के अधीन गुरुकुल की भूमि पर बोयी गयी सहजीवी फसलें

गुरुकुल की भूमि पर कम लागत खेती के अधीन लहलहाती आलू की फसल

देशी केंचुआ – कम लागत खेती में परम सहायक

केंचुए के द्वारा भूमि में किये गये छिद्र, जिनके सहारे वर्षा का पानी आसानी से धरती के अन्दर चला जाता है

महामहिम आचार्य देवव्रत, राज्यपाल हिमाचल प्रदेश गुरुकुल, कुरुक्षेत्र के कृषिफार्म को हिमाचल प्रदेश के विभिन्न अधिकारियों को दिखाते हुए

आचार्य देवव्रत जी, राज्यपाल हिमाचल प्रदेश के साथ गुरुकुल, कुरुक्षेत्र के कम लागत प्राकृतिक कृषि फार्म फसलों का अवलोकन करते हुए केन्द्रीय मंत्री गिरिराज सिंह जी

महामहिम आचार्य देवव्रत, राज्यपाल हिमाचल प्रदेश चौधरी सरवण कुमार कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर में कृषि विशेषज्ञों को संबोधित करते हुए

महामहिम आचार्य देवव्रत, राज्यपाल हिमाचल प्रदेश, डॉ. त्रिलोचन महापात्रा, महानिदेशक भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् एवं अन्य गुरुकुल के कृषि फार्म का अवलोकन करते हुए

महामहिम आचार्य देवव्रत, राज्यपाल हिमाचल प्रदेश गुरुकुल सभागार में कम लागत प्राकृतिक कृषि विषय पर प्रेस कांफ्रेंस करते हुए

आचार्य देवव्रत, राज्यपाल, हिमाचल प्रदेश